किताब उस-सलात

नमाज़ की किताब

तैयार करदा

हुसैन हिल्मी इशिक

पहली इशाअत

हकीकत किताबेवी प्रकाशन न० : 22

किताब उस-सलात

नमाज़ की किताब

तैयार करदा

हुसैन हिल्मी इशिक

पहली इशाअत

हकीकत किताबेवी

दारूश्शफ़ेका जद. पी.के : 35 34083 फातिह-इस्तानबुल/तुर्की
फोन: 90.212.523 4556 - 532 5843 फैक्स: 90.212.523 3693
http://www.hakikatkitabevi.com
e-mail: info@hakikatkitabevi.com
अप्रैल – 2015

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

इंसानी मख़्लूक के लिए ज़िंदगी की तीन शकलें हैं: दुनिया में ज़िन्दगी, कब्र में ज़िन्दगी और आखिरत में ज़िन्दगी। इस दुनिया में जिस्म रूह के साथ है। रूह इन्सानों को ताकत और रूहानियत देती है। जब रूह जिस्म को छोड़ जाती है तो इन्सान मर जाते हैं। रूह फ़ना नहीं होती जबकि जिस्म कब्र में मिट जाता है और मिटटी बन जाता है या जल जाता है या एक खूँखार जानवर के ज़रिए जाने की वजह से हलाक कर दिया जाता है। फिर कब्र में ज़िन्दगी शुरू होती है। कब्र की ज़िन्दगी में एहसास होता है लेकिन हरकत नहीं होती। इन्साफ़ वाले दिन, एक जिस्म तख़लीक किया जाएगा, और फिर जिस्म और रूह हमेशा के लिए जन्नत या दोज़ख में एक साथ रहेंगे।

इस दुनिया और आखिरत में खुशियाँ हासिल करने के लिए लोगों के लिए ये ज़रूरी है कि वे मुसलमान हों। इस दुनिया में खुशियाँ हासिल करने का मतलब है के बग़ैर मुश्किल के जीना। आखिरत में खुशियाँ हासिल करने का मतलब है जन्नत में दाखिल होना। चूँकि, अल्लाह तआला अपने बन्दों पर बहुत ज़्यादा रहम करता है, इसलिए उसने अपने नबियों के ज़रिए अपने बन्दों को खुशियों के तरीकों से आगाह किया। इस वास्ते के लोग अपने दिमाग़ के असबाब के ज़रिए नेअमत के वो रास्ते तलाश नहीं कर सकते। कोई भी नबी अपनी सोच को इस्तेमाल करते हुए कुछ नहीं कह सकते। उन सबने सिर्फ उससे आगाह किया जो अल्लाह तआला ने उन तक पहुँचाया। नबियों के ज़रिए जो नेअमत का रास्ता बताया गया उसे **मज़हब** कहते हैं। जो मज़हब मुहम्मद अलैहिस्सलाम के ज़रिए बताया गया उसे **इस्लाम** कहते हैं। आदम अलैहिस्सलाम के बाद हज़ारों नबी आए। मुहम्मद अलैहिस्सलाम आखिरी नबी हैं। जो मज़हब दूसरे नबियों/पैग़म्बरों के ज़रिए मतलाह किए गए, वो वक्त के गुज़रने के साथ बिगड़ गए। अब, नेअमत हासिल करने के लिए इस्लाम सीखने के अलावा कोई

चारा नहीं है। इस्लाम **ईमान** के इल्म (अक़ीदे) की पहचान पर मुश्तमिल होता है जिसे दिल से और **एहकाम-ए-इस्लामिया** के इल्म (इस्लाम के एहकाम और मुमानियत) पर यकीन किया जा सकता है जिस्मानी तौर पर अदाएगी करके। ईमान का इल्म और एहकाम-ए-इस्लामिया सिर्फ़ **अहल-ए-सुन्नत के आलिमों** की किताबों के ज़रिए सीखा जा सकता है। ये फ़रेबी लाइल्म और गुमराह लोगों की किताबों से नहीं सीखा जा सकता। हिजरी साल (हिजूरा कैलैण्डर) के **1000** साल पहले इस्लामी मुल्कों में बहुत सारे अहले-सुन्नत के आलिम थे। अब, कोई नहीं बचा है। उन आलिमों के ज़रिए अरबी और फारसी में लिखी गई किताबें और उनके तर्जुमें बहुत सारे हैं जो दुनिया भर की लाईबरैरियों में हैं। हक़ीकत किताबेवी (हकीकत बुकस्टोर) के ज़रिए शाय की गई सारी किताबें इन्हीं ज़राओं से ली गई हैं। नेअमत हासिल करने के लिए **हकीकत किताबेवी** की किताबों को पढ़िए!

खबरदारः ईसाई मिशनरी तशहीर करने की कोशिश कर रहें, यहूदी बड़े पैमाने पर telmud के लिए काम कर रहे हैं, हक़ीकत किताबेवी (बुकस्टोर), इस्तांबुल में, इस्लाम की इशाअत की कोशिश कर रही है, और देहरिए मज़हबों को पामाल करने की कोशिश कर रहे हैं। एक शख़्स समझ, इल्म और हिस के साथ इस बात को समझेगा और ये मानेगा के इनमें से सही कौनसा है और इस निजात को इंसानियत में फैलाने में मदद करेगा। इससे अच्छा और कोई रास्ता नहीं है ना ही कोई और कीमती चीज़ के इंसानियत की इस तरीके से सेवा की जाए। यहाँ तक कि ईसाई और यहूदी आलिम भी ये कहते हैं कि मज़हबी किताबें जिन्हें तोरैत और बाइबल कहते हैं आज लोगों के ज़रिए लिखी गई हैं।

कुरआन अल करीम पाक है क्योंकि इसे अल्लाह तआला के ज़रिए भेजा गया है। सारे ईसाई पादरियों और यहूदी मज़हबी आदमियों को हकीकत कितावेवी के ज़रिए इशाअत की गई किताबों को ध्यान से और इंसाफ़ के साथ पढ़ना चाहिए। उन्हें इनको समझने की कोशिश करनी चाहिए।

तुर्की में टाईपसेट और तबाअत करदाः

एहलास गज़ेटेसिक ए.एस.

मर्कज़ माह. **29** एकिम काड. एहलास प्लाज़ा न०ः **11** A/**41**

34197 येनिबोसना - इस्तांबुल फौनः **90.212.454 3000**

ये हमेशगी के ख़ज़ाने की चाबी है

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

दिबाचा

मैं अऊज़ु और बिस्मिल्लाह कहते हुए इस नमाज़ की किताब को लिखना शुरू कर रहा हूँ। अल्लाह तआला की हमद (तारीफ़) हो। उसके चुने हुए प्यारे बंदों और उसके आला, हज़रत मुहम्मद अलैहिस्सलाम पर रहमत और अमान हो। सारी नेक दुआएँ उसकी अहल अल-बैत पर और उनके हर एक ईमानदार और जान निसार साथियों (अस-सहावत अल-कराम) "रिज़वानअल्लाही तआला अलैहिम अजमाईन" पर हों!

दुनिया में, अच्छी और फ़ाएदेमंद चीज़ें बुरी और नुकसानदायक चीज़ों के साथ मिल गई हैं। नेअमत, आराम और सुख हासिल करने के लिए, ये ज़रूरी है के हर वक्त अच्छे और फ़ाएदेमंद काम किए जाएँ। चुँकि अल्लाह तआला सबसे ज़्यादा रहम वाला है, उसने एक ताकत तख़लीक की है जो अच्छी चीज़ों को बुरी चीज़ों से अलग बताती हैं। इस ताकत को **अक्ल** (समझ) कहते हैं। एक पाक और माकूल समझ अपने काम कामयाबी के साथ अदा करती है। ये किसी भी वक्त धोके में नहीं गिरती। नफ़स की तकलीद (एक मखलूक जो आदमी के अपने अंदर होती है जो हमेशा बुराई को उकसाई है और नुकसान वाली चीज़ें करवाती है) करके, गुनाह करना समझ और दिल को बीमार करता है। ये बुराई में से अच्छाई की पहचान नहीं कर पाएगी। अल्लाह तआला ने हम पर रहम फरमाया। अपने नबियों/पैग़म्बरों के ज़रिए, उसने अच्छे कामों की आगाही दी और हमें उन्हें करने का हुक्म दिया। उसने बुरी चीज़ों से आगाही दी और उन्हें करने की मुमानियत करी। ये एहकाम और मुमानियत **दीन**

(मज़हब) कहलाता है। जो मज़हब मुहम्मद अलैहिस्सलाम के ज़रिए बताया गया उसे **इस्लाम** कहते हैं। आज, दुनिया में सिर्फ़ एक मज़हब है जिसे बिगाड़ा नहीं गया। वो एक मज़हब इस्लाम है। आराम हासिल करने के लिए, ये ज़रूरी है के इस्लाम की तक़लीद की जाए, वो ये के मुसलमान होना। एक मुसलमान होने के लिए, कोई ज़ाहिरदारी होना ज़रूरी नहीं, जैसे के किसी मुफ़ती या इमाम के पास जाना। सब लोगों के लिए सबसे पहले ज़रूरी चीज़ है के दिल से ईमान (अकीदा, यकीन) रखना। उसके बाद, ये ज़रूरी है के इस्लाम के एहकाम और मुमानियतों को सीखना और उन्हें आगे बढ़ाना।

ईमान होने के लिए, कलिमा-ए-शहादत पढ़ना और उसके मआनी को जानना ज़रूरी है। कलिमा-ए-शहादत के मआनी पर सही तौर पर यकीन रखने के लिए, ये ज़रूरी है के जैसा अहल-अस-सुन्नत के आलिमों ने अपनी किताबों में बताया है उसपर यकीन रखना। वो जो अपने आपको अहल अस सुन्नत के आलिमों के ज़रिए लिखी गई सही किताबों के मुताबिक ढालते हैं उनको सौ शहीदों का इनाम मिलेगा। वो आलिम जो मुसलमानों के चार मसलकों में से किसी एक भी मसलक से मुनसलक हों वो **अहल अस-सुन्नत के आलिम** हैं। ईमान के सतून तफ़सील से "**ईमान और इस्लाम**" किताब में वाज़ेह किए गए हैं, जो के तुर्की किताब **(हरकेसे लाज़िम ऑलान ईमान)** का तर्जुमा है। हम तुम्हें वो किताब पढ़ने की सिफ़ारिश करेंगे।

आज ज़मीन पर मुसलमान तीन गुपों में बंटे हुए हैं। पहला गुप सच्चे मुसलमानों का है जो असहाब-ए-किराम के तकलीद किए गए रास्ते पर चलते है। उन्हें **अहल अस सुन्नत** या **सुन्नी मुसलमान** (सुन्नी) या **फिरका-ए-नाज़िया** (वो गुप जो दोज़ख से महफूज़ है) कहते हैं। दूसरे गुप में असहाब-ए-किराम के दुश्मन हैं। उन्हें **शीयास** (शियत) या, **फिरका-ए-दाल्ला** (देहरिया गुप) कहते हैं। तीसरा गुप न सिर्फ़ शीयाओं बल्कि सुन्नियों की तरफ़ भी मुख़ालिफ़ हैं। उन्हें **वहाबी**, या **नजदीस** कहते हैं, जो अरेबियन सूबे नजद से आए हैं, जो इनकी

मज़हबी उसूलों की खिलाफ़ वरज़ी की पैदाइशी जगह है। तीसरे ग्रुप को **फिरका-ए-मलऊना** (मलामत किया हुआ ग्रुप) भी कहते हैं। दरअसल, ये हमारी (तुर्की) किताबों **कियामत वे आहिरेत** और **सआदत-ए-अबदिया**, (और हमारी अंग्रेज़ी इशाअतों, जैसे के मुसलमानों के लिए सलाह, और सुन्नी रास्ता के चौथे बाब में) में लिखा है कि ये मुसलमानों को 'काफ़िर' बोलते हैं। हमारे नबी ने उस शख़्स पर मलामत की है जिसने एक मुसलमान को काफिर कहा। मुसलमानों को इन तीन ग्रुपों में तोड़ने की तदाबीर यहूदी और अंग्रेज़ मंसूबे बाज़ों ने की थी।

कोई भी शख़्स जो अपने नफ़स की अय्याश इच्छाओं में मशगूल होता है और बुरा दिल रखता है वो दोज़ख में जाता है, चाहे वो किसी भी ग्रुप का हो। हर मुसलमान को अपने आपको बेएतमादी और गुनाहों जोके उसके अपने नफ़स के अंदर मौजूद हैं उनसे पाक रखने के लिए लगातार (**ला इलाहा इल्लल्लाह**) के लफ़्ज़ कहते रहना चाहिए, [इस पाकी के काम को "तज़कीया-ए-नफ़स" कहते हैं], और अपने दिल को कुफ़्र और गुनाहों से पाक रखने के लिए जोकि उसके नफ़्स में, शैतान से, बुरी संगत से या नुकसान देने वाली और पामाल किताबों से सौदेबाज़ी करता है (**अस्तग़फिरूल्लाह**) के लफ़्ज़ भी कहने चाहिए। अगर एक शख़्स इस्लाम के (एहकामात और ममनुआत को) मानता है, तो एक शख़्स की इबादत/दुआ ज़रूर कुबूल होगी। नमाज़ का (रोज़ाना की दस्तूरी इबादतें जिन्हें कहते हैं) अदा न करना, उन औरतों को देखना जिन्होनें अपने जिस्मों को सही ढम्ग से ढका हुआ नहीं हो या उन लोगों को देखना जिन्होने अपने जिस्मों के उन हिस्सों को ज़ाहिर किया हुआ हो जिनका छुपाना लाज़िम हो, और ऐसी चीज़ों का इस्तेमाल करना जिन्हें (गलत तरीके से जिसे कहते हैं) हराम के ज़रिए हासिल किया गया हो, ये ऐसे शख़्स की निशानियाँ हैं जो इस्लाम की नाफरमानी करे। ऐसे शख़्स की इबादतें/दुआएँ कुबूल नहीं की जाएँगी।

ईमान होने के बाद, सबसे अहम हुकूम नमाज़ का है। ये हर एक मुसलमान के लिए फर्ज़-ए आईन है के रोज़ाना की पाँच नमाज़ें/इबादतें अदा करना। ऐसा न करना बहुत बड़ा गुनाह है हंबली मसलक के मुताबिक रोज़ाना की पाँच वक्त की इबादतों को उनके बताए गए वक्तों में अदा ना करना कुफ़्र का बाइस। **ग़ायत उत्ताहक़ीक** नाम की छोटी किताब को देखिए! शबसे पहले इसे पूरी तरह और सही तरीके से अदा करने के लिए ये ज़रूरी है के नमाज़ के इल्म को सीखा जाए। हमें ये फ़ायदेमंद लगा के नमाज़ के इल्म की हालत जो हमारे मज़हब ने वाज़ेह की है उसे हमारी किताब में मुख़तसिर तौर पर ख़ुलासा की जाए। हर मुसलमान को नमाज़ के इन हक़ाईक को सीखना चाहिए जो हमने बहुत सारे इस्लामी आलिमों की किताबों से जमा की हैं और इसी तरह उनको अपने बच्चों को भी सिखाएँ!

नमाज़ को सही तरह से अदा करने के लिए, नमाज़ में जो सूरतें और दुआएँ पढ़ी जाती हैं उन्हें याद कर लेना चाहिए। कम से कम, ये ज़रूरी है के नमाज़ अदा करने लिए थोड़ी बहुत मिकदार उनकी एक ख्वाजा (मास्टर खासतौर से मज़हबी स्कूल में) से या अपने एक दोस्त से जो उन्हें अच्छी तरह जान्ता हो और जो उनका सही तलफ़्फ़ुज़ कर सके उनसे सीख ले।

कुरआन अल-करीम को सही तरह से पढ़ने के लिए, एक शख़्स को कुरआन अल-करीम के कोर्स को पढ़ना चाहिए। ये एक बहुत ज़रूरी चीज़ है के कुरआन अल-करीम को सही तरह से पढ़ना सीखना और अपने बच्चों को उसे पढ़ाना।

कुरआन अल-करीम को रोमन हर्फ़ों के साथ लिखने की इजाज़त नहीं है। इसलिए, एक शख़्स को इसे इसकी असली हालत में पढ़ना होगा। इसको पढ़ना बहुत आसान है। हमारे आका नबी "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने एक हदीस ए शरीफ़ में वाज़ेह किया, **"वो जो अपने बच्चों को कुरआन अल-करीम**

पढ़ाते हैं या जो उन्हें कुरआन अल-करीम के उस्तादों के पास भेजते हैं, कुरआन अल-करीम के हर हुर्फ़ के लिए उन्हें ऐसे ईनाम दिया जाएगा जैसे के वो दस बार ज़ियारत के लिए काबा गए हो।और योमुलहश्र में उनके सिरों पर हाकमियत का एक ताज रखा जाएगा सब लोग ये देखेंगे और तारीफ़ करेंगे।"

अल्लाह तआला हमें उनमें से एक बना जो सही अकीदा रखते हैं, जो नमाज़ याद करते हैं और उसे सही अदा करते हैं, जो अच्छे काम करते हैं।

मीलादी	**हिजरी शम्सी**	**हिजरी कमरी**
2001	**1380**	**1422**

फ़ेहरिस्त मज़ामीन

नमाज़ एक आला फरमान

आदम अलहेस्सिलाम के दौर मे हर मज़हब में एक दिन में एक नमाज़ थी। जो कुछ अदा किया जाता था उसे यकजा किया गया और जो मुहम्मद अलैहिस्सलाम में अक़ीदा रखते थे उनके लिए इन्हें फर्ज़ (फरमान) बनाया गया। अगरचे नमाज़ अदा करना ईमान के उसूलों में से एक नहीं है, ये ईमान के लिए ज़रूरी है मानना के नमाज़ फर्ज़ है। **नमाज़** मज़हब का अहम सुतून है। वो जो अपनी नमाज़ों को लगातार, सही और मुकम्मल अदा करता है वो अपना मज़हब कायम कराता है और इस्लाम की ईमारत को मुकम्मल बनाता है। वो जो नमाज़ अदा नहीं करते वो अपने मज़हब और इस्लाम की इमारत को मिस्मार कर देते हैं। हमारे नबी "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने फरमाया, "**हमारे मज़हब का सरबराह नमाज़ है।**" जैसे के कोई इंसान बग़ैर सरबराह के नहीं रह सकता, तो ये मुमकिन नहीं है के बग़ैर नमाज़ के मज़हब होना।

इस्लाम में, ईमान रखने के बाद **नमाज़** पहला फरमान/हुकूम-ए-इलाही है। अल्लाह तआला ने नमाज़ फर्ज़ की है ताकि उसके बंदे सिर्फ उसकी इबादत करें। अल्लाह तआला ने कुरआन अल-करीम की सौ से भी ज़ाइद सतरों में हुकूम दिया "**नमाज़ अदा करो!**" एक हदीस शरीफ में, ये वाज़ेह किया गया "**अल्लाह तआला ने रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ों की अदाएगी का हुकूम दिया। अल्लाह तआला ने वादा किया के जो शख़्स नमाज़ अहतराम के साथ अदा करेगा और रोज़ाना पाँच वक्तों की हालतों को मानेगा वो उसे जन्नत में डालेगा।**"

हमारे मज़हब में **नमाज़** सबसे कीमती इबादतों में से हुकूम की गई है। एक हदीस-ए शरीफ़ में वाज़ेह हैः "**एक शख़्स जो नमाज़ अदा नहीं करता उसे इस्लाम से कोई हिस्सा नहीं मिलता।**" एक दूसरी हदीस-ए-शरीफ़ में, ये

बयान थाः "**ये नमाज़ है जो मुसलमान को काफिर से आला करती है**"; वो ये के, ईमान वाला नमाज़ अदा करता है और काफ़िर नहीं। मुनाफ़िक (हीलासाज़), ताहम, कभी कभी इसे अदा करते हैं और कभी कभी नहीं करते। मुनाफ़िकों को दोज़ख में बहुत सख्त अज़ाब मिलेगा। रसूलुल्लाह "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने फरमाया, "**वो जो नमाज़ अदा नहीं करते अल्लाह तआला को योमुलहश्र में बहुत गुस्से में पाएँगे।**"

नमाज़ अदा करना अल्लाह तआला की अव्वलीयत को मानना है और उसके आगे खुद को अदना समझना है। एक शख़्स जो ये सोच लेता है वो हमेशा अच्छी चीज़ें करता है। वो कभी बुरी चीज़ें नहीं करता। अगर एक शख़्स इरादा करले के रोज़ाना वो पाँच वक्त अपने रब (अल्लाह) के सामने है, तो उसका दिल इख्लास (सदाकत) से भर जाएगा। हर काम जो नमाज़ में करने का हुकूम हुआ वो दिल और दिमाग़ को बहुत सारे फ़ायदे पहुँचाता है।

मस्जिदों में जमाअत में नमाज़ अदा करना मुसलमानों के दिलों को एक दूसरे से मिलाता है। ये उनके बीच में प्यार लाती है। वो ये मानते हैं के वो भाई हैं। बड़े छोटों के साथ नरमाई रखते हैं। और छोटे बड़ों का एहतराम करते हैं। अमीर गरीबों की मदद करते हैं, और ताकतवर कमज़ोरों की। सेहतमंद लोग बीमारों को उनके घर देखने जाएँगे क्योंकि वो उन्हें मस्जिद में नहीं पाते। इस वास्ते हदीस-ए-शरीफ में खुशी की बशारत की नेमत दी गई है, "**अल्लाह उस शख़्स का मददगार है जो इस्लाम में अपने भाई की मदद के लिए भागे,**" वो एक दूसरे के लिए दौड़ें।

नमाज़ लोगों को गन्दे, बुरे और मना की हुई चीज़ों से रोकती है। ये गुनाहों के लिए तसल्ली है। एक हदीस-ए-शरीफ़ में वाज़ेह है, "**रोज़ाना की पाँच नमाज़ें एक दरिया की तरह हैं जो तुम्हारे घर के आगे बह रहा है। अगर एक शख़्स रोज़ाना उस दरिया में अपने आपको धोए, तो उस पर कोई गंदगी/धूल**

नहीं बचेगी। इसीतरह, जो रोज़ाना पाँच नमाज़ें/इबादतें अदा करता है उसके छोटे गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।"

अल्लाह और उसके नबी अलैहिस्सलाम पर ईमान रखने के बाद, **नमाज़** सारे दूसरे कामों और इबादतों में अव्वल है। इसलिए, ये ज़रूरी है के दूसरे फराइज़, वाजिबात, सुन्नतें और मुस्तहबात को सोचते हुए इसे अदा किया जाए। हमारे नबी "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने अपनी एक हदीस-ए-शरीफ में बयान किया, "**ए मेरी उम्मा (कौम) और मेरे साथियों! एक नमाज़ पूरे तौर पर उसके उसूलों को ध्यान करते हुए अदा की जाए तो वो सारे कामों से अफ़ज़ल है जो अल्लाह तआला को प्यारी हैं। ये नबियों की एक सुन्नत है। फरिश्तें इसे चाहते हैं। ये मारिफ़ा, ज़मीन और आसमानों की रोशनी है** (मारिफ़ाः अल्लाह तआला की ज़ात [शख़्स] और सिफ़ात के मुतअल्लिक इल्म)। **ये जिस्म की ताकत है। ये सहारे/खुराक के लिए बहुत ज़्यादा है। ये इबादतों/दुआओं को कुबूल कराने की वजह है ये मौत के फरिश्ते के खिलाफ हायल होती है। ये कब्र में एक सवाल है** (कब्र में सवालात करने वाले फरिश्ते)। **ये कयामत के दिन एक शख़्स की छाँव होगी। ये दोज़ख की आग और उसके बीच में एक खाई होगी। ये एक शख़्स को बिजली की तरह पुल सिरात पार कराएगी। ये जन्नत की चाबी है। ये जन्नत में एक शख़्स का ताज होगी। अल्लाह तआला ने मोमिनों/ईमान वालों को नमाज़ से ज़्यादा अहम कोई और चीज़ नहीं दी। अगर वहाँ पर कोई और अफ़ज़ल इबादत होती तो वो पहले ईमान वालों को वो बख्शता। इस वास्ते, कुछ फरिश्तें लगातार कयाम में हैं, कुछ रूकू में, कुछ सज्दे में, कुछ तशहदुद में। उसने इन सबको नमाज़ की एक रकअत में जमा किया और ईमान वालों को एक तोहफ़े की तरह दे दिया। इस वास्ते, नमाज़ ईमान का सिर है, मज़हब का सतून, इस्लाम का लफ़्ज़ और मोमिनों की मिराज/मेराज है। ये आसमान की रोशनी है। ये दोज़ख से बचाने वाली है।**

एक दिन, हज़रत अली अपनी दोपहर बाद की नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त में नहीं पढ़ पाए। अपने दुख की वजह से, उन्होने अपने आपको ज़मीन पर फैंक दिया। रोकर और चिल्लाकर आहो ज़ारी करने लगे। जब हमारे नबी मुहम्मद मुस्तफ़ा "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" को इस बात का पता चला, अपने साथियों के साथ, आप हज़रत अली "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" के पास गए। जब आपने उनकी हालत देखी, दुनियाों के बादशाह, हमारे नबी, "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" रोने लगे। आपने अल्लाह तआला से दुआ करी। सूरज दोबारा निकल आया। हमारे आका रसूलुल्लाह "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने हज़रत अली से कहा, **"ए अली! अपना सिर उठाओ। सूरज अभी निकला हुआ है।"** हज़रत अली "रज़ी अल्लाह अन्ह" बहुत ज़्यादा खुश हुए। उन्होने अपनी नमाज़ अदा की।

एक रात, हज़रत अबू बकर सिद्दीक "रज़ी अल्लाहु अन्ह" ने बहुत ज़्यादा इबादत करी और रात के आखिरी हिस्से में सो गए। वितर की नमाज़ का वक्त खत्म हो गया। फज्र की नमाज़ में, वो हमारे आका, नबी की तकलीद में आए। वो मस्जिद के दरवाज़े तक आए, और वो पुकारने लगे। वो भीख माँगने लगे, "या रसूलुल्लाह! मेरी मदद करें, मेरी वितर की नमाज़ का वक्त निकल गया।" हमारे आका रसूलुल्लाह भी रोने लगे। इस पर, जिब्राइल अलैहिस्सलाम आए और कहा, **"या रसूलुल्लाह! सिद्दीक से कह दो के अल्लाह तआला ने उन्हें माफ किया।"**

एक रात हज़रत बाएज़ीद-ए बिस्तामी "कुद्दीसा सिरोह," एक आला वली, फज्र की नमाज़ के लिए उठ नहीं पाए। वो इतना रोए और आहो ज़ारी करने लगे के उन्हें एक आवाज़ सुनाई दी, "ए बाएज़ीद! मैने तुम्हारी इस गल्ती को माफ़ कर दिया। मैने तुम्हारे रोने की वजह से तुम्हे सत्तर हज़ार नमाज़ों का सवाब दिया।" कई महीनों बाद, वो दोबारा नींद में मखलूब हो गए। शैतान आया और उनके पाक पैर को पकड़ कर उन्हें उठाया। उसने कहा, "उठ

जाओ, तुम्हारी नमाज़ का वक्त खत्म होने वाला है!” हज़रत बाएज़ीद-ए-बिस्तामी ने पूछा, “ओ मलऊन! तुम ऐसी चीज़ किस तरह कर सकते हो? तुम तो चाहते हो के हर कोई अपनी नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त में अदा नहीं कर पाए। तुमने मुझे क्यों उठाया?” शैतान ने जवाब दिया, “तुमने अपनी सुबह की नमाज़ छुटने पर रोकर सत्तर हज़ार नमाज़ों का सवाब हासिल किया था। इस बात को सोचते हुए, मैने तुम्हें जगाया ताकि तुम सिर्फ एक ही नमाज़ का सवाब हासिल कर सको, नाके सत्तर हज़ार नमाज़ों का!”

हज़रत जुनेद-ए-बग़दादी, एक आला वली ने कहा, “इस दुनियावी ज़िंदगी का एक घंटा योमुलइंसाफ के एक हज़ार सालों से बहतर है। क्योंकि, इस एक घंटे में, एक शख़्स पाक और काबिले कुबूल काम कर सकता है; ताहम, उन एक हज़ार सालों में कुछ भी करना नामुमकिन है।” रसूलुल्लाह “सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम” ने फरमाया, “**अल्लाह तआला एक शख़्स को, जो एक नमाज़ उसके वक्त पूरा होने के बाद अदा करेगा, उसे अस्सी हुकबाओं के लिए दोज़ख में डालेगा।**” एक हुकबा कयामत के बाद अस्सी सालों के बराबर है। कयामत का एक दिन एक हज़ार दुनियावी सालों के बराबर है।

इसलिए, ओ मेरे मज़हब के भाई! अपना वक्त फ़ालतू चीज़ों के साथ बरबाद मत करो। अपने वक्त की कीमत को सराहों। अच्छे काम करने में अपना वक्त गुज़ारों। हमारे प्यारे नबी अलैहि-सलाम ने फरमाया, “**अपने वक्त को बेकार चीज़ों में गुज़ारना सबसे बड़ा दुख है!**” अपनी नमाज़ों को उनके मुकर्रर ओकात में अदा करो ताकि तुम योमुलहश्र में अफ़सोस महसूस न करो और तुम बहुत सारे ईनाम पा सको! एक हदीस-ए-शरीफ में, ये वाज़ेह है, “**एक शख़्स जो अपनी रोज़ाना की नमाज़ें उसके मुकर्रर वक्त में अदा नहीं करता और उसकी कज़ा अदा करने से पहले मर जाता है उसके लिए सत्तर हज़ार खाइयाँ खुल जाती हैं। वो (अपनी कब्र में) आखिरी दिन तक तकलीफ़ उठाएगा।**” एक शख़्स जो इरादतन अपनी नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त में अदा नहीं करता;

वो ये के, अगर वो एक नमाज़ को अदा ना करने पर अफ़सोस नहीं करता जबकि उसका मुकर्रर वक्त खत्म हो गया, वो एक काफ़िर बन जाता है या जब तलक वो मरता है अपना ईमान खो देता है। उनका क्या बनेगा जिन्हें नमाज़ याद नहीं या जो नमाज़ को एक फर्ज़ की तरह नहीं देखते? चारों मसलकों के आलिमों ने एक राए/इतेफ़ाक राए से ये वाज़ेह किया के जो कोई भी नमाज़ को छोटा समझेगा, जो इसे एक फर्ज़ की तरह कुबूल नहीं करेगा वो एक **मुरतदिद** हो जाता है, यानी काफ़िर। हज़रत अबदुलग़नी नबलुसी ने अपनी किताब "**हदीकतुन नादिया**", के एक बाब जिसका उनवान "ज़ुबान की तकलीफ़ें" हैं, उसमें भी फरमाया है, के एक शख़्स जो जानबुझकर नमाज़ अदा नहीं करता और जो उसकी कज़ा अदा नहीं करना चाहता और जो इस बात से नहीं डरता के इस वजह से उसे अज़ाब मिल सकता है वो एक **मुरतदिद** है, यानी एक काफ़िर।

हज़रत इमाम रब्बानी ने अपनी किताब **मकतूबात** की पहली जिल्द के दो सौ पिछत्तर (275) वें खत में इस तरह बयान कियाः तुम वो नेयमतें इस्लामी इल्म सिखाकर और फिकह के उसूलों को मश्हूर करके हासिल कर सकते हो। उन जगहों पर जहालत कायम थी और बिदअत ग़ालिब थी। अल्लाह तआला ने तुम्हें अपने प्यारों की तरफ़ दुलार के साथ रहमत किया। उसने तुम्हें इस्लाम फैलाने का एक ज़रिया बनाया। इस मामले में, अपनी पूरी कोशिश करो मज़हबी तालीम को पढ़ाने के लिए और फ़िकह के उसूलों को फैलाने के लिए। ये दोनों ऊँचे दरजों पर पहुँचने के लिए और निजात की वजूहात के लिए ये हिमायत के सबसे मुकददम हैं खुशियाँ हासिल करने के लिए। कोशिश करो! मज़हबी आदमी की तरह आगे आओ! अमर-ए-मारूफ और नहीं-ए-मुंकर अदा करो और जो लोग वहाँ रह रहे हैं उन्हें सही रास्ते पर हिदायत करो! सूरह मुज़्ज़मिल की उन्नीसवीं आयत में, ये वाज़ेह है, "**उन लोगों के लिए जो अपने रब की रज़ा चाहते हैं, ये बेशक एक सलाह है।**"

आओ, नमाज़ अदा करो, और हमारे दिलों से आलूदगी साफ़ करो;
वहाँ अल्लाह तक कोई रसाई नहीं है, जब तक के नमाज़ अदा नहीं है!

जहाँ नमाज़ अदा की जाती है, गुनाह सारे झड़ जाते हैं;
आदमी कभी मुकम्मल नहीं होता, जब तक के नमाज़ अदा नहीं होती है!

अल्लाह तआला ने तारीफ़ की है नमाज़ की बहुत ज़्यादा कुरआन अल करीम में;
"मैं तुमसे प्यार नहीं करूँगा," उसने कहा, "जब तक के नमाज़ अदा नहीं होती है!"

एक हदीस-ए-शरीफ़ पढ़ी गई: ईमान की निशानी
अपने आप आदमी पर ज़ाहिर नहीं होती, जब तक के नमाज़ अदा नहीं होती है!

वाहिद एक नमाज़ को छोड़ना एक गुनाह है, एक बहुत बड़ा;
तौबा तुम्हें आज़ाद नहीं करती, जब तक के क़ज़ा अदा नहीं होती है!

वो जो नमाज़ को छोटा समझता है अपना ईमान खोता है, उसी वक्त;
एक शख़्स एक मुसलमान नहीं होता, जब तक के नमाज़ अदा नहीं होती है!

नमाज़ तुम्हारे दिल को पाक करेगी, और बुराई से परे रखेगी;
तुम कभी भी रोशन नहीं हो सकते, जब तक के नमाज़ अदा नहीं होती है!

पहला हिस्सा

ईमान और नमाज़

सब के लिए ईमान मुकददम है

अल्लाह तआला चाहता है के लोग दुनिया में आराम और अमन से रहें और आखिरत में लामहदूद खुशियाँ हासिल करें। इस वजह से उसने फायदेमंद चीज़ों का हुकूम दिया जो खुशियों का सबब बनें और नुकसान वाली चीज़ों की मुमानियत की जो तकलीफ़ों का सबब बनें। अल्लाह तआला का पहला फरमान है ईमान (अक़ीदा) रखना। ईमान रखना सब लोगों के लिए ज़रूरी है। ये हर एक के लिए लाज़िम है।

इल्मी तौर पर **ईमान** का मतलब है एक शख़्स को जानता के वो मुकम्मल और सच्चा है और उसमें यकीन रखता है। इस्लाम में, ईमान का मतलब है इस हकीकत को मानन के रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) अल्लाह तआला के पैग़म्बर हैं; वो **(नबी)**, हैं पैग़म्बर उसके ज़रिए चुने गए, और इसे दिल से कहना; और जो मुख़्तसिर आपने बताया उस मुखतसिर में यकीन रखना और जो आपने तफ़सील से बताया अल्लाह तआला की तरफ़ से तफ़सील में यकीन करना; और जब भी मुमकिन हो **(कलिमा अश-शहादा)** कहना। मज़बूत ईमान ऐसे है जैसे के, हमें पक्का पता हो के आग जल रही है, साँप ज़हर से मारते हैं और हम उनसे बचते हैं, हमें अल्लाह तआला और उसके सबब पर तजवीज़ करना चाहिए, और इस बात पर दिल से यकीन होना चाहिए, उसकी सलाह (रज़ा) की कोशिश करनी चाहिए और उसके हुस्न (जमाल) के लिए भागना चाहिए, और उसके गुस्से (ग़ज़ब) और अज़ाब

(जलाल) से खबरदार रहना चाहिए। हमें इस ईमान को दिल पर मार्बल के ऊपर नकश की तरह मज़बूती से कुंदा कर लेना चाहिए।

ईमान का मतलब है हर उस चीज़ को चाहना जिसे मुहम्मद अलैहिस्सलाम ने कहा और मंज़ूर किया, वो ये के दिल के ज़रिए यकीन करना। वो लोग जो इस तरह यकीन रखते हैं उन्हें **मोमिन** या **मुस्लिम** कहते हैं। हर एक मुसलमान को मुहम्मद अलैहिस्सलाम की तकलीद करनी चाहिए। उन्हें आपके बताए हुए रास्ते पर चलना चाहिए। आपका रास्ता कुरआन अल करीम के ज़रिए दिखाया गया रास्ता है। इस रास्ते को **इस्लाम** कहते हैं। आपकी तकलीद करने के लिए, सबसे पहले, ये ज़रूरी है के ईमान हो, फिर, इस्लाम के कानून को सीखें, फिर, फराइज़ (हुकूम-ए-इलाही) को अदा करे और हराम (ममनुअ चीज़ें या काम) से बचें, फिर सुन्नत अदा करे और मकरूहात से बचें। इन सबके बाद, हमें कोशिश करनी चाहिए के अपने आपको मुबहो में भी उनके जैसा बनाएँ।

हमारे मज़हब की बुनियाद ईमान है। अल्लाह तआला उन लोगों से ना तो प्यार करता है ना ही उनकी कोई इबादत या कोई अच्छे काम कुबूल करता है जो ईमान नहीं रखते। कोई भी शख़्स जो एक मुसलमान बनना चाहता है उसे पहले ईमान रखना होगा। फिर, जब भी ये ज़रूरी हो उसे गुस्ल, वुज़ू, नमाज़ और दूसरे फराइज़ और हराम सीखने चाहिए।

अक़ीदा सही होना चाहिए

हवासे खमसा और दिमाग़ के ज़रिए पकड़ी गई इतलाआत ईमान हासिल करने के लिए फायदेमंद हैं। साईन्सी इल्म एक शख़्स को ये समझने और जानने में मददगार हुआ के काएनात का तरीका, और बाकाएदगी हादसाती नहीं है और वहाँ पर एक तख़लीक करने वाला है। इस तरह से ये एक शख़्स को ईमान हासिल करने में मदद करता है। ईमान का मतलब है हज़रत मुहम्मद अलैहिस्सलाम हमारे आखिरी नबी के ज़रिए जो इल्म लाया गया अल्लाह तआला की तरफ़ से उसे सीखना और उनपर यकीन रखना। नबियों पर यकीन ना रखना अगर एक शख़्स कहे, "मैं उनपर इस शर्त पर यकीन करूँगा के वो दिमाग़ से एकमत हैं।" मज़हबी इल्म की वजह पर काबिज़ होकर पाना नहीं है। जो हमारे नबी हज़रत मुहम्मद अलैहिस्सलाम ने नशर किया वो **अहल अस-सुन्नत** की किताबों से सीखा जा सकता है और वो उसके मुताबिक यकीन किए जाएँ। सही और काबिलेकुबूल ईमान होने के लिए, ये ज़रूरी है के मंदरजाज़ेल शर्तों को भी माना जाएः

1- ईमान लगातार और साबित कदम हो। हमें उसे एक लम्हे के लिए भी छोड़ने का इरादा नहीं करना चाहिए। कोई भी जो तीन साल बाद काफ़िर होने की इच्छा रखे वो जैसे ही ऐसा सोचता है उसी वक्त काफ़िर बन जाता है।

2- मोमिन का ईमान खौफ़ (डर) और रज़ा (उम्मीद) के बीच होना चाहिए। हमें अल्लाह तआला के अज़ाब से डरना चाहिए, बहरहाल, हमें उसकी रहमत (अल्लाह की शफ़कत) से उम्मीद नहीं छोड़नी चाहिए। हमें हर एक गुनाह से खबरदार होना चाहिए; हमें खौफ़ होना चाहिए के हमारे गुनाहों की वजह से हम अपना ईमान खो सकते हैं। चाहे अगर एक शख़्स हर गुनाह का काम

करले, एक शख़्स को अल्लाह तआला के ज़रिए माफ़ किए जाने की उम्मीद से महरूम नहीं होना चाहिए। हमें अपने गुनाहों के लिए पछताना चाहिए। इस वास्ते, वो जो अपने गुनाहों पर तौबा करते/पछताते हैं वो ऐसे हैं जैसे उन्होने कभी ये किए ही नहीं।

3- एक शख़्स को अपनी रूह के गले (उसकी मौत के दौरान) एक पहुँचने से पहले ईमान रखना चाहिए। जब रूह गले/हलक तक पहुँच जाती है, एक शख़्स को बाद के सारे वाक्यात नज़र आने लगते हैं। उस वक्त, हर काफ़िर ईमान चाहता है। ताहम, ईमान नज़र नहीं आता। ये ज़रूरी है इसे देखने से पहले इस पर यकीन करना। तुम्हारे इसको देखने के बाद, ये कोई ईमान नहीं रह जाता। बहरहाल/ताहम, उस वक्त मोमिन का पछतावा/माफ़ी कुबूल हो जाती है।

4- एक शख़्स को सूरज के मग़रिब से निकलने से पहले ईमान ले आना चाहिए। कयामत की एक सबसे बड़ी निशानी सूरज के मग़रिब से उगने/निकलने की है। सारे लोग जो इसे देखेंगे वो यकीन केरेंगे। ताहम, उनका ईमान कुबूल नहीं किया जाएगा। तौबा के दरवाज़ें उस वक्त बंद हो चुके होंगे।

5- एक शख़्स को ये मानना चाहिए के अल्लाह तआला के सिवा कोई ग़ैब, छिपी हुई चीज़ें नहीं जानता। यानी, सिर्फ़ अल्लाह तआला ग़ैब जानता है। जिन्हें वो ग़ैब की चीज़ों के बारे में बताता है वही उसके बारे में जान पाते हैं। फरिश्तें, जिन्नात, शैतान, यहाँ तक के नबी भी ग़ैब नहीं जानते। ताहम, अगर अल्लाह अपने नबियों या अपने प्यारे बंदों को खबर करना चाहे, तब वो भी इसे जान सकते हैं।

6- किसी भी मज़हब के उसूल ईमान या इबादत से तअल्लुक रखते हुए बग़ैर किसी ज़ोर ज़बरदस्ती या जान बुझकर ऐसा करते हुए, एक शख़्स को

इंकार नहीं करना चाहिए। अहकाम-ए-इस्लामिया को छोटा जानना कुफ़्र है, यानी, इस्लाम के फरमान या ममनुआत में से कोई एक को, कुरआन अल-करीम की, फरिश्तों या नबियों में से किसी एक की खिल्ली उड़ाना, या बग़ैर ज़ोर ज़बरदस्ती के इंकार करना उनके ज़रिए किसी भी मवासलात को। वो जो मुहज़ुबानी अल्लाह तआला, फरिश्तों, फर्ज़, गुस्ल की खुबी या नमाज़ की मौजूदगी से इंकार करे, किसी सख्त ज़रूरत के तहत जैसे के कत्ल किए जाने की धमकी की वजह से, तो वो एक काफ़िर बन जाता।

7- एक शख़्स को इस्लामी मज़हब के ज़रिए खुले तौर पर यकीनी ईल्म के मवासलात पर शक या हिचकिचाहट नहीं करना चाहिए। अगर एक शक करता है के आया नमाज़ फर्ज़ है, या क्या शराब और दूसरे नशीलें शरबत पीना, जुआ खेलना, सूद (रिबा), रिश्वत हराम (ममनुअ) हैं तो ये कुफ़्र का बाइस है। जाने माने हलाल के लिए कहना के ये हराम है या जाने माने हराम के लिए कहना के ये हलाल है तो कुफ़्र का बाइस है।

8- इस्लाम ने क्या मवासलात की हैं उसी के मुताबिक ईमान होना चाहिए (ईमान इस्लाम पर मुबनी होना चाहिए)। दिमाग़ के ज़रिए चीज़ों में यकीन रखना, या फलसफियों के बयानात या गल्त साईन्सदानों के मुताबिक मज़हब पर यकीन करना ईमान नहीं है। एक शख़्स को मुहम्मद अलैहिस्सलाम के ज़रिए बताए गए तरीके पर यकीन करना चाहिए।

9- जो ईमान रखते हैं वो सिर्फ़ अल्लाह तआला की रज़ा के लिए प्यार करते हैं और अल्लाह तआला की रज़ा के लिए वो मुख़ालफ़त रखते हों। ये ज़रूरी है के मुसलमानों को चाहना वो अल्लाह तआला के ज़रिए प्यार किए गए और जो अपने हाथ या कलम के ज़रिए इस्लाम की तरफ़ नफ़रत दिखाएँ उन लोगों को नापसंद करें। ये मुख़ालफ़त/दुश्मनी दिल में जगह करनी चाहिए।

[हमें ग़ैर-मुस्लिम शहरियों या ग़ैर-मुल्कियों को मुसकुराते चेहरे और नरम अलफ़ाज़ में सुलूक करना चाहिए। हमारे खुबसूरत अख्लाक के साथ, हमें उन्हें अपने मज़हब के साथ प्यार कराने वाले बनाना चाहिए।]

10- ये ज़रूरी है के उस तरीके में यकीन रखना जिसे सच्चे मुसलमान जो हमारे नबी अलैहिस्सलाम और उनके साथियों के ज़रिए दिखाए गए सही रास्ते को नहीं छोड़ते। सही अक़ीदा होने के लिए, एक शख़्स को अहल-अस-सुन्नत वल जमाअत के अकीदों के उसूलों के मुताबिक यकीन करना चाहिए। [एक शख़्स जो अहल अस-सुन्नत के आलिमों के ज़रिए लिखी गई सही मज़हबी किताबों से जुड़ जाता है वो सवाब (तौहफ़ें, इनाम आखिरत में) हासिल करता है उस सवाब की कुल मिकदार के बराबर जो उन सौ लोगों को मिलेगा जिन्होने शहादत हासिल की। मुसलमानों के चार मसलकों में से किसी एक से जुड़े हुए आलिम **(अहल अस-सुन्नत)** हैं। इमाम-ए आज़म अबू हनीफा अहल अस-सुन्नत के आलिमों के रहनुमा है रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम ने अपने सहाबा को उन हकीकतों के बारे में बताया जो अल्लाह तआला उन्हे लिखवाई /बताई। और सहाबा ने, अपनी बारी में, इन हकीकतों को अपने शागिर्दों (अहल-अस-सुन्नत के आलिमों) को बताया, जिन्होनें अपनी बारी में उन्हें अपनी किताबों में लिखा।]

अहल अस-सुन्नत का अक़ीदा

एक मुसलमान के लिए पहली ज़रूरत ईमान (यकीन, अकीदा) रखना है। सही ईमान अहल-अस-सुन्नत के अकीदे के मुताबिक यकीन रखने पर मुनहसिर करता है। बाशऊर और जवान मर्द और औरतों के लिए पहला फ़र्ज़ है अहल अस-सुन्नत के आलिमों की किताबों में लिखे हुए अकाइद के इल्म को सीखना और उनके मुताबिक यकीन करना। आखिरत में निजात हासिल करने

के लिए जो बताया गया है उसपर यकीन करने पर मश्रूत है।वो जो दोज़ख से बचेंगे वो होंगे जो उनके तकलीद किए हुए रास्ते की तकलीद करेंगे।वो जो अहल अस-सुन्नत के आलिमों के रास्ते की तक़लीद करेंगे वो **(सुन्नी)** या **(अहल अस-सुन्नत)** कहलाएँगे।तुर्की की किताब **(इस्लाम अहलाका - इस्लाम के अख्लाक)** के पाँच सौ तरेप्पनवें सफ़ेह पर छयालिसवें खत को देखिए।

ये एक हदीस-ए-शरीफ में बयान है, **"मेरी उम्मत तेहत्तर गुपों में बंट जाएगी।उनमें से सिर्फ़ एक बचेगी दोज़ख से और दूसरी खल्त हो जाएँगी, वो दोज़ख में जाएँगी।"** इन तेहत्तर गुपों में से हर एक इस्लाम को मानने का दावा करेगा।हर गुप कहेगा के वो एक गुप है जो दोज़ख से बचेगा।सुरत उल-मोमिनुन की चौवन वीं आयत और सुरत-उर-रोम की बत्तीसवीं आयत में वाज़ेह हुआ है, जिसके मआनी हैंः **"हर पार्टी खुशी मनाएगी, ये मानते हुए के वो सही रास्ते पर है।"** ताहम, इन बहुत सारे गुपों में से, उस एक की निशानी, अलामत जो महफूज़ रहेगा हमारे नबी "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने इस तरह दी हैः **"वो जो इस गुप में हैं वो हैं जो मेरे और मेरे सहाबा के ज़रिए तकलीद किए हुए रास्ते को मानेगे।"** एक शख़्स जो किसी भी एक असहाब-ए-किराम को प्यार नहीं करता वो अहल-अस-सुन्नत से परे हट गया।एक शख़्स जो अहल अस-सुन्नत पर ईमान नहीं रखता वो या **अहल-ए-बिदअत**, या हिलहादी मुसलमान, या एक मुलहिद, एक काफ़िर बन जाता है।

अहल अस सुन्नत का अक़ीदा रखने की अलामतें

अल्लाह तआला उन मुसलमानों के साथ राज़ी रहता है जो अहल-अस सुन्नत के अक़ीदे के मुताबिक ईमान रखते हैं। इस तरह से ईमान रखने की कई शर्ते हैं। अहल-अस सुन्नत के आलिमों ने उन्हें मंदरजाज़ेल वाज़ेह किया हैः

1- ये ज़रूरी है के आमन्तु के ईमान के छः अक़ीदों में यकीन रखना। यानी के, अल्लाह तआला के वुजूद और उसकी तौहीद में, उसका कोई साथी या सानी नहीं, उसके फरिश्तों में, उसकी किताबों में, उसके रसूलों में, कियामत के दिन में, और इस पर के अच्छी (खैर) और बुरी (शर) तकदीर अल्लाह तआला की तरफ़ से होती है और मौत के बाद उठाए जाने पर यकीन रखना ज़रूरी है। (ये सब आमन्तु की दुआ में बयान है।)

2- ये ज़रूरी है के इस बात पर ईमान रखना के कुरआन अल-करीम अल्लाह तआला का कलाम है और उसके ज़रिए भेजी गई ये दायम और आखिरी किताब है।

3- एक ईमान वाला/वाली कभी अपने ईमान पर शक नहीं लाता/लाती।

4- ये ज़रूरी है के सारे असहाव-ए-किराम से प्यार रखना जिन्हें हमारे नबी अलैहिस्सलाम जबके आप ज़िंदा थे को देखने और ईमान रखने की सआदत नसीब हुई। ये ज़रूरी है के कभी भी आपके चारों ख़लिफाओं, आपके कुंबे के किसी रूकन या आपकी इज़्ज़तदार बीवियों के बारे में कुछ बुरा न बोला जाए।

5- ये ज़रूरी है के इबादत के कामों को ईमान (यकीन) का हिस्सा तजवीज़ न करना। यानी के, इस बात की इजाज़त नहीं है के एक मुसलमान को जो इबादत के काम नहीं करता और जो गुनाहों का इर्तिकाद करता है उसे एक काफ़िर [मुश्रिक] कहना। एक शख़्स जो हराम को ग़ैरअहम तजवीज़ करता है, जो उनके बारे में नहीं सोचता या इस्लाम का मज़ाक उड़ाता है वो अपना ईमान खो देता है।

6- ये ज़रूरी है के जो लोग कहते हैं वो अहल-ए-किब्ला है और जो अल्लाह तआला और उसके नबी मुहम्मद अलैहिस्सलाम पर ईमान रखते हैं उन्हें, काफ़िर नहीं कहना चाहिए। चाहे अगर उनके कुछ हिल्हादी अकीदे क्यों ना हो। [बहरहाल, अगर एक शख़्स के ईमान का अक़ीदा जो अहल-ए-किब्ला के नाम में हो वो पक्के ज़रिए के मुख़ालिफ़ हो जिसका मआनी साफ़ हो, तब ये यकीन कुफ्र है। इस मामले में वो एक काफ़िर है, चाहे अगर एक शख़्स नमाज़ अदा करता हो और बाकी दूसरे इबादत के काम करता हो।]

7- एक इमाम जो जाना जाता हो के उसने खुले तौर पर कोई गुनाह नहीं किया उसके ज़रिए तकलीद की गई नमाज़ अदा करने की इजाज़त है। ये फ़ैसला कमान्डरों और गवर्नरों के लिए भी जाइज़ है जो जुमें की नमाज़ों की रहनुमाई करते हैं।

8- मुसलमानों को अपने कमान्डरों और मुन्तज़िमों के खिलाफ़ बग़ावत नहीं करनी चाहिए। बग़ावत फ़ितने की वजह के बराबर है और फ़ितना बहुत सारी आफ़तों की जड़ है। हम दुआ करते हैं के वो अच्छे काम करें और हम उन्हें सलाह भी देते हैं – नरम अलफ़ाज़ के साथ- के अपने आपको खराब, गुनाहों के कामों से दूर रखें।

9- वुज़ू करते वक्त, चाहे अगर कोई उज़र या सख्त ज़रूरत न हो, दोनो आदमियों और औरतों के लिए ज़रूरी है के mests पर मसह (एक शख़्स का गिले हाथों को रगड़ना) करें (एक mest ऐसा जूता है जिस पर पानी नहीं ठहरता वो पैर के उस हिस्से को ढकता है जो वुज़ू में धोना फ़र्ज़ है) बजाए पैरों को धोने से। खुले पैर या मोज़ों पर मसह करने की इजाज़त नहीं है।

10- ये ज़रूरी है के इस बात पर ईमान रखना के मेराज [हज़रत मुहम्मद की आसमानों पर रसाई] जिस्म और रूह दोनो के साथ हुई। कोई भी जो कहे, "के मेराज़ एकहालत है। यानी, वो ख्वाब में नाज़िल हुई" तो वो अहल-अस-सुन्नत से फ़िर जाता है।

दूसरी दुनिया में, मुसलमान अल्लाह तआला को जन्नत में देखेंगे। योमुल हिसाब में, पहले रसूल, फिर पाक, अच्छे लोग बोलेंगे। कब्र में सवाल जवाब सही है। कब्र में जिस्म और रूह दोनों पर अज़ाब नाज़िल किया जाएगा। करामात [करामते जो अल्लाह तआला अपने सबबों के उसूलों से बाहर अपने नेक बन्दों के हाथों के ज़रिए ज़ाहिर करवाता है] औलिया की सही/सच्ची हैं। करामात ग़ैर मामूली हालतें हैं जो अल्लाह तआला के प्यारे बन्दों में ज़ाहिर होती हैं। ये ऐसी चीज़ें है जो उसकी आदत के खिलाफ़ है। यानी, वो जिस्मानी, किमयाई

या हयाताती कानूनों की हदों में नहीं हैं। करामतें बेशुमार हैं जिनसे इंकार नहीं किया जा सकता। रूहें अपनी कब्रों में सब जानती हैं और सुनती हैं के ज़िन्दा लोग क्या कह रहे हैं या कर रहे हैं। कुरआन अल-करीम के पढ़ने का सवाब पहुँचाना, खैरात देना और चाहे हमारी सारी इबादतें, मुर्दो की रूहों को पहुँचाना, उनके लिए फ़ाएदेमंद है। ये उनकी सज़ाओं को कम करने या रिहा कराने का सबब बनती हैं। इन सब में यकीन रखना अहल अस-सुन्नत के अकीदे की अलामतों को रखने में से एक है।

ईमान की बुनियादें

ईमान की छः बुनियादें हैं। ये बुनियादें आमन्तु की दुआ में वाज़ेह की गई हैं। रसूलुल्लाह "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने फरमाया ईमान का मतलब है छः खास चीज़ों में यकीन रखना। इसलिए, हर मुसलमान को अपने बच्चों की (आमन्तु) पढ़ाना चाहिए और इसे उन्हें याद कराना चाहिए।

आमन्तुः (आमन्तु बिल्लाहि व मलाइ क तिही व कुतुबिही व रूसुलिही वल यौमिल आख़िरी वल्कद्रि, ख़ैरिही व शर्रिही मिनल्लाहि तआला वल्बअसि बअ-दलमौत हक्कून, **अशहदु अन लाइला-ह इल्लल्लाहु व अशहदु अन-न मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू**।)।

पहली बुनियाद अल्लाह तआला में यकीन रखना

आमन्तु बिल्लाह का मतलब है "मैं ईमान लाया अल्लाह तआला की मौजूदगी और उसकी तौहीद पर। मैं इस हकीकत को अपने दिल के साथ कुबूल करता हूँ।"अल्लाह तआला मौजूद है और वो एक है। "एक" के दो लुग़ाती मआनी हैं। पहला, नम्बर के तौर पर, ये दो का आधा है और नम्बरों की शुरूआत है। दूसरे का मतलब है एक होना ऐसे जिसका कोई साथी या सानी न हो। इसलिए, अल्लाह तआला एक है। इसका मतलब है उसका कोई साथी या सानी नहीं है। यानी, उसकी सिफ़ातों में या उसकी ज़ात में कोई साथी नहीं। जैसे के सारी मखलूक की सिफ़ात या ज़ात उसके बनाने वाले की सिफ़ात या ज़ात

की तरह नहीं हैं, इसी तरह ख़ालिक की ज़ात या सिफ़ात उसकी मख़्लूक के बरअकस हैं।

अल्लाह तआला वाहिद सारी मखलूक के अज़ा और खलियों का खालिक है। कोई भी अलाह तआला की ज़ात को नहीं जान सकता। दिमाग़ में जो चीज़ भी आए वो उन सब से परे है। उसकी ज़ात के बारे में सोचने की इजाज़त नहीं है। ताहम, कुरआन अल करीम में सिफ़ात के साथ उसकी पाकी को सच्चाई के साथ बोलना चाहिए। सारी उसकी सिफ़ातें और नाम माज़ी में लाज़वाल हैं (बग़ैर आग़ाज़ के होना) और दाएमी हैं। उसकी ज़ात कहीं भी नहीं है। वो छः जानी हुई सिमतों के बग़ैर है। यानी के, वो सामने नहीं है, वो पीछे नहीं है, दायें/सीधे नहीं, बायें नहीं, ऊपर या नीचे नहीं। एक शख़्स यही कह सकता है के वो वाहिद है जो हर जगह और हर वक्त हाज़िर [मौजूद] और दिखता है। लेकिन उसकी ज़ात मौजूद और उसकी नज़र बग़ैर वक्त और बग़ैर जगह के है, यानी बग़ैर उसकी हस्ती के हर जगह।

अल्लाह तआला की सिफ़ात चौदह हैं। **अस-सिफात** [खासियतें] **अज़-ज़ातिया** अल्लाह तआला की छः हैं। अल्लाह तआला की **अस-सिफात** [खासियतें] **अस-सुबूतिया** आठ हैं। इनके मआनी को याद करना और सीखना यकीनी है।

अस सिफ़ात [खासियतें] अज़ ज़ातिया

1- अल वुजूदः अल्लाह तआला मौजूद है। उसकी मौजूदगी माज़ी में लाज़वाल है। वो वाजिब अल वुजूद है; यानी, उसकी मौजूदगी ज़रूरी है।

2- अल किदमः अल्लाह तआला की मौजूदगी बग़ैर आग़ाज़ के है।

3- अल-बकाः अल्लाह तआला की मौजूदगी बग़ैर खत्म के है। उसकी हस्ती को कभी रोका नहीं जाएगा। जैसे के एक साथी की मौजूदगी का होना नामुमकिन है, इसी तरह उसकी ज़ात [हस्ती, महक] और सिफ़ात का ग़ैरमौजूद होना नामुमकिन है।

4- अल-वहदानियाः आल्लाह तआला की ज़ात, सिफ़ात और कामों में कोई साथी या सानी नहीं है।

5- अल-मुखालफ़त-उन लिल-हवादिसः उसकी ज़ात और सिफ़ात उसकी अपनी किसी तखलीक की ज़ात और सिफ़ात से मुशाबह नहीं है।

6- अल-कियाम बि-नफ़सिहीः अल्लाह तआला अपनी ज़ात के साथ मौजूद है। उसे किसी जगह की ज़रूरत नहीं। जब कोई सामान या जगह नहीं थी, वो मौजूद था, क्योंकि वो किसी भी ज़रूरत से आज़ाद है। वो दाएमी मुसतकबिल में भी हमेशा ऐसा रहेगा जैसे के वो इस काएनात को गैरमौजूदगी से वुजूद में लाने से पहले था।

अस-सिफ़ात [खासियतें] अस-सुबूतिया

1- **हयातः** अल्लाह तआला ज़िंदा है। उसकी ज़िंदगी मखलूक की ज़िंदगियों से नामुवाफ़िक है। उसकी ज़िंदगी, जो उसकी ज़ात के लिए लायक और अपने आप में एक मिसाल है वो माज़ी में और मुस्तकबिल में लाज़वाल है।

2- **इल्मः** अल्लाह तआला सब कुछ जानता है। उसका इल्म उसकी तखलीक के इल्म से मिलता हुआ नहीं हैं। अगर एक चींटी अंधेरी रात में एक काले पत्थर पर चल रही हो, वो ये देखता है और जानता है। वो लोगों के दिलों में छुपे हुए ख्यालात और इरादों को जानता है। उसके इल्म में कोई फ़र्क नहीं आती। ये माज़ी और मुस्तकबिल में लाज़वाल है।

3- **समआः** अल्लाह तआला सुनता है। वो बग़ैर किसी ज़राए या सिमत/हिदायत के सुनता है। उसकी सुनने की ताकत तख़लीक की कुव्वते समाअत की तरह नहीं है। उसकी ये सिफ़त, उसकी दूसरी सिफ़ात की तरह, माज़ी में और मुस्तकबिक में भी, लाज़वाल है।

4- **बसरः** अल्लाह तआला देखता है। वो बग़ैर आलात और शर्तो के देखता है। उसका देखना आँखों के ज़रिए नहीं है।

5- **इरादाः** अल्लाह तआला चाहता है। वो जो चाहता है तखलीक करता है। हर चीज़ उसके चाहने से वुजूद में आ जाती है। वहाँ पर कोई ऐसी ताकत नहीं है जो उसके चाहने को रोके।

6- **कुदराहः** अल्लाह तआला कादिर-उल मुतलक है। कोई भी चीज़ उसके लिए मुश्किल नहीं है।

7- कलामः अल्लाह तआला के पास बोलने की सिफ़त है। उसका बोलना औज़ारों, खतों, आवाज़ों, या एक ज़ुबान के ज़रिए नहीं है।

8- तकवीनः अल्लाह तआला तखलीक करने वाला है। अल्लाह के बराबर कोई खालिक नहीं है। हर चीज़ उसके ज़रिए तख़लीक की गई। हमें अल्लाह तआला के अलावा किसी को खालिक नहीं कहना चाहिए।

उसकी सिफ़ात की सही खसलत को समझना नामुमकिन है। उसकी सिफ़ात में एक साथी या एक सानी कोई भी नहीं हो सकता।

दूसरी बुनियाद

फरिश्तों में अकीदा रखना

व मलाइकतिहीः इसका मतलब है "मैं अल्लाह तआला के फरिश्तों में ईमान रखता हूँ। फरिश्तें अल्लाह तआला के बन्दे हैं। वो सब उसके एहकाम की फरमाबरदारी करते हैं। वो कभी गुनाह करने का जुर्म नहीं करते। वो न तो आदमी होते हैं न औरत। उनकी शादी नहीं होती। वो ज़िंदा है। वो न तो खाते हैं न पीते हैं न ही सोते हैं। वो नूरानी (चमकीले, रूहानी) मखलूक है जिनके पास अक़ल (समझ) होती है। सबसे आला फरिश्तें चार मुकर्रब फरिश्तें हैंः

1- जिब्राईल अलैहिस्सलामः उनका काम नबियों के पास वही (पैग़ामात) लाते थे और उन्हें ममनुआत और अहकाम के बारे में भी इतलाअ देते थे।

2- इसराफ़ील अलैहिस्सलामः उनके पास सूर फूँकने का काम है। उनकी पहली फूँक पर, अल्लाह तआला के सिवा, हर जानदार चीज़ जो ये आवाज़ सुनेगी वो मर जाएगी। उनकी दूसरी फूँक पर, सब ज़िंदा हो जाएगें।

3- मीकाईल अलैहिस्सलामः रिज़क फराहम करने की सस्ता करने की, कस्रत की मंहगाई की, कमी की, और हर चीज़ की तहरीक की उनकी ज़िम्मेदारी है।

4- इज़राईल अलैहिस्सलामः वो मखलूक की जान निकालने पर लगे हुए हैं।

इन चारों के बाद, यहाँ पर फरिश्तों के चार दर्जे हैं। **हमालात अल-अर्श** के चार फरिश्तें; पाकी की मौजूदगी में फरिश्तें, जिन्हें **मुकर्रबीन** कहा जाता है। अज़ाब वाले फरिश्तों के रहनुमा, जिन्हें **करूबियान** कहते हैं; और रहम करने वाले फरिश्तें, जिनके नाम **रूहानियान** हैं। जन्नत के फरिश्तों के सरबराह का नाम **रिज़वान** है। दोज़ख के फरिशतों के सरबराह का नाम **मालिक** है। दोज़ख के फरिश्तों को **ज़बानीस** कहते हैं। सारी तखलीकों में, फरिश्तें सबसे ज़्यादा हैं। आसमान में ऐसी कोई खाली जगह नहीं है जहाँ फरिश्तें इबादत न करते हों।

तीसरी बुनियाद
आसमानी किताबों में यकीन रखना

व कुतुबिहीः "इसका मतलब है अल्लाह तआला के ज़रिए नाज़िल की गई किताबों पर मैं यकीन रखता हूँ।" अल्लाह तआला ने इन किताबों को एक फरिश्ते जब्राईल के ज़रिए उनके मुबारक कानों में कहलवाते थे। कुछ को

उन्होने तखतियों पर कंदा किताबें भेंजी, और कुछ दूसरों को बग़ैर फरिश्तों के सुनवाया। ये सारी किताबें अल्लाह तआला के लफ़ज़ हैं। वो माज़ी में अमर हैं और हमेशा रहेंगी। ये मखलूक नहीं है। वो सब सच्ची हैं। इन आसमानी किताबों में से, उसने हमे एक सौ चार की मौजूदगी के बारे में बताया है। **दस सहीफे** आदम (एडम) अलैहिस्सलाम पर उतरे, **पचास सहीफे** शीस (अलैहिस्सलाम) पर, **तीस सहीफे** इदरीस (अलैहिस्सलाम) पर, **दस सहीफे** इब्राहीम (अवराहम) (अलैहिस्सलाम) पर उतारे गए, **तौरेत** (असली तौरह) मूसा (मॉसेस) (अलैहिस्सलाम) पर उतरी, **ज़बूर** (असली मनाजात) दाऊद (अलैहिस्सलाम) पर, **इन्जील** (असली बाईवल) ईसा (जिस्स) (अलैहिस्सलाम) पर, **कुरआन अल-करीम** मुहम्मद अलैहिस्सलाम पर नाज़िल किया गया।

अल्लाह तआला ने बहुत सारे नबियों के ज़रिए शुरू से पहले आदमी और पहले नबी हज़रत आदम से लेकर आखिरी नबी हज़रत मुहम्मद अलैहिस्सलाम तक बहुत सारी किताबें भेंजी ताकि लोग इस दुनिया में आराम और अमन से रह सकें और आखिरत में न खत्म होने वाली खुशियाँ हासिल कर सकें। इन किताबों में, उसने ईमान और इबादत के सुतून वाज़ेह किए हैं। उसने इस मसले पर जानकारी दी है जिसकी इंसानियत को ज़रूरत होती है।

इन सब में से, कुरआन अल-करीम आखिरी पाक किताब है। कुरआन अल-करीम के नाज़िल होने के बाद, बाकी सारी पाक किताबों के उसूले और फैसले खत्म हो गए। जिब्राइल अलैहिस्सलाम (सबसे बड़े फरिश्ते गब्राइल) कुरआन अल-करीम मुहम्मद अलैहिस्सलाम के पास लाए कुरआन अल-करीम थोड़ा थोड़ा करके उतरा और तेईस साल में उसका नुज़ूल पूरा हुआ। कुरआन अल करीम में **114** सूरतें (बाव) और **6236** आयात (कतअ) हैं। कुछ किताबों में ये नम्बर मुख्तलिफ़ लिखे हुए हैं इसकी वजह है के कुछ आलिमों ने खास लम्बे कतए छोटे कतए माने हुए हैं। इसलिए, कुरआन अल-करीम के नाज़िल होने के बाद, इसे कभी बदला नहीं गया है और न ही बदला जा सकता

है। कुरआन अल-करीम अल्लाह का कलाम है इंसानी मखलूक के लिए इतनी आला किताब को मुक्र्कब करना मुमकिन नहीं है। इसकी एक वाहिद सतर से मिलता हुआ कुछ भी कहना मुमकिन नहीं है।

वह साल जब हमारे रसूल दूसरी दुनिया में अपनी मौजूदगी इ़ज़्ज़त से बखशने चले गए तो, हज़रत अबू बक्र, आपके पहले खलीफ़ा ने, पूरा कुरआन अल करीम को सफ़ेह पर जमा किया। इस तरह, एक किताब (मसूदा) जिसे **(मुसहफ़)** कहते हैं बनाई गई। सारे रसूल के असहाब ने एक राए से वाज़ेह किया के ये मुसहफ़ अल्लाह तआला का कलाम है। छः और मुसहफ़ लिखे जाने के बाद, हज़रत उस्मान ने, उन्हें कुछ सूबों में भेज दिया।

हमें कुरआन अल करीम को उसकी असली शक्ल अरबी में पढ़ना चाहिए। दूसरे हुर्फ़ों से लिखे हुए किसी भी मतन को कुरआन अल-करीम कहना मुमकिन नहीं है।

a) एक शख़्स को इसको पकड़ते वक्त वुज़ू के साथ होना चाहिए। एक शख़्स को किब्ले की तरफ़ बैठना चाहिए और इसे पूरे ध्यान से पढ़ना चाहिए।

b) एक शख़्स को इसे आहिस्ता और खुशूअ (गहराई और आजिज़ी तअज़ीम) के साथ पढ़ना चाहिए।

c) एक शख़्स को मुसहफ़ को देखते हुए इसे पढ़ना चाहिए और हर बंद को सही किरअत से पढ़ना चाहिए।

d) तजवीद के कानूनों के मुताबिक एक शख़्स को इसे पढ़ना चाहिए।

e) एक शख़्स को इस बात को दिमाग़ में रखना चाहिए के जो कुछ पढ़ा जा रहा है वो अल्लाह तआला का कलाम है।

f) एक शख़्स को कुरआन अल-करीम के अहकामात और ममनुआत की इताअत करनी चाहिए।

चौथी बुनियाद
नबियों पर ईमान रखना

व रूसुलिहीः इसका मतलब है "मैं अल्लाह तआला के रसूलों पर ईमान लाया।" नबी चूने हुए लोग होते हैं। उनका काम था लोगों को सच्चे रास्ते पर रहनुमाई करना जिसे अल्लाह तआला पसंद करता है। सारे नबी, आदम (अलैहिस्सलाम) से लेकर मुहम्मद (अलैहिस्सलाम) तक सबने एक जैसा ई मान पहुँचाया। ये ज़रूरी है इस बात को मानना के नबी (अलैहिस्सलाम) सात सिफ़ात रखते हैं

1- इसमअः वो कभी गुनाह नहीं करते। नबी कोई गुनाह नहीं करते, चाहे वो बड़ा हो या छोटा, किसी भी सच्चे मज़हब में, जिसकी मुमानियत थी या होगी।

2- अमीन [भरोसे वाले]ः नबी हर लिहाज़ से भरोसे वाले होते हैं। वो कभी किसी का भरोसा नहीं तोड़ते।

3- सिद्कः नबी अपनी बातों में, कामों में या आदात में ईमानदार लोग होते हैं। वो कभी झूठ नहीं बोलते।

4- फतानतः नबी बहुत ज़्यादा अकलमंद और माकूल लोग होते हैं। अंधेपन या बहरेपन जैसी कमियों के साथ कोई भी नबी नहीं बन सकता। सारे नबी मर्द हैं। और कोई औरत नबी नहीं थी।

5- तबलीग़ः नबी हर चीज़ सीखते थे वो वही (ज़ाहिर होती थी) के साथ वाज़ेह करते थे जो अल्लाह तआला की तरफ़ से आती थीं। कोई भी एहकामात या मुमानियतें जो उनके ज़रिए वाज़ेह की जाती थीं वो उनकी ज़ाती सोचें नहीं होती थीं। वो सारी चीज़ें पूरी पहुँचाते थे जिनका उन्हें हुकूम मिलता था बताने के लिए।

6- अदालत [इंसाफ़]ः नबी कभी ज़ुल्म या नाइंसाफ़ी नहीं करते। वो किसी की रज़ा के लिए इंसाफ़ के रास्ते से नहीं भटकते।

7- अमनुल-अज़लः वो नबूव्वत से हटाए नहीं जाएंगे। वो इस दुनिया में और आखिरत में भी नबी रहेंगे।

वो नबी जिनके ज़रिए एक नया मज़हब नाज़िल हुआ वो **रसूल** होते हैं। वो पैग़म्बर जिनके ज़रिए कोई नया मज़हब नाज़िल नहीं हुआ वो **नबी** होते हैं। नबी लोगों को पहले मज़हब की तरफ़ बुलाते हैं। नबियों में ईमान रखने का मतलब है इस बात पर ईमान रखना के वो सारे भरोसे वाले और ईमानदार लोग हैं जो अल्लाह तआला की तरफ़ से बनाए जाते हैं। इनमें से किसी एक से भी इंकार करना उन सबसे इंकार करने के बराबर है।

नबुव्वत काम करके, बहुत ज़्यादा इबादत करके, भूखे रहकर या परेशानियाँ सहकर हासिल नहीं की जा सकती। ये सिर्फ़ अल्लाह तआला की महरबानी और पसंद से हासिल होता है। नबियों (अलैहिस्सलाम) की गिनती का पता नहीं। ये माना जाता है के वो एक लाख चौबिस हज़ार से भी ज़्यादा हैं। उनमें से छः अव्वल रसूल हैं जिन्हें **अव्वलुल अज़्म** नबी कहते हैं। वो नबी

ये हैंः **आदम (एडम), नूह (नोअह), इब्राहिम (अब्राहम), मूसा (मोसिस), ईसा (जिसस) और मुहम्मद मुस्तफ़ा (अलैहिमुस्सलातु व असलाम)**। मंदरजाज़ेल तेंतीस पैग़म्बर मशहूर हैंः **आदम, इद्रीस, शीत (या शीस), नूह, हूद, स्वालिह, इब्राहीम, लूत, इस्माईल, इस्हाक, याकूब, यूसुफ़, अय्यूब, शुऐब, मूसा, हारून, खिज़र, यूशा बिन नून, इल्यास, अलयसा, जुलकिफल, शमून, इश्मोइल, यूनुस बिन मता, दाऊद, सुलेमान, लुक़मान, ज़करिया, याहया, उज़ेर, ईसा बिन मरयम, जुलकरनएन और मुहम्मद (अलैहि व अलैहिमु स-सलातु व अस सलाम)**।

इनमें से सिर्फ़ अठाईस के नाम क़ुरआन अल-करीम में लिखे हुए हैं। आलिम **जुलकरनएन लुकमान, उज़ेर और खिज़र** की नवूव्वत पर मुताफ़िक नहीं होते। ये भी पक्का नहीं है के अगर वो नबी हैं भी के नहीं। मकतूबात-ए-मासूमिया के दूसरी जिल्द के छत्तीसवें खत में लिखा हुआ है के खरी खबरों से वाज़ेह है के खिज़र अलैहिस्सलाम पैग़म्बर थे। और एक सौ बयासी खत में इस तरह लिखा हुआ हैः "खिज़र अलैहिस्सलाम (वकतन फवकतन) इंसानी शक्ल में ज़ाहिर होते हैं, और कुछ चीजे भी करते हे ये , ज़ाहिर नहीं करता के वो ज़िन्दा हैं।

अल्लाह तआला ने उनकी रूह को, साथ में दूसरे बहुत सारे पैग़म्बरों और वलियों की रूहों को इंसानी शक्ल में ज़ाहिर होने की इजाज़त दी है। उनको देखना ये सावित नहीं करता के वो ज़िंदा हैं।"

हमारे रसूल मुहम्मद अलैहिस्सलाम

आप अल्लाह तआला के पैग़म्बर हैं। मुहम्मद अलैहिस्सलाम अल्लाह तआला के प्यारे हैं। आप सबसे अफ़ज़ल और पैग़म्बरों में से सबसे आखिरी हैं। आप के वालिद का नाम अब्दुल्लाह है। रसूल-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) **12**/बारह रबी उल अव्वल में, पीर की रात में, सहर के वक्त जो **571** ए.डी की अप्रेल की बीस तारीख से मुतावकत रखती है। आपके वालिद जल्दी रहलत फरमा गए। जब आप छः साल के थे, आपकी माँ चल बसीं, और जब आप आठ साल के थे, तो आपके दादा चल बसे। फिर, आपके चाचा अबू तालिब ने आपकी परवरिश करी। जब आप पच्चीस साल के हुए, तो आपकी शादी हज़रत खदीजाह रज़ी अल्लाहु अन्ह से हो गई। उनसे आपकी चार बेटियाँ और दो बेटे हुए। आपके पहले बेटे का नाम कासिम था। इस वजह से, आपको **(अबुल-कासिम)** कहा जाता था, यानी कासिम का बाप। जब आप चालीस साल के हुए, तो आपको बताया गया के आप सारी इंसानी मखलूक और जिन्नातों के पैग़म्बर हैं। तीन साल बाद, आपने सबको ईमान की दावत देनी शुरू करदी। जब आप बावन साल के थे , तो एक रात, आपको मक्का से जेरूसलेम और वहाँ से आसमानों पर ले जाया गया। फिर आप ज़मीन पर वापिस आ गए। इस सफ़र को **(मेराज)** कहते हैं। इस मेराज में, आपने जन्नत, दोज़ख और अल्लाह तआला को देखा। इस रात में, रोज़ाना की पाँच नमाज़ें फर्ज़ हुई। अल्लाह तआला के हुकूम से आप मक्का से मदीना हिजरत कर गए। तारीखदानों के मुताबिक, वो **622** ए.डी का साल था। इस सफ़र को **(हिजरत)** कहते हैं। मुसलमानों का **(हिजरी शमसी)** कलैण्डर आपके मदीना के गाँव कुबा में दाखिल होने से शुरू हुआ, जोकि **20** सितम्बर थी, पीर में जो रबी उल अव्वल के महीने की आठ तारीख से मुतावकत रखती थी। मुसलमानों का **(हिजरी कमरी)** कलैण्डर भी इसी साल शुरू हुआ। उस साल ये मुहर्रम के

महीने से शुरू हुआ। बारह कमरी महीने एक कमरी साल के बराबर हैं। जो के चाँद के दुनिया के इरद गिर्द बारह बार घूमने की वजह से होते हैं। आप पीर में, **12** रबी उल-अव्वल, **11** ही**0.** **[632** ए.डी.] दोपहर से पहले रहलत फरमा गए। मंगल और बुध के बीच की रात में, जहाँ आपने रहलत फरमाई थी वहीं उसी कमरे में आपको तदफ़ीन कर दीया गया। जब आप गुज़रे, तो शमसी कलैण्डर के मुताबिक आपकी उमर इक्सठ साल थी और कमरी कलैण्डर के मुताबिक तिरेसठ साल थी।

मुहम्मद अलैहिस्सलाम गोरे थे। आप सारी आलमियत में सबसे ज़्यादा खुबसूरत थे। आप अपनी खुबसूरती हर किसी पर ज़ाहिर नहीं करते थे। जो कोई भी अपनी ज़िन्दगी में एक बार, चाहे अगर वो उसके सपने में ही क्यों न हो, आपकी खुबसूरती देख लेता था, तो वो अपनी ज़िन्दगी मस्ती और खुशियों में गुज़ारता था। आप किसी भी वक्त में, और कहीं भी सारे लोगों में अफ़ज़ल हैं। आपके सबब, तर्क, खुबसूरत अतवार, आपके अज़ा की ताकत सारी दूसरी इंसानी मखलूक से अफ़ज़ल थीं।

जबकि आप बच्चे थे, आपने दमसकस की तरफ़ दो सफ़र किए और आप एक जगह बसरा से लौट आए। आपने कभी दूसरी जगह का सफ़र नहीं किया। आप उम्मी थे। यानी, आप कभी स्कूल नहीं गए थे। आपने कभी किसी से लिखना पढ़ना नहीं सीखा। बहरहाल, आप सबकुछ जानते थे, यानी, जब भी आप कुछ जानना चाहते थे, अल्लाह तआला आपको बताते थे। एक फरिश्ता जिनका नाम जिब्रईल अलैहिस्सलाम (फरिश्तों के सरदार जिब्रईल) था आते थे और जो आप सीखना चाहते थे उसके बारे में बताते थे। आपका मुबारक दिल पाक रोशनी (नूर) से चमक उठता था जैसे के वो सूरज हो। जो इल्म आपके मुबारक दिल से खारिज हुआ वो चारों तरफ़, ज़मीनों पर, आसमानों में रेडियो की लहरों की तरह फैला। अब, वो आपकी कब्र से निकल रही हैं। आपकी ज़हूर की ताकत हर लम्हा बढ़ रही है। जिस तरह रेडियो वुसूल करने वाला

ज़रूरी है बरकी रू को वुसूल करने के लिए, आपका नूर पाने के लिए, ये ज़रूरी है के एक ऐसा दिल रखना जो आप पर ईमान रखता हो और प्यार करता हो और आपकी तकलीद करके पाक रहता हो। एक शख़्स ऐसे दिल के साथ इन नूर को हासिल करता है और फिर वो खुद भी नूर की रोशनी की इन किरनों को फैलाते हैं। ये आला लोग "**वली**" कहलाते हैं। जब एक जो उस वली को जानता हो और मुहब्बत रखता हो, एहतराम के साथ उनके सामने बैठता हो या उनके बारे में इज़्ज़त और मुहब्बत से सोचता हो, चाहे अगर वो उनसे दूर ही क्यों न हो; उस शख़्स का दिल नूर, फ़ैज़ हासिल करना शुरू कर देगा [मुर्शिद के दिल से मुरीद के दिल तक जो बहाओ उंदेता जाता है, जो इस तरह हरकत, पाकी, और बुलंदी हासिल करता है] और वो पुख्ता और परहेज़गार होना शुरू हो जाएगा। जैसे अल्लाह तआला ने शमसी तवानाई को हमारे मादी जिस्म को कुव्वत पहुँचाने के लिए एक सबब बनाया, उसने मुहम्मद अलैहिस्सलाम का दिल बनाया और उसमें नूर को निकालना हमारी रूहों और दिलों को पुख्ता करने का एक सबब बनाया और हमें इंसानियत में आला सतह/दर्जो पर पहुँचने वाला बनाया। जैसे सारी ग़िज़ाई चीज़ें जो इंसानी मखलूक को कुव्वत बख्शती हैं और उन्हें तवानाई फराहम करती हैं वो सब शमसी ताकत से बनती है; इसी तरह औलिया (वली की जमा) के वअज़, अलफ़ाज़ तहरीरें, जो लोगों के दिलों को और रूहों को कुव्वत बख्शती हैं वो रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम के मुबारक दिल के नूर निकल कर बनती हैं।

अल्लाह तआला ने एक फरिश्ते जिनका नाम जिब्रईल अलैहिस्सलाम है उनके ज़रिए **कुरआन अल-करीम** को मुहम्मद अलैहिस्सलाम पर उतारा। आपने इंसानी मखलूक को इस दुनिया के लिए और आने वाली के लिए ज़रूरी और फाएदेमंद काम/चीज़ें करने का हुकूम दिया। आपने नुकसान वाली चीज़ों की मुमानियत की। मज़मूई तौर पर, ये सारे अहकामात और ममनुआत "**इस्लाम का मज़हब**" कहलाते हैं, "**इस्लाम**", या "**अहकाम-ए इलाहिया**"।

मुहम्मद अलैहिस्सलाम का हर लफ़्ज़ सच्चा, कीमती और फ़ाएदेमंद है। एक शख़्स जो इस तरीके में ईमान रखे वो "**मोमिन**" और "**मुस्लिम**" कहलाता है। कोई भी जो मुहम्मद अलैहिस्सलाम की किसी बात पर ईमान न रखे या नापसंद करे वो "काफ़िर" कहलाता है, यानी बग़ैर ईमान वाला। अल्लाह तआला मोमिनों से प्यार करता है। वो एक मोमिन को हमेशा के लिए दोज़ख में नहीं रहने देगा। या तो वो उन्हें दोज़ख में नहीं भेजेगा या, चाहे अगर उनकी गलतियों की वजह से वो उन्हें दोज़ख में भेजेगा, बाद में वो उन्हें दोज़ख से छुड़ा देगा। एक काफ़िर कभी जन्नत में दाखिल नहीं होगा। वो सीधा दोज़ख में जाएगा। वो वहाँ से छोड़े नहीं जाएंगे। अल्लाह तआला में और प्यारे रसूलुल्लाह में ईमान रखना सारी रहमतों, सारी बरकतों, सारी अच्छाई की शुरूआत है। हज़रत मुहम्मद की नबुव्वत से इंकार करना सारी अज़ियतों, सारी परेशानियों और सारी बुराइयों की शुरूआत है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम' सारे नबियों से इल्म में, इरफ़ान में (ज़हानत, आदत), फ़हम में (समझ, अकल, मालूमात), यकीन में (तसदीक, मसबत इल्म), शऊर में, दिमाग़ी कुव्वत में, सख़ाफ़त में, आजिज़ी में, हिल्म में (नरमाई, मुलायम, मुअतदिल), रहमदिली में, सबर में, जोश में, मुहिब वतनी में, ईमानदारी में, भरोसे में, हिम्मत में, अज़मत में, बहादुरी में, फ़साहत में, बलाग़त में, दिलेरी में, ख़ूबसूरती में, वरा में (दुनियावी राहतों को नज़रअंदाज़ करना जिसके बारे में एक शख़्स को शुबा हो के क्या वो इस्लाम के ज़रिए रज़ामंदी दिए गए हैं), पाकिज़गी में, महरबानी में, इंसाफ़ पसंदी में, हया में (शर्मीलापन, पशेमानी की हिस), ज़ुहद में (दुनियानी राहतों को नज़रअंदाज़ करने का आला दर्जा), और तक़वा में (ममनुअ कामों को नज़रअंदाज़ करना) सबसे अफ़ज़ल हैं। आप ने अपने दोस्तों या दुश्मनों के ज़रिए किए नुकसानों को माफ़ कर देते थे। आप कभी बदला नहीं लेते थे। जब ओहद की जंग में काफ़िरों ने आपका मुबारक गाल ख़ून में कर दिया और आपका दाँत तोड़ दिया

तो, आपने अर्ज़ किया, "**ए मेरे रब! इन लोगों को सज़ा न देना! इनको माफ़ करदे क्योंकि ये लाइल्म/जाहिल हैं!**"

मुहम्मद अलैहिस्सलाम बहुत सारी खुबसूरत अख़लाकी सिफ़ात रखते थे। हर मुसलमान को उन्हें याद/सीखना चाहिए और अपने आपको इन अखलाकियात में ढालना चाहिए। इस तरह, वो इस दुनिया में और आखिरत/बाद में मुसिबतों और मुश्किलों से निजात हासिल कर लेते हैं और दोनों दुनिया के सरदार "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" की सिफ़ारिश हासिल कर लेते हैं। इसलिए, ये एक हदीस-ए शरीफ़ में वाज़ेह हैः "**अल्लाह तआला की अख़लाकी सिफ़ात हासिल करो।**"

असहाब-ए किराम

वो मुसलमान जिन्हें हमारे आका, रसूल का मुबारक चेहरे को देखना आपकी नरम आवाज़ सुनने का एज़ाज़ से नवाजा गया "**असहाब-ए किराम**" कहलाते हैं। नबियों के बाद सारी इंसानी मखलूक में सबसे अफ़ज़ल और सबसे इकबालमंद जो आते है और जो रहेंगे वो हज़रत **अबूबकर** (रज़ी-अल्लाहु तआला अन्ह) हैं। वो पहले खलीफ़ा हैं। उनके बाद, इंसानी मखलूक में सबसे अफ़ज़ल दूसरे खलीफ़ा हज़रत **उमर बिन खत्ताब** (रज़ी-अल्लाहु तआला अन्ह) हैं जो फ़ारूक-ए आज़म हैं, तीसरे खलीफ़ा रसूलुल्लाह के हज़रत **उस्मान बिन अफ्फ़ान** (रज़ी-अल्लाहु तआला अन्ह) हैं जो ईमान [यकीन; भरोसा] और हया [शर्मीले, पाकदामिन] और इरफ़ान [रोशनी, आदत] का एक ज़रिया हैं, फिर चौथे खलीफ़ा **अली बिन अबी तालिब** (रज़ी-अल्लाहु तआला अन्ह) हैं जिनके पाक हैरतअंगेज़ फ़ज़िलतें थीं और जो अल्लाह तआला के शेर हैं। जैसे के हदीस-ए-शरीफ़ से जाना गया, के इस दुनिया में सबसे बरतर औरतें **हज़रत फ़ातिमा, हज़रत ख़दीजा, हज़रत आएशा, हज़रत मरयम, हज़रत आसिया**

हैं। एक हदीस-ए-शरीफ़ में ये वाज़ेह हैः "**जन्नत की औरतों में फ़ातिमा सबसे अफ़ज़ह हैं। हसन और हुसैन जन्नत के जवान लोगों में सबसे अफ़ज़ह हैं।**

पहले चार खलीफ़ाओं के बाद, सबसे अफ़ज़ल असहाब-ए किराम **(अशारा-ए मुबश्शराह)** हैं। यानी, दस लोग जिन्हें जन्नत की खुशी की खबर दे दी गई। वो हैं हज़रत अबूबक्र सिदिदक, उमर-अल फारूक, उसमान बिन अफ़्फ़ान, अली बिन अबू तालिब, अबू उबेदा बिन जरराह, तलहा, ज़ुबेर बिन अवान, साद बिन अबू वक्कास, सैद बिन ज़ैद, अबदुररहमान बिन औफ़ (रिज़वानुल्लाही तआला अलैहिम अजमईन)। इसके बाद, जो **बदर की जंग** में मौजूद थे, **ओहद की जंग** में और फिर **बैत उर रिज़वान** में मौजूद थे।

ये हमारे लिए ज़रूरी वाजिब है के सारे असहाव-ए किराम के बारे में इज़्ज़त से बात करें जिन्होने रसूलुल्लाह की मदद करी और अपनी सारी ज़िंदगी, जाएदाद आपकी रज़ा के लिए गुज़ार दी। हमें कभी भी इस बात की इजाज़त नहीं है के उनके बारे में गलत तरीके से बात करें। उनके बारे में बेइज़्ज़त तरीके से बात करना बिदअत है।

कोई भी जो रसूलुल्लाह से प्यार करता है उसे आपके साथियों को भी प्यार करना चाहिए। ये एक हदीस-ए शरीफ़ में बयान हैः "**वो जो मेरे साथियों को चाहता है, इसलिए ऐसा करता है क्योंकि वो मुझे चाहता है। वो जो उन्हें नहीं चाहता वो मुझे नहीं चाहता। वो जो उन्हें नुकसान पहुँचाए वो मुझे नुकसान पहुँचाएगा। वो जो मुझे नुकसान पहुँचाएगा वो अल्लाह तआला को नुकसान पहुँचाएगा। वो जो अल्लाह तआला को नुकसान पहुँचाएगा वो पक्का तकलीफ पाएगा।**" एक दूसरी हदीस-ए शरीफ़ में आपने कहा, "**जब अल्लाह तआला अपने बन्दों में से किसी एक की हिमायत करता है जो मेरी उम्मत (कौम) का एक रूकन है, वो उसके दिल में मेरे असहाब की मुहब्बत कायम करता है। वो (यानी बंदा) उन सबको प्यार करता है जैसे वो खुद को प्यार करता है।**"

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम' ने जब रहलत फरमाई उस दिन मदीना में तेंतीस हज़ार सहाबी (साथी) थे। सारे सहाबियों की तादाद एक लाख चौबीस से भी ज़्यादा थी।

चार मस्लकों के इमाम और दूसरे आलिम

एतिकाद [यकीन; यकीन लिए जाने के उसूल] के इल्म के सिलसिले में सिर्फ़ एक ही सच्चा रास्ता है। ये **(अहल अस-सुन्नत वल-जमाअत)** का मसलक है। चार आला इंसान जो हमें मुहम्मद अलैहिस्सलाम का रास्ता सीखने का सबब बने, वग़ैर उसे तबदील किए हुए, बिगाड़े हुए। उन्होने दुनियाँ मुसलमानों को सच्चाई का रास्ता दिखाया। उनमें से सबसे पहले **इमाम-ए आज़म अबू हनीफ़ा नोमान बिन साबित** हैं। वो अफ़ज़ल इस्लामी आलिमों में से एक हैं। वो अहल-ए अस सुन्नत के सरबराह हैं। दूसरे **इमाम मालिक बिन अनस** हैं, तीसरे **इमाम मुहम्मद बिन इदरीस शाफ़ई** हैं, चौथे **इमाम अहमद बिन हंबल** (रहमत-अल्लाहु तआला अलैहिम अजमईन) हैं।

आज, जो कोई भी इन चारों इमामों में से एक की भी तक़लीद नहीं करता वो बड़े खतरे में है। वो सच्चे रास्ते से भटक गया है। इस किताब में, हम हनफ़ी मसलक के मुताबिक नमाज़ के फ़ज़ाइल [रसमी इबादत] की वज़ाहतें करेंगे। हमने आला हनफ़ी आलिमों की किताबों से इक्तेबास लिए हैं और उन्हें आसान किया है।

इन चारों इमामों के दो शागिर्द ने ईमान [यकीन; अकीदा] के तअल्लूक से बहुत आला दर्जा हासिल किया। इसलिए, एतिकाद में दो मसलक हैं। ईमान जो कुरआन अल-करीम के मुताबिक है और हदीस-ए-शरीफ़ जो इन दोनों शख़्सों के ज़रिए खबर दी गई। इन दोनों अफ़राद ने अहल-ए अस सुन्नत के ईमान का इल्म फैलाया वो जमाअत है जो दोज़ख से बची हुई है। उनमें से एक **अबू मंसूर-ए मातुरीदी** हैं, और दूसरे **अबूल हसन अली असअरी** हैं।

इन दोनों इमामों ने एक जैसा ईमान दूसरों तक पहुँचाया। उनके बीच में कुछ ही छोटे फर्क हैं, ताहम, ये फर्क अहम नहीं हैं। असल में वो एक जैसे हैं। इस्लाम के आलिमों की कुरआन अल-करीम में और हदीस-ए शरीफ़ में तारीफ़ की गई है। एक आयत-ए करीमा में, ये वाज़ेह है, जिसका मकसद हैः **"क्या वो बराबर हैं, जो जानते हैं और जो नहीं जानते?"** एक दूसरी आयत-ए करीमा में, ये वाज़ेह है, जिसका मकसद हैः **"ए मुसलमानों! पूछो और सीखो जो तुम नहीं जानते हो उनसे जो जानते हैं।"**

ये कई हदीस-ए शरीफ़ों में बयान हैः **"अल्लाह तआला और फरिश्तें और सारी मखलूक उसके लिए दुआ करती है जो लोगों को सीखाती है के अच्छा क्या है।" "यौमुल जज़ा/इंसाफ़ वाले दिन, पहले पैग़म्बर, फिर आलिम और फिर शहीद बीच में आएंगे।" "ए लोगों! जान लो के आलिमों को सुनने से इल्म हासिल होता है।" "इल्म सीखो! इल्म सीखना एक इबादत** [बंदगी] **है। इल्म के उस्ताद और सीखने वाले को जिहाद का इनाम मिलेगा।" "इल्म पढ़ाना दान/खैरात देने की तरह है। एक आलिम से इल्म सीखना रात के बीच में नमाज़ अदा करने जैसा है।" "इल्म सीखना ज़्यादा सवाब** [इनाम देने] **है बाकी सारी फाज़िल नफिली इबादत** [बंदगियों] **से, क्योंकि ये खुद के लिए और उनके लिए जिन्हें वो पढ़ा रहा है दोनो के लिए फ़ाएदेमंद है।" "कोई भी जो इल्म** [तालीम] **दूसरों को पढ़ाने के लिए सीख रहा है उसे सिद्दीक का ईनाम मिलेगा।" "इल्म एक खज़ाना है। इसकी चाबी पूछना और सीखना है।" "इल्म**

सीखो और पढ़ाओ।" "हर चीज़ का एक ज़रिया है। तकवे का ज़रिया [हराम से परे रहना, यानी ये मुमानियतें हैं, अल्लाह तआला के डर के ज़रिए] **आरिफ़ों के दिल हैं** [आला आलिम जो अपने दिल के ज़रिए अल्लाह तआला के बारे में और उसकी सिफ़ात के बारे में सोचता है]।" "**इल्म पढ़ाना गुनाहों के लिए भुगतान करना है।"**

पाँचवीं बुनियाद
कयामत में यकीन रखना

वल यौमिल आखिरीः इसका मतलब है "मैं यकीन लाया कयामत के दिन पर।" ये उस दिन शुरू होता है जब एक शख़्स मर जाता है। ये आखिरी दिन/यौमुलहश्र के आखिर तक चलेगा। इसे "आखिरी दिन" बोलते हैं क्योंकि इसके बाद कोई रात नहीं आएगी, या क्योंकि ये दुनिया के बाद आएगी। कयामत के दिन का पता नहीं है के कब आएगी। ताहम, हमारे आका, रसूल "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने इसकी बहुत सारी पेशरो और निशानियाँ बताई हैंः हज़रत मेहन्दी आएँगे। ईसा (अलैहिस्सलाम) आसमान से नीचे दमसकश की तरफ़ उतरेंगे। काडा दज्जाल/अद-दज्जाल (जिसे ईसाइयों के ज़रिए ईसा का मुख़ालिफ़ कहा जाता है) ज़ाहिर होगा। लोग कहते हैं याजूज और माजूज दुनिया को तकलीफ़ में ले आएंगे। सूरज मग़रिब से निकलेगा। ज़बरदस्त नागहानी ज़लज़ले आएंगे। मज़हबी इल्म भूला दिया जाएगा। बदकारी और बुराई बड़ जाएगी। सब तरफ़ हराम होने लगेगा। यमन में आग लगेगी। आसमान और पहाड़ तितर बितर हो जाएंगे। सूरज और चाँद काले/तारीक हो जाएँगे...

ये सच हे के कब्र में सवालात किए जाएंगे ।मुनकर और नकीर फरिश्तों को (कब्र में सवालात करने वाले फरिश्तें) मंदरजाज़ेल जवाबात देने चाहिए इन्हें याद करना चाहिए और बच्चों को भी सीखाना चाहिएः "मेरा रब अल्लाह तआला है।मेरे रसूल मुहम्मद अलैहिस्सलाम हैं।मेरा मज़हब इस्लाम है।मेरी किताब कुरआन अल-करीम है।मेरा किब्ला काबा-ए शरीफ़ है।मेरा ई मान का रास्ता अहल अस-सुन्नत वल-जमाअत है।कामों में मेरा रास्ता इमाम-ए आज़म अबू हनीफ़ा का रास्ता है।" उठाए जाने वाले दिन, हर किसी को उठाया जाएगा।वो सब एक मकाम जिसे महशर कहते हैं वहाँ इकट्ठा/जमा किया जाएगा।पाक (सालिह) नेक लोगों के अमाल नामे, उनके सीधे हाथ में दिए जाएंगे, और बुरे लोगों के उनके पीछे या उलटी तरफ़ से दिए जाएंगे।सिफ़ाए (शिर्क) बुत परस्ती और बेयकीनी (कुफ़्र) के, अल्लाह तआला हर गुनाह माफ़ कर देगा अगर वो चाहेगा, और अगर वो चाहे तो काबिले माफ़ी गुनाह के लिए भी अज़ाब दे सकता है।

आखिरत में, वहाँ एक **मिज़ान**, "तराज़ू" होगा, कामों और चाल चलन को तालने के लिए।वहाँ पर एक पुल होगा जिसे **सिरात** कहते हैं, जो अल्लाह तआला के हुकूम से दोज़ख के ऊपर बनाया गया है।वहाँ पर पानी का एक चश्मा होगा जिसे **हौज़-अल कौसर** कहते हैं जो हमारे आका मुहम्मद मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के लिए मखसूस है।

वहाँ पर शफ़ाअत [सिफ़ारिश] होगी।पैग़म्बर, वली, पाक लोग, आलिम, फरिश्तें, शहीद और वो जिन्हे अल्लाह तआला की तरफ़ से उन मुसलमानों के सग़ीरा और कबिरा गुनाहों को माफ़ कराने की सिफ़ारिश मिली हुई है जो बग़ैर उन्हें माफ़ कराए बग़ैर मर गए, और उनकी सिफ़ारिश कुबूल करली जाएगी।

जन्नत और **दोज़ख** अबी मौजूद हैं। जन्नत सात आसमानों के ऊपर है। दोज़ख सब चीज़ों से नीचे है। जन्नत के आठ दरवाज़े हैं। हर दरवाज़ा जन्नत के दूसरे दर्जे पर खुलता है। दोज़ख सात दर्जो का है। पहले दर्जे से सातवें दर्जे तक अज़ाब शदीद तर होता जाएगा।

छठी बुनियाद
कदर में अकीदा/ईमान रखना

व बिल कद्रि खेरिही व शर्रिही मिनल्लाहि तआलाः यानी, मैं कद्र पर ईमान रखता हूँ और ये के अच्छा (खैर) और बुरा (शर्र) अल्लाह तआला की तरफ़ से है। अच्छा और बुरा, फ़ाएदे और नुकसान इंसानी मखलूक पर सब अल्लाह तआला की इच्छा से आते हैं।

कद्र का मतलब है अल्लाह तआला की किसी चीज़ वुजूद में लाने की इच्छा। [मिसाल के तौर पर] कदर की तखलीक (यानी, जिसे वुजूद में लाने के लिए हुकूम दिया) को **(कदाअ)** कहते हैं। कदाअ और कद्र के लफ़ज़ों को एक दूसरे से रदोबदल करके इस्तेमाल किया जा सकता है।

अल्लाह तआला अपने बन्दों पर **इरादा-ए जुज़िया** [जानिबदार इच्छा] बख्शता है। वो अपने बंदों की इच्छाओं को अपनी तखलीक का एक सबब बनाता है। जब एक बंदा कुछ करना चाहता है, अगर अल्लाह तआला भी चाहे, वो उस चीज़ की तख़लीक कर सकता है। अगर एक बंदा उसे नहीं करना चाहता, तो अल्लाह तआला भी उसे नहीं चाहता और वो उस चीज़ की तखलीक नहीं करता।

वो जो अहल अस-सुन्नत के हुकूम को तफ़सील से सीखना चाहते है जो हमने अब तक मुख्तसरन वाज़ेह किया उन्हें फ़ारसी की किताब **(एतिकादनामे)** पढ़नी चाहिए जिसे हज़रत मौलाना खालिद बग़दादी, एक बहुत शरीफ़ इस्लामी आलिम और एक बड़े वली के ज़रिए लिखी गई है, और तुर्की मे किताब **(हरकेसे लाज़िम आलन ईमान)** हकीकत किताबवी के ज़रिए छापी गई। ये (एतिकादनामे) तुर्की तर्जुमा है, केमाहलि फेज़ुल्लाह एंफ़दी के ज़रिए तर्जुमा। ये एक बहुत फ़ाएदेमंद, बहुत खूबसूरत किताब है। इसके फ़ाएदे और रहमतें दोनों दुनियाओं में खुशी हासिल करने के लिए काफ़ी हैं।

अल्लाह तआला ने हर किसी को तवक्कुल [अल्लाह तआला में अपना भरोसा रखना] रखने का हुकूम दिया। ये आयत-ए करीमा, का मतलब "**तवक्कुल ईमान (अकीदे) की बुनियाद है**" इन अहकामात में से एक है। और दूसरी आयत-ए करीमा भी हैं। मिसाल के तौर पर, जिसका मतलब हैः **(अगर तुम ईमान रखते हो, अपना तवक्कुल अल्लाह में रखो!)** [सूरत-उल-माएदा], **(बेशक, अल्लाह उनको चाहता है जो तवक्कुल रखते हैं)** [सूरत आल-ए इमरान], **(अगर एक शख़्स अपना तवक्कुल अल्लाह में रख दे, तो वो उसके लिए काफ़ी है)** [सूरत उल तलाक], **(क्या अल्लाह तआला अपने बंदों के लिए काफ़ी नहीं है?)** [सूरत उज़ ज़ुमर]।

हमारे रसूल 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, "**उन्होने मेरी उम्मत के एक ग्रुप को दिखाया। उन्होने पहाड़ों और चौरस सतहों को घेरा हुआ था। मैं हैरान और खुश था के वो तादाद में इतने ज़्यादा थे। उन्होने मुझ से पूछा "क्या तुम खुश हो?", मेने कहा "हाँ"। उन्होने कहाः "इनमें से सिर्फ सत्तर हज़ार जन्नत में दाखिल होंगे बग़ैर सवालों के।" मेने पूछा वो कौन हैं। उन्होने जवाब दियाः "वो जो कोई जादू का इस्तेमाल नहीं करते, काला जादू नहीं करते और वो जो अल्लाह तआला के सिवा किसी दूसरे पर भरोसा नहीं करते। सामईन में से, हज़रत उकाशा खड़े हुए और बोलेः "या**

रसूलुल्लाह। दुआ करिए के मैं उनमें से एक हूँ। हमारे आका, रसूल ने फरमायाः "ए मेरे रब! इनको उनमें से एक बना दे!" दूसरा शख़्स खड़ा हुआ और यही दुआ माँगने की गुज़ारिश करी। आपने के कहाः "**उकाशा ने तुमसे ज़्यादा जल्दी दिखाई।**

तस्वक्कुल असबाब से जुड़ा हुआ और मुस्तकबिल के बारे में परेशान मत हो।

दूसरा हिस्सा
हमारी इबादतें और नमाज़
(रसूम इबादत)

इबादत (बंदगी) क्या है?

इबादत का मतलब है अल्लाह तआला जिसने हमें और हर एक चीज़ें को बनाया जो वुजूद में हैं , उसके अहकामात और ममनुआत को मानना, जो हमें हर वक्त वुजूद में रखता है, जो हमें ज़ाहिर और ग़ायब आफ़तों से बचाता है, जो हर लम्हा हम पर रहमतों की बारिशें करता है। ये इच्छा करना के एक पैग़म्बर, औलिया [अल्लाह तआला के प्यारे बन्दे] और आलिम की तरह हों, जिन्हें अल्लाह तआला का प्यार हासिल हुआ। ये है उनकी तकलीद करना।

लोगों के लिए ये इंसानियत के वास्ते फर्ज़ है के अल्लाह तआला का शुक्र अदा करना जिसने उनपर बेशुमार रहमतें भेजीं। ये एक फर्ज़ है जो सबब की वजह से हुकूम किया गया। लेकिन, लोगों के गलत दिमाग़ हैं। उनकी वुज़ूहात नामुकम्मिल हैं। उन्हें ऐसी कोई चीज़ें नहीं मिलीं जो अल्लाह तआला का शुक्रिया

अदा कर रही हों। शुक्र और इज़्ज़त करने के फराइज़ जबतक के वो अल्लाह तआला के ज़रिए न वाज़ेह किए गए हों, दरहकीकत बेइज़्ज़ती भी हो सकते हैं।

अब, लोगों के फराईज़, दिल, जुबान और जिस्म के ज़रिए किए गए, जो उन्होने अल्लाह तआला का शुक्र अदा करने के लिए अल्लाह तआला के ज़रिए बताए गए और उसके मुबारक रसूल के ज़रिए आम किए गए। गुलामों के फराईज़ जो अल्लाह तआला ने वाज़ेह और हुकूम किए वो "**इस्लाम**" कहलाते हैं। अल्लाह तआला का शुक्रिया अदा करना सिर्फ उसके रसूल के ज़रिए लाए गए रास्ते को मानते हुए मुमकिन हो सकता है। किसी और तरीके से अल्लाह तआला को शुक्रिया, या इबादतें न तो कुबूल होती ना अल्लाह पसंद करता हैं, इस रास्ते के मुताबिक नहीं होतीं। क्योंकि, वहाँ पर बहुत सारी चीज़ें हैं जिसे इंसानी मखलूक अच्छा और खुबसूरत समझती है, जबकि इस्लाम उन्हें बिल्कुल पंसद नहीं करता और वाज़ेह कर दिया के वो बदसूरत हैं।

इस तरह, साहिबे अकल लोग मुहम्मद अलैहिस्सलाम की तकलीद करते हैं अल्लाह तआला का शुक्रिया अदा करने के लिए और अल्लाह तआला की इबादत करते हैं।

वो जो मुहम्मद अलैहिस्साम की तकलीद करता हैं वो एक मुसलमान है। इबादत करने का मतलब है अल्लाह तआला का शुक्रिया करना, यानी, मुहम्मद अलैहिस्सलाम की तकलीद करना। इस्लाम दो हिस्सों का हैंः

1- वो चीज़ें जिसे दिल के ज़रिए यकीन किया जाए।

2- इबादतें जिन्हें दिल के ज़रिए और जिस्म के ज़रिए किया जाए। जिस्मानी इबादतों में सबसे अफ़ज़ल नमाज़ है। ये हर मुकल्लफ़ मुसलमान पर फर्ज़ है रोज़ाना की पाँच इबादतें अदा करना।

मुकल्लफ़ किसे कहते हैं?

बाशऊर मर्द और औरतें जो बालिग़ ऊमर को पहुँच चुके हों उन्हें "**मुकल्लफ़**" कहते हैं। मुकल्लफ़ अल्लाह तआला के अहकामात और ममुनआत को मानने के लिए ज़िम्मेदार हैं। हमारे मसलक में, एक मुकल्लफ़ शख़्स को पहले ईमान (यकीन) रखने का हुकूम दिया जाता है, फिर इबादत करने का। मज़ीद ये, मुकल्लफ़ अपने आपको हराम और मकरूह से परे रखते हैं जो के ममनुअ हैं।

अकल (समझ) एक समझने वाली ताकत है। इसको बुराई में से अच्छाई बताने के लिए तखलीक किया गया। अकल एक मिटर की तरह है। यह दो अच्छी चीज़ों में से एक बहतर में, और दो बुरी चीज़ों में से एक सबसे खराब में फर्क बताती है। एक माअकूल शख़्स सिर्फ वो नहीं होता जो ये समझे के अच्छा या बुरा क्या है, वो अच्छाई को पसंद करता है और बुराई को नज़रअंदाज़ करता है। अकल (समझ) एक आँख की तरह है, और इस्लाम रोशनी की तरह है। हमारी आँखे अंधेरे में चीज़ें नहीं देख सकतीं।

सिने बलूग़त असल में जब एक लड़का बारह साल से ऊपर हो जाता है तब शुरू होती है। लड़कों की बलूग़त/जवानी की आसार हैं। अगर ये आसार उसमें नज़र नहीं आएँ, वो बलूग़त के अंदर ही माना जाएगा जब तक के वो पंद्रह साल का न हो जाए।

सिने बलूग़त असल में जब एक लड़की नौ साल से ऊपर हो जाए तब शुरू होती है। अगर लड़की में नौ साल से ऊपर जवानी के आसार नज़र नहीं आएँ उसे बलूग़त की हालत में समझा जाएगा जबतक के वो पंद्रह साल से बरतर न हो जाए।

अफ़आल-ए मुकल्लफ़ीन (अहकाम-ए इस्लामिया)

इस्लाम के ज़रिए अहकामात और ममनुआत को "**अहकाम-ए शरीअ**" या "**अहकाम-ए इस्लामिया**" कहते हैं। उनको "**अफ़आल-ए मुकल्लफ़ीन**" भी कहते हैं। अफ़आल-ए मुकल्लफ़ीन की आठ खासियतें हैंः **फर्ज़, वाजिब, सुन्नत, मुस्तहब, मुबह, हराम, मकरूह, मुफ़सिद।**

फर्ज़ः अल्लाह तआला ने जो चीज़ें साफ और वाज़ेह तौर पर कुरआन अल करीम में हुकूम की हैं उन्हें फर्ज़ कहते हैं। फर्ज़ को अदा न करना हराम (ममनुअ) है। कोई भी जो फर्ज़ में यकीन नहीं रखता या उसे अहम नहीं मानता एक काफ़िर बन जाता है। फर्ज़ दो तरह के होते हैंः

फर्ज़-ए ऐनः इन्हें हर एक मुकल्लफ़ मुसलमान के ज़रिए अदा किया जाता है, जैसे के ईमान रखना, रस्मी वुज़ू अदा करना, गुस्ल (जिस्म को पाक करना) रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़े अदा करना, रमज़ान के महीने में रोज़ें रखना, अगर एक शख़्स मालदार बन जाए तो ज़कात देना, हज पर जाना। [बत्तीस फराईज़ और चौव्वन फर्ज़ ज़्यादा मशहूर हैं।]

1- फर्ज़-ए किफ़ायाः जब बहुत सारे दूसरे मुसलमान या एक मुसलमान इस तरह का फर्ज़ अदा करे, ये दूसरों के लिए कोई ज़रूरी नहीं के

इसे अदा करें। एक मुसलमान जिसने तुम्हें सलाम किया [इस्लाम के ज़रिए बताए गए तरीके से] उसे जवाब देना, लाश को धोना, जनाज़ा (मैय्यत) नमाज़ अदा करना, पूरा कुरआन अल-करीम याद करना, जिहाद करना, मज़हबी और साई न्सी इल्म को अपने कारोबार की ज़रूरत से ज़्यादा सीखना ये सब फर्ज़-ए किफ़ाया की मिसालें हैं।

2- वाजिबः ये अहकामात हैं जो इस तरह अदा किए जाते हैं जैसे के ये फर्ज़ हैं। उनकी दलील (सुबूत, शहादत, असल मतन) कुरआन अल-करीम में फर्ज़ की तरह साफ़ नहीं हैं। ये शकूक वाली दलील के साथ कायम हैं। वितर और ईद की नमाज़ें अदा करना वाजिब हैं; अगर एक मालदार है तो कुरबानी अदा करना, फितरा देना। वाजिब फर्ज़ की तरह हैं। एक वाजिब को छोड़ना तहरीमी मकरूह है वो जो इस हकीकत से इंकार करे के कोई चीज़ वाजिब है वो काफ़िर नहीं बन जाता। लेकिन, वो जो एक वाजिब अदा नहीं करता उसे दोज़ख में आज़ाब मिलेगा।

3- सुन्नतः चीज़ें जो अल्लाह तआला ने साफ़ हुकूम नहीं करी लेकिन काम जिन्हें हमारे रसूल ने तारीफ़ की या जिन्हें आपने आदतन किया हो या जिनकी आपने मनाही नहीं करी, फिर भी उनको करते हुए देखा गया, उन्हें सुन्नत कहते हैं। ये कुफ़्र (गुनाह) है सुन्नत को नापसंद करना। इनको न करना गुनाह नहीं है, जबतक के तुम इन्हें पसंद करो। बहरहाल, कोई भी जो इन्हें लगातार और बग़ैर उज़र के छोड़े दे वो इस बात का मुसतहिक है के उन्हें सवाब न मिले और वो इस लायक हैं के उन्हें मलामत की जाए। मिसाल के तौर पर, अज़ान कहना, इकामत कहना, जमाअत (समूह) में नमाज़ अदा करना, वुज़ू में मिस्वाक का इस्तेमाल करना, जब एक शख़्स की शादी हो जाए तो रात में दावत देना, अपने बच्चे की खतना कराना ये सब सुन्नत है।

सुन्नत की दो किस्में हैंः

सुन्नत-ए मुअक्किदाः ये मज़बूत सुन्नतें है जिन्हें हमारे आका, रसूल अलैहिस्सलाम ने लगातार अदा किया और मजबूरी में छोड़ा हो।मिसाल के तौर पर सुबह की सुन्नत नमाज़, ज़ोहर से पहली और आखिरी सुन्नत नमाज़ें, शाम की सुन्नत नमाज़ रात के वक्त की आखिरी सुन्नत नमाज़।ये सुन्नतें कभी नहीं छोड़नी चाहिए बग़ैर किसी ज़रूरी उज़र के।कोई भी जो उन्हें पसंद नहीं करता वो एक काफ़िर बन जाता है।

सुन्नत-ए ग़ैर मुअक्किदाः ये वो काम हैं जिन्हें हमारे आका रसूल अलैहिस्सलाम ने अक्सर किया हो इबादत के मकसद से।मिसाल के तौर पर, पहली सुन्नतें- हर एक में चार रकअतें हैं- दोपहर बाद की और रात की नमाज़ें।इनको बार बार छोड़ना कोई गुनाह नहीं है।ताहम, ये मलामत का बाइस है और सिफारिश से परे हो जाता है, अगर एक शख़्स बग़ैर किसी अच्छे उज़र के इसे छोड़ेगा तो उसे शफ़ाअत हासिल नहीं होगी।

सुन्नत-ए किफ़ायाः ये सुन्नतें हैं जिन्हें दूसरे मुसलमानों के ज़रिए छोड़ा गया अगर ये कुछ मुसलमानों के ज़रिए कर दी गई हों।मिसाल के तौर पर सलाम (सलामुन अलैकुम) देना या एतेकाफ़ में बैठना बिसमिल्लाह पढ़ना एक रस्मी वुज़ू करने से पहले खाना या पीना, या इसी तरह के मुबारक काम अदा करना।

4- **मुस्तहबः** इसे मंदूब या आदाब भी कहते हैं।ये सुन्नत-ए ग़ैर-ए मुअक्किदा है।ये चीज़ें हैं जिन्हें हमारे आका, रसूल अलैहिस्सलाम ने किया और पसंद फरमाया, चाहे अगर आपने उसे अपनी ज़िंदगी में एक या दो बार किया हो।मिसाल के तौर परः जब पैदा हुआ बच्चा सात दिन का हो उसका नाम रखना, बेटी या बेटे से नवाज़े जाने पर शुक्रिया अदा करने के तौर पर अक़ीका कुरबानी करना, अच्छे कपड़े पहनना, अच्छी खुशबू का इस्तेमाल करना।वो जो

ये अदा करते हैं उन्हें बहुत सारे सवाब (इनाम) मिलते हैं। अगर छोड़ दें, तो कोई गुनाह नहीं। इसके अलावा, सिफ़ारिश से भी महरूमी नहीं है।

5- मुबाहः काम जो न तो हुकूम किए गए और न ही ममनुअ किए गए। यानी, ये वो चीज़ें हैं जो न तो गुनाह से भरी या सवाब देने वाली वाज़े नहीं की गई। चीज़ें जो मुबाह हैं वो एक शख़्स को गुनाह या सवाब दिला सकती हैं ये उस शख़्स के इरादे पर मुनहसिर है जो इसे कर रहा है। मिसाल के तौर पर, सोना, मुखतलिफ़ हलाल कपड़े पहनना। अगर ये चीज़ें इस्लाम की फरमाबरदारी के लिए किए जाएँ, इस्लाम के उसूलों के लिए किए जाएँ, तो ये सवाब दिलाते हैं। जैसे के खाना या पीना इस इरादे से के ये सेहतमंद हैं और इबादात करना।

6- हरामः ये वो चीज़ें हैं जो कुरआन अल-करीम में अल्लाह तआला के ज़रिए साफ़ मना हैं। हराम काम करना या हराम चीज़ों का इस्तेमाल करना खास तौर से ममनुअ है। एक शख़्स जो कहता है किसी हराम चीज़ के लिए के ये "हलाल" है या "हराम" किसी हलाल चीज़ के लिए तो वो एक काफ़िर (मुन्कर) बन जाता है। जो चीज़ें हराम हैं उनको छोड़ना फर्ज़ है और वो बहुत सारे इनाम/सवाब लाती हैं।

हराम दो तरह के होते हैंः

हराम लि-एनिहीः कत्ल, मिलावर, सौडमी, शराब पीना और हर तरह की नफसी चीज़ें, झूठ बोलना, चोरी करना, सुअर, खून और सड़ा मांस खाना, औरतों का बाहर जाना उनके सिर, बाज़ू, टाँगे खुली हों, ये सब हराम हैं और बड़े गुनाह हैं। अगर एक शख़्स इन गुनाहों को करने से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ले, या ये यकीन करे के ये हलाल हैं, या इस हकीकत को कोई अहमियत न दे के अल्लाह तआला ने इनको हराम करार दिया है, तो वो एक काफ़िर बन जाता है। अगर वो इनको करता है अगरचे वो यकीन रखता है के ये हराम हैं

और वो सज़ा से भी डर रहा हो, तो वो एक काफ़िर नहीं बन जाता। बहरहाल, दोज़ख के अज़ाब का मुस्तहिक होता है। अगर वो मुस्तकिल हराम करता रहे और पछताए नहीं, तो वो उसकी आखिरी सांस में ईमान (यकीन) को खो देगा।

हराम लि-ग़ैरिहीः असल माहियत में ये चीज़ें हलाल हैं। अगरचे, दूसरों के हुकूक की वजह से ये हराम बन जाते हैं। मिसाल के तौर पर, दूसरे शख़्स के बाग़ में बग़ैर उसके मालिक की इजाज़त के घुस जाना और पेड़ों के फल खाना, उसके घर की चीज़ों को और पैसों को चुराना और इस्तेमाल करना, अमानत की चीज़ों को ज़ब्त कर लेना, रिश्वत सूद या जुए के ज़रिए पैसा कमाना। अगर कोई जो इन्हें करता है बिस्मिल्लाह कहता है या कहे ये हलाल है, तो वो एक काफ़िर नहीं बन जाता। इस वास्ते, के वो उस शख्स के हुकूक हैं, उसका हक बनता है के वो उन्हें हासिल करे। इंसाफ़ वाले दिन, सातसों रस्मी नमाज़ों की रकाअत जो के जमाअत (इजतमाअ) में पढ़ी गई अल्लाह तआला के ज़रिए ले ली जाएँगी चाँदी में साढ़े पाँच जई के वज़न के हुकूक के लिए और ये इनाम वो उस हुकूक के मालिक को दे देगा। हराम से दूर रहना इबादत करने से ज़्यादा सवाब लेकर आता है। इसलिए हमें हराम याद करने चाहिए और उन्हें नज़रअंदाज़ करना चाहिए।

7- मकरूहः ये वो चीज़ें हैं जिन्हें अल्लाह तआला और मुहम्मद अलैहिस्सलाम ने नापसंद फरमाया है। ये चीज़ें इबादत के सवाब को कम कर देती हैं।

मकरूह दो किस्म के हैंः

मकरूह तहरीमीः मकरूह तहरीमी एक वाजिब की ग़लती है, और ये हराम के नज़दीक है। इनको करना अज़ाब का सबब है। ये ऐसी चीज़ें हैं जैसे एक रस्मी नमाज़ अदा करना सूरज निकलने के दौरान, सूरज गुरूब होते वक्त

और उस वक्त जब सूरत ज़वाल [दोपहर के बीच, वो वक्त जब सूरज उफ़क से अपना सबसे ऊँचा मकाम छोड़ दे और जिसके बाद दोपहर की नमाज़ का वक्त शुरू हो जाता है] पर हो। कोई भी जो मकरूह तहरीमी जानबुझकर करे वो बाग़ी और गुनाहगार बन जाता है। वो दोज़ख में अज़ाब पाता है। एक शख़्स के लिए जिसने वाजिबात छोड़े हों या मकरूह तहरीमी किया हो उस नमाज़ में तो ये वाजिब है के वो नमाज़ को दोबारा अदा करे। अगर उसने ये काम गलती से किए हों या भूलने की वजह से, तब ये ज़रूरी है के सज्दा-ए सहू [नमाज़ के आखिर में दो सज्दे करने के हैं, सलाम करने से पहले, या सीधी तरफ़ सलाम करने के बाद, या चाहे दोनो तरफ़ सलाम करने के बाद] अदा किया ताकि कुछ गलतियाँ जो नमाज़ अदा करते वक्त हो गई हों वो माफ़ कर दी जाएँ।

मकरूह तन्ज़ीहीः ये काम मुबाह के नज़दीक हैं, यानी हलाल, या वो काम जो करने से बहतर है के तुम न करो। जैसे के ऐसे कामों को छोड़ना जो सुन्नत-ए ग़ैर-ए मुअक्किदा या मुस्तहब हैं।

8- **मुफ़सिदः** हमारे मज़हब में, ये वो चीज़ें है जिन्होने मंसूख किया, एक जाइज़ काम को बातिल करार दिया या इबादत शुरू करना जैसे के ईमान, नमाज़, शादी, हज, ज़कात, खरीदारी मिसाल के तौर पर, ये कुफ़्र है के अल्लाह तआला या कुरआन अल-करीम के लिए कुफ़्र बकना, ये ईमान को खत्म करते हैं। नमाज़ अदा करते वक्त हँसना वुज़ू और नमाज़ दोनों को तोड़/फ़ासिद कर देता है। रोज़े के दौरान जानबुझकर कुछ खाना या पीना रोज़े को तोड़ देता है।

वो जो वाजिबात और सुन्नतें अदा करते हैं और वो जो अपने आपको हराम और मकरूहात से परे रखते हैं उन्हें अजर मिलेगा, यानी सवाब (इनाम, नेमत) मिलेगा। वो जो हराम और मकरूहात करते हैं और वो जो फ़र्ज़ और वाजिबात अदा नहीं करते वो गुनहागार होते हैं। एक हराम से परे रहने

का सवाब एक फर्ज़ को अदा करके सवाब हासिल करने से भी कई गुना ज़्यादा है। एक फर्ज़ को अदा करने का सवाब मकरूह से परे रहने के सवाब से ज़्यादा है। एक मकरूह से परे रहने का सवाब एक सुन्नत अदा करके सवाब हासिल करने से ज़्यादा है। अल्लाह तआला के ज़रिए जो मुबाह पसंद किया जाता है उन्हें "**खैसरात**" और "**हसनात**" कहते हैं। अगरचे जो ये करते हैं उन्हें सवाब दिया जाता है, ये सवाब एक सुन्नत को अदा करके सवाब मिलने से कम है।

इस्लाम के दुश्मन

इस्लाम के दुश्मन इस्लाम को खत्म करने के लिए अहल अस-सुन्नत की किताबों पर हमला कर रहे हैं। अल्लाह तआला ने कुरआन अल-करीम की सूरह माएदा की बय्यासी आयत में वाज़ेह किया, जिसका मतलब है, "**इस्लाम के सबसे सख्त दुश्मन यहूदी और बुत परस्त हैं।**" बुत परस्त वो काफ़िर हैं जो बुतों, मुर्तियों की पूजा/इबादत करते हैं। ये ज़ाहिर है के ज़्यादातर ईसाई बुत परस्त है। एक यहूदी, जिसका नाम अब्दुल्लाह बिन सेबे था यमन का उसने अहल अस सुन्नत के खिलाफ़ एक फ़िरका कायम किया। ये शित्ते अपने आपको **(अल्वी)** कहते हैं। अंग्रेज़, बिट्रीश जो इस्लाम के दुश्मन हैं, अपनी सारी शाही ताकत के साथ, सारे सोने जो उन्होने हिन्दुस्तान और अफ़्रिका से, खुनी जंगों में जमा किया था, अपनी झूठ से भरी हुई किताबों के साथ जिन्हें वो **(वहाबिइस्म)** कहते हैं अहल अस सुन्नत पर हमला करते हैं। हम सबको/हर एक को जो लामहदूद खुशियाँ हासिल करना चाहते हैं उन्हें सलाह देते हैं के इन शित्ते या वहाबियों की किताबों से धोखे में न आएँ और अपने आपको अहल अस-सुन्नत के आलिमों की किताबों में जो इल्म है उसके मुताबिक ढालें।

इस्लाम की बुनियादें

वहाँ पर पाँच ज़रूरी (यानी, हर हाल में अदा करना) बुनियादी फराईज़ हैं मुसलमानों के लिए जो इस्लाम के दाएरे में आएँगे।

1- इस्लाम की पाँच बुनियादों में से सबसे पहला है **(कलिमात अश-शहादा)** का कहना; यानी, ये कहना, **(अशहदु अन ला इलाहा इल्लालह व अशहदु अन ल मुहम्मद अब्दुहु व रसूलुहू)**। दूसरे लफ़ज़ों में, एक बाशअर शख़्स जो बलूग़त की उमर को पहुँच चुका हो और जो बात कर सकता हो उसे ज़ुबानी कहना चाहिए, **(ज़मीन पर, या आसमान में, वहाँ कोई नहीं है लेकिन अल्लाह तआला इबादत के लायक है। वाहिद वाजिबुल वजूद इबादत के लायक अल्लाह तआला है।)** वो वाजिबुल वजूद है। उसके पास सारी फज़िलतें हैं। उसमें कोई ऐब नहीं। उसका नाम **(अल्लाह)** है। एक शख़्स को इस पर यकीनन ईमान रखना चाहिए। दोबारा, वो शख़्स, जिसका सुर्ख़ी मायल सफेद, चमकदार, खुबसूरत चेहरा था काली भों और काली आँखों, चोड़े माथे, हलीम मिज़ाज, शिरिन ज़ुबान मक्का में अरबिया में पैदा हुए हाशिमी खानदान में, **(मुहम्मद अब्दुल्लाह के बेटे एक बन्दे और पैग़म्बर, यानी अल्लाह तआला के रसूल)**। आपकी माँ वहाब की बेटी हज़रत आमिना थीं।

2- इस्लाम की दूसरी बुनियाद **फ़र्ज़ी इबादत [नमाज़, सलात]** अदा करना पाँच बार एक दिन में उसकी शर्तो और फराईज़ के मुताबिक जब नमाज़ का वक्त आ जाए। हर मुसलमान के लिए रोज़ाना पाँच नमाज़ें अदा करना फर्ज़ हैं हर सलात का वक्त शुरू होने के बाद और इन्हें उसके मुकर्रर वक्त में अदा किया जाए। फर्ज़ नमाज़ उसके फराईज़, वाजिबात और सुन्नतों को ध्यान में

रखते हुए, अल्लाह तआला की तरफ़ दिल लगाकर और मुकर्रर वक्त पूरा होने से पहले अदा करनी चाहिए। कुरआन अल-करीम में फर्ज़ नमाज़ को **(सलात)** कहते हैं। अदबी तौर पर, सलात के मआनी हैं आदमी का नमाज़ पढ़ना, फरिश्तों का इस्तिग़फार करना (आदमी की तरफ़ से माफ़ी के लिए मिन्नत करना), और अल्लाह तआला की हमदर्दी और रहमदिली। इस्लाम में **(सलात)** के मआनी है कुछ हरकात करनी, इल्म अल-हाल की किताबों में दिखाई गई खास चीज़ों की तिलावत करना। सलात **(अल्लाहु अकबर)** के लफ़ज़ से शुरू होती है, जिसे **(तकबीर अल-इफ़तिताह)** कहते हैं, और कान तक हाथ उठाने के बाद कहे नाफ़ के नीचे तक हाथ बाँधने तक (आदमियों के लिए)। ये सीधे और उल्टे कंधों की तरफ़ सिर घुमाकर सलाम के साथ खत्म होती है "अस-सलामु..." कहकर आखिरी कअदे में।

3- इस्लाम का तीसरा रूकन "**अपने माल की ज़कात देना**" है। इसका अदबी मतलब है पाकी, तारीफ़ करना, अच्छा और खूबसूरत बनना। इस्लाम में, ज़कात का मतलब है, एक शख़्स के लिए जिसके पास उसकी ज़रूरत से ज़्यादा ज़कात का माल हो और एक खास कीमत जिसे **(निसाब)** कहते हैं अपनी मिलकियत का एक मखसूस हिस्सा अलग करके ऐसे मुसलमानों को देना जिनका ज़िकर कुरआन अल-करीम में हुआ है बग़ैर उन्हें मलामत किए हुए। ज़कात सात तरह के लोगों को दी जा सकती है। चारों मसलकों में चार किस्म की ज़कात है; सोने और चाँदी की ज़कात, तिजारती माल की ज़कात, मवैशी पर ज़कात जो जानवर आधे साल से ज़्यादा खेतों में चर रहे हों, और सारी किस्म की ज़रूरत की चीज़ें जो मिट्टी से निकल रही हैं उनकी ज़कात। ये चौथी किस्म ज़कात की **(अश्र)** कहलाती है, जैसे ही फसल पक जाए वैसे ही ज़कात दे देनी चाहिए। बाकी तीनों एक साल गुज़रने के बाद दी जाती है जब वो निसाब की कीमत को पहुँच जाएँ।

4- इस्लाम की चौथी बुनियाद "रमज़ान के महीने के हर दिन रोज़ा रखना" है। रोज़े को **(सोम)** कहते हैं। सोम का मतलब है किसी चीज़ को किसी दूसरी चीज़ से हिफ़ाज़त करना। इस्लाम में, सोम के मआनी हैं अपने आपको तीन चीज़ों से बचाना रमज़ान के [दिनों के दौरान] महीने में, जैसे के अल्लाह तआला के ज़रिए हुकूम दिया गयाः खाना, पीना और सुहबत यानी हमबिस्तरी। रमज़ान का महीना आसमान में नया चाँद दिखने के साथ ही शुरू होता है। ये कलैण्डर में बताए गए वक्त के मुताबिक अनुमानित नहीं किया जा सकता।

5- इस्लाम की पाँचवी बुनियाद **(एक शख़्स जो अपनी ज़िन्दगी में एक बार, हज [बड़ी ज़ियारत] करने के लायक हो)**। साहिबे हेसियत शख़्स को ज़िन्दगी में एक बार, बशर्त ये के वो सेहतमंद हो और रास्ता महफूज़ हो, जिसके पास मक्का के शहर में जाने और वापिस आने के पैसे हों इसके अलावा अपने पीछे इतना माल छोड़ जाए के उसके आने तक उसके कुंबे के गुज़ारे के लिए माल काफ़ी हो, उसके लिए काबा के चारों तरफ़ तवाफ़ अदा करना और अराफ़ात के मैदान में वकफ़ा करना फर्ज़ है।

ऊपर बताई गई पाँचों बुनियादों/रूकन में से सबसे आला **कलिमात अश-शहादा** कहना है और उसके मआनी में यकीन रखना है। उसके बाद आला सलात अदा करना है। इसके बाद रोज़ा है। उसके बाद/फिर हज है। सबसे आखिरी ज़कात देना है। ये इतेफ़ाक राए से पक्का है के कलिमात अश-शहाद सबसे आला/अव्वल है। बाकी चारों का सिलसिला/तवातर, ज़्यादातर उल्माओं ने वही कहा है जो हमने ऊपर बताया है। कलिमात अश-शहादा इस्लाम की शुरूआत में, पहले फर्ज़ बना। सलात हजिरा के एक साल और कुछ महीने पहले नुब्वुवत के बारहवें साल में मेराज की रात में एक दिन की पाँच नमाज़ें फर्ज़ हुई। रमज़ान के महीने के रोज़े शाबान के महीने में फर्ज़ कर दिए गए हिजरी के दूसरे साल में। ज़कात देना रमज़ान के महीने में फर्ज़ किया गया, उसी

साल मे जब रोज़ें फर्ज़ किए गए। ओर हज को हिजरा के नौवें साल में फर्ज़ कर दिया गया।

तीसरा हिस्सा

नमाज़ अदा करना

हमारे मज़हब में, ईमान (अक़ीदा) रखने के बाद, सबसे कीमती इबादत नमाज़ (फर्ज़ नमाज़) है। नमाज़ मज़हब का अहम सतून है। नमाज़ सारी इबादतों से अफ़ज़ल है। ये इस्लाम की दूसरी बुनियाद है। अरबी में इसे **(सलात)** कहते हैं। असल में, सलात का मतलब दुआएँ, रहम और अल्लाह तआला से माफ़ी माँगने के हैं। क्योंकि ये तीनों मआनी नमाज़ में मौजूद हैं, इसलिए इसे सलात कहते हैं।

अल्लाह तआला जिस चीज़ को सबसे ज़्यादा पसंद करता है और बार बार उसका हुकूम देता है वो है पाँच वक्त की रोज़ाना की नमाज़। ईमान रखने के बाद, सबसे ज़्यादा अहम अहकाम अल्लाह तआला का मुसलमानों के लिए वो है नमाज़। नमाज़ हमारे मज़हब में सबसे पहला हुकूम किया फर्ज़ है। यौमुल हश्र/इंसाफ़ वाले दिन, ईमान के बाद, पहला सवाल नमाज़ पर होगा। वो जो रोज़ाना की पाँच वक्त की नमाज़ों का हिसाब सही रखेगा, वो सारी मुश्किलों से आज़ाद रहेगा और नाखत्म होने वाली निजाअत हासिल करेगा। दोज़ख की आग से बचने के लिए और जन्नत में पहुचना नमाज़ का सही अदा करने पर मुनहसिर करता है। सही नमाज़ अदा करने के लिए, सबसे पहले हमे बेऐब वुज़ू अदा करना चाहिए, फिर बग़ैर सुस्ती दिखाए जल्दी से नमाज़ अदा करनी चाहिए। हमें कोशिश करनी चाहिए के नमाज़ की हर हरकत को सही अदा करें।

सबसे अफ़ज़ल इबादत जो सारी दूसरी इबादात को अपने आप में जमा करलेती है और आदमी को सबसे ज़्यादा अल्लाह तआला तक पहुँचाती है वो नमाज़ है। हमारे रसूल 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(नमाज़ ईमान का महराबदार-पत्थर है। वो जो नमाज़ अदा करता है वो अपना ईमान बनाता है। वो जो नमाज़ अदा नहीं करता वो अपना ईमान गिरा देता है)**। अपनी नमाज़ सही अदा करने से, वो अपने आपको गंदी, बुरी चीज़ों से बचाता है। दरहकिकत, कुरआन अल-करीम की सूरत-उल-अंकबूत की पेंतालीसवीं आयत में वाज़ेह है, जिसका मतलब हैः **(एक नमाज़ की इबादत सही तरीके से अदा की गई वो बेशक आदमी की फहश (गंदे) और मुंकर [मकरूह हरकात] को करने से बचाएगी])**

एक नमाज़ जो एक शख्स को बुरी चीज़ें करने से दूर रखने का सबब न बन पाए तो वो एक सही नमाज़ नहीं है। वो ज़ाहिर में नमाज़ है। ताहम, जब तक सही अदा नहीं की जाएगी, हम ज़ाहिरन भी करके इसे नहीं छोड़ सकते। इस्लाम के आलिमों ने कहाः (चाहे अगर कुछ पूरे तौर पर न किया गया हो, एक शख़्स फिर भी इसे पूरे तौर पर खोना नहीं चाहिए)। हमारा रब, जो लामहदूद रहमतें देता है, शायद ज़ाहिर को असलियत की तरह कुबूल करले। एक शख़्स को ये नहीं कहना चाहिए "नमाज़ को इस तरह गलत तरीके से पढ़ने के बजाए, इसको बिल्कुल अदा मत करो!" एक शख़्स को इस तरह कहना चाहिए "नमाज़ को इस तरह गलत तरीके से पढ़ने के बजाए, इसको सही तरह से अदा करो!" हमें इस मतलब को अच्छे से समझना चाहिए।

नमाज़ को जमाअत (मजलिस/इजतमाअ) में पढ़ना चाहिए। जमाअत से नमाज़ अदा करना अकेले में नमाज़ अदा करने से ज़्यादा सवाब दिलाने वाला है। नमाज़ में, हर अज़ू आजिज़ी दिखाए और दिल अल्लाह तआला के डर में हो। नमाज़ ही वाहिद वो चीज़ है जो आदमी को इस दुनिया में और आने वाली दुनिया की आफतों और मुश्किलों से बचाएगी। सूरह मोमिनून के शुरू में

अल्लाह तआला ने वाज़ेह किया, जिसका मतलब हैः **(किसी भी हाल में ईमान वाले महफ़ूज़ रहेंगे। ये वो होगें जो अपनी फर्ज़ नमाज़ें खुशुअ [गहराई और आजिज़ तअज़ीम] के साथ अदा करते हैं।**

जब नमाज़ एक खतरनाक और खौफ़नाक जगह पर की जाए, तो वो ज़्यादा कीमती हो जाती है। जब दुश्मन हमला करते हैं, कुछ इकदामात फ़ौज के ज़रिए लिए गए बहुत कीमती हो जाते हैं। इस वास्ते, जवानों के ज़रिए इबादत ज़्यादा कीमती है। क्योंकि, वो अपने नफ़स की बुरी इच्छाओं को तोड़ते हैं और वो नफ़स के बेहकावे इबादत न करो का मुकाबला करते हैं।

जवानी के दौरान, तीन दुश्मन नहीं चाहते के वो इबादतें करें। वो हैं तुम्हारी नफ़स, शैतान, और बुरी सोहबत (बुरे दोस्त)। सारी बुराई की शुरूआत बुरी सोहबत है। अगर जवान शख़्स इन बुरी इच्छाओं को न माने जो इनसे आती हैं, और वो अपनी फर्ज़ नमाज़ अदा करते रहें और अपनी इबादात नहीं छोड़ें, तो ये बहुत कीमती है। वो एक बुजुर्ग शख़्स से ज़्यादा सवाब कमा सकते हैं। उनकी थोड़ी/कुछ इबादात बहुत सारे इनाम दिला सकती है।

किसके लिए नमाज़ एक फर्ज़ है

(हुकमे-इलाही)

हर मुसल्मान मर्द और औरत के लिए, जो बाशअर और बलूग़त की उमर को पहुँच चुके हैं, उन पर रोज़ाना की पाँच नमाज़ें फर्ज़-ए-अएन हैं। यहाँ पर तीन शर्तो हैं नमाज़ के फर्ज़ होने के लिएः **1-** एक मुसलमान होना **2-** बाशअर होना **3-** सने बलूग़त को पहुँचना।

हमारे मज़हब में, जवान बच्चे जो बाशअर नहीं हुए हैं और जो बलूग़त की उमर को नहीं पहुँचे हैं वो नमाज़ अदा करने के लिए ज़िम्मेदारी नहीं हैं। लेकिन, वालदेन को अपने बच्चों को मज़हबी इल्म देना चाहिए और उन्हें इबादत करने की आदत डालनी चाहिए। हमारे रसूल 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया, **(आप सब मवेशियों के चरवाहों की तरह हैं) इसलिए जो तुम्हारे घरों में हैं और तुम्हारे हुकूम में हैं उन्हें दोज़ख से बचाओ, जिस तरह चरवाहा अपने जानवरों/मवेशी को बचाता है! तम्हें उन्हें इस्लाम सीखाना चाहिए! अगर तुम ऐसा नहीं करते, तो तुम इसके लिए ज़िम्मेदार ढहरोगे।)** एक दूसरी हदीस-ए शरीफ में, ये बयान हैः **(सारे बच्चे इस्लाम के लिए ठीक और काबिल पैदा होते हैं। बाद में उनके माँ-बाप उन्हें ईसाई, यहूदी या बेमज़हबी बना देते हैं)**।

इसलिए, हर मुसलमान का सबसे पहला फर्ज़ है अपने बच्चों को इस्लाम सीखना कुरआन करीम की तिलावत कराना, नमाज़ अदा करना और ईमान और इस्लाम की शर्ते सीखाना। वालदेन/माँ-बाप जो चाहते हैं के उनका बच्चा एक मुसलमान बने और इस दुनिया में और आखिरत में संजीदगी हासिल करे, तो अपना ये फर्ज़ पहले अदा करना चाहिए। इस वास्ते, हमारे बुज़ुर्गवार ने कहाः **(एक पेड़ को झुकाया जा सकता है जबकि वो जवान और ताज़ा हो)**। अगर एक शख़्स एक पेड़ को झुकाने की कोशिश जब वो बूढ़ा हो, तो वो टूट सकता है। ये नुकसदायक हो सकता है।

कोई भी बच्चा जिसे इस्लामी इल्म न पढ़ाया गया हो और जिसे खूबसूरत अखलाकियात न दिए गए हों वो बुरे लोगों के बहकावे में जल्दी आ जाते हैं। वो अपने माँ-बाप, मुल्क और कौम के लिए नुकसानदेह हो सकता है।

जो लोग नमाज़ अदा करते हैं उनके दर्जे

कहानीः नमाज़ जिसने एक शख़्स को जेल से आज़ाद कराया

खोरासन के गवर्नर, अबदुल्लाह बिन ताहिर, बहुत इंसाफ़ वाले/ ईमानदार थे। एक दिन उनके Gendarmes ने गवर्नर को खबर दी के उन्होने कुछ चोर पकड़े हैं। उन चोरों में एक भाग गया। चोर के बजाए, हिरासत मे एक लुहार को पकड़ लिया गया, जो निशाबूर गया था, और उस रात अपने घर वापिस जा रहा था। चोरों के उसे भी वो गवर्नर के पास ले गए, जिसने फिर उन्हें बंदी बना लेने का हुकूम दिया! झेल में, लुहार ने वुज़ू किया और नमाज़ अदा करी। अपने हाथ बाँधते हुए, उसने दुआ की, "ए मेरे अल्लाह! मुझे बचा! तू अकेला जानता है के मैं बेगुनाह हूँ। तू अकेला ही मुझे इस काल कोठरी से निकाल सकता है। ए मेरे अल्लाह! मुझे बचा!" उस रात गवर्नार ने चार मज़बूत लोगों को सपने में देखा, जो उसके पास आए और उसका तख्ता शाही पलटने ही वाले थे, जब वो जाग गया। फौरन, उसने वुज़ू किया और दो रकाअत नमाज़ अदा की। वो वापिस सोने चला गया। दोबारा उसने सपना देखा के चार लोग उसकी तखते शाही पलटने ही वाले थे, के वो जाग गया। उसको ये बात समझ आ गई के उसने किसी के साथ नाईन्साफ़ी कर दी है जो बदले में उसके खिलाफ़ दुआ माँग रहा है। दर हक़ीकत, एक नज़म का कहना हैः

हज़ारों तोपें और बंदूकें कभी नहीं कर सकतीं
जो सुबह सवेरे आँसू करेंगे।
अक्सर दुश्मन के खौफ़नाक नेज़े
मोमिन की नमाज़ के ज़रिए ख़ाक हो जाते हैं।

ए हमारे अल्लाह! तू अकेला अफ़ज़ल है! तू इतना अफ़ज़ल है के बड़ा भी, यहाँ तक के लाग़र भी, सिर्फ़ तुझ से ही माँगते हैं जब वो मुश्किल में आते हैं। सिर्फ़ वो जो तुझसे माँगता है अपनी इच्छा को हासिल कर सकता है।

उसी देर रात उसने जेल के निगेहबान को बुलाया और उससे पूछा के क्या कोई था जिसे बेकसूर जेल मे रखा गया है। जेल के दारूग़ा/निगेहबान ने कहा, "मुझे नहीं पता। लेकिन यहाँ कोई है जो नमाज़ अदा कर रहा है और बहुत सारी दुआएँ बोल रहा है। वो रो भी रहा है।" इस पर, लुहार को उसके पास लाया गया। उससे पूछा और फिर पता चला के गलती क्या थी, उसने माफ़ी माँगी और इलतिजा की, "बराए महरबानी मुझे माफ़ कर दो, और मेरी तरफ़ से हज़ार चाँदी के सिक्के तोहफा हैं तुम्हारे लिए। जब भी तुम्हें किसी चीज़ की इच्छा हो, कुछ भी, बस तुम मेरे पास आ जाना!" लुहार ने कहा, "मैने तुम्हें माफ़ कर दिया और तुम्हारा तोहफ़ा कुबूल कर रहा हूँ। लेकिन मैं अपनी इच्छा पूरी करने के लिए तुम्हारे पास पूछने नहीं आऊँगा।" पूछा गया क्यों, उसने कहा, "क्या ये मेरे लिए ठीक रहेगा के पैदाइशी गुलाम होते हुए अपनी इच्छाएँ किसी और के सामने रखूँ, अपने मालिक को छोड़ते हुए, जिसने कई बार तुम जैसे सुल्तान के शाही तख्त को पल्टा मुझ जैसे गरीब शख़्स की रज़ा के लिए?" फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद मेरी दुआओं से, उसने मुझे बहुत सारी मुश्किलों से बचाया। उसने मुझे मेरी बहुत सारी इच्छाऐं हासिल कराई। में किस तरह किसी और से पनाह माँग सकता हूँ? जबकि मेरे रब ने अपने लामहदूद रहम के खज़ाने के दरवाज़े खोल रखे हैं और अपनी लाइंतेहा बख्शिशों की लूह सबके लिए फैला रखी है, मैं किस तरह दूसरों से मदद माँग सकता हूँ? जिसने

पूछा और उसने नहीं दिया? एक शख़्स कभी भी हासिल नहीं कर सकता अगर वो ये नहीं जानता के किस तरह पूछना है। अगर एक शख़्स उसके सामने ज़ाति तरीके से नहीं जा सकता, तो वो उसका रहम भी हासिल नहीं कर सकता।

नज़्मः

जो कोई भी अपना सिर एक रात इबादत की देहलीज़ पर रखता है;
तो यकीनन अज़ीज़ की महरबानी हज़ारों दरवाज़े उस पर खोल देती है।

राबियात-उल-अदविया रहमतुल्लाही अलैह, अफ़ज़ल औलिया में से एक ने, एक आदमी को दुआ माँगते हुए सुना, "ए अल्लाह! अपनी शफ़कत का दरवाज़ा खोल!" उन्होने उससे कहा, "ए तुम लाइल्म शख़्स! क्या अल्लाह तआला के रहम का दरवाज़ा अब तक बंद था जिसे तुम अब खुलवाना चाहते हो?" [अगरचे रहम का ज़रिया हमेशा खुला है, ये तो दिल हैं, वसूल करने वाले जो हमेशा नहीं खुले होते। हम दुआ करते हैं ताकि वो खुल जाए!]

या रब्बी! तू, अकेला ही है, जो सबको परेशानियों से निकालता /बचाता है। हमें इस दुनिया में और बाद की में भी आफ़तों में मत छोड़ना! सिर्फ़ तू ही है जो सब चीज़ें ज़रूरतमंदों तक भेजता है! हमें इस दुनिया में और दूसरी में फ़ायदेमंद, किस्मत वाली चीज़ें भेंजे! हमें इस दुनिया में या आगे वाली में किसी की ज़रूरत में न छोड़ें! आमीन!"

कहानीः उनका घर जल गया

हमीद-ए तवील, औलिया-ए किराम में से एक, अपने इबादत के कमरे में नमाज़ अदा कर रहे थे। उनका घर जलना शुरू हो गया। लोग जमा हुए और आग बुझा दी। उनकी बीवी भागकर उनके पास आई और गुस्से से बोलीः "तुम्हारा घर जल रहा है। लोग जमा हो रहे हैं। बहुत सारा काम करने को है। लेकिन तुम हिले नहीं।" उन्होने कहा, "मैं अल्लाह तआला की कस्म खाता हूँ के मुझे इन सब हादसों के बारे में पता नहीं।"

अल्लाह तआला के करीबी, उसकी कुरबत में और प्यार में इतने बुलंद दर्जे पहुँच जाते हैं और दुआ का मज़ा महसूस करते हैं, उससे माँगते हैं, अपने आपको भूल जाते हैं।

कहानीः बर्तन में पानी

अबदुल्लाह बिन शहीर असहाब-ए किराम से का कहना हैः मैं रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के नज़दीक फर्ज़ नमाज़ अदा कर रहा था। मेने आपके मुबारक सीने से आवाज़ें सुनीं, वो ऐसी थी जैसे के एक बर्तन में आग पर पानी उबल रहा हो।

कहानीः उनके पैर में तीर

हज़रत अली, रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम के प्यारे दामाद, जब फर्ज़ नमाज़ अदा करते थे तो सब चीज़ों से ग़ाफ़िल हो जाते थे।

ये बयान हैः एक जंग में, एक तीर आया और हज़रत अली के मुबारक पैर में हडडी तक घुस गया। वो उसे बाहर नहीं निकाल पाए। उन्होने एक डॉक्टर को ज़ख्म को दिखाया। डॉक्टर ने कहाः “तुम्हें सुन करा जाएगा जिससे तुम बेहोश हो जाओगे, तभी फिर तुम्हारे पैर से तीर निकाला जा सकता है। वरना, इसका दर्द सेहना नामुमकिन है।” अमीर-उलमों मिनिन हज़रत अली रज़ीअल्लाहु अन्ह ने कहाः “(सुन करने की क्या ज़रूरत है? थोड़ी देर इंतज़ार करो, जब नमाज़ का वक्त आएगा और में नमाज़ पढ़नी शुरू करूँगा तो तुम इसे निकाल लेना।” नमाज़ का वक्त आया। हज़रत अली ने नमाज़ पढ़नी शुरू करदी। डॉक्टर ने हज़रत अली का मुबारक पैर काटा और तीर बाहर निकाल लिया। उसने ज़ख्म पर पट्टी बाँध दी। जब हज़रत अली ने अपनी फर्ज़ नमाज़ अदा करली, तो उन्होने डॉक्टर से पूछाः क्या तुमने तीर को बाहर निकाल लिया? डॉक्टर ने जवाब दियाः (हाँ, मेने उसे बाहर निकल लिया)। हज़रत अली ने कहा मुझे इसका बिल्कुल भी एहसास नहीं हुआ।

सबसे ज़्यादा हैरतअंग़ेज़ क्या हे! दरहक़ीकत, यूसुफ़ (जॉसेफ़) अलैहिस्सलाम की खुबसूरती के आगे, मिस्री औरतें इतनी ज़्यादा हैरान और पहले से सारा ध्यान उस तरफ़ लगाया हुआ था, के उन्हें पता ही नहीं चला के उन्होने अपने हाथों को काट लिया है। अगर अल्लाह तआला की हाज़िरी में होना उसके प्यारे बंदों को ऐसी हालत में पहुँचा देती है जो उन्हें अपने आप से ग़ाफ़िल कर दे, तो एक शख़्स इस पर क्यों हैरान है? गुज़रते वक्त, मोमिन

हमारे आका रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम को देखते हैं, इसलिए वो मौत की तकलीफ़ को महसूस नहीं कर पाते।

कहानीः बेहोशी की दवाई

आमिर-ए केस औलिया में से थे। ये देखा गया के उनके पंजों में से एक में कोढ़ था। उन्होने कहा इसको काटना ज़रूरी था। आमिर ने कहाः "इस फ़ैसले पर रज़ामंदी देना गुलामी का बुनियादी उसूल है।" उन्होने उसे काट दिया। थोड़े दिनों बाद, उन्होने देखा के बिमारी उनकी टाँग तक फैल गई और ऊपरी टाँग तक पहुँच गई। उन्होने कहा, "ये ज़रूरी है के इस पैर को काट दिया जाए, हमारे मज़हब ने इस ऑपरेश्न की इजाज़त दी है।" वो उनका ऑपरेश्न करने के लिए एक शख़्स लाए। उसने कहाः "इनको बेहोश करने के लिए, ये ज़रूरी है के दवाई ली जाए ताकि ये दर्द महसूस न करें। वरना, ये बरदाश्त नहीं कर पाएँगे।" आमिर ने कहाः इसकी कोई ज़रूरत नहीं है। किसी शख़्स को लेकर आएँ जो कुरआन अल-करीम को खुबसुरत आवाज़ के साथ पढ़े। उसको कुरआन अल-करीम पढ़ने दो। जब तुम मेरे चेहरे पर तबदीली देखो, मेरा पैर काट देना। मुझे इसका पता भी नहीं चलेगा। उन्होने ऐसा ही किया। एक शख़्स आया और कुरआन अल-करीम को खुबसूरत आवाज़ के साथ किरअत करने लगा। आमिर के चेहरे का रंग बदलने लगा। जर्राह ने ऊपरी टाँग के बीच से उनकी टाँग काट दी। उसने उसे जलाया और पट्टी बाँध दी। वो शख़्स जो कुरआन अल-करीम पढ़ रहा था खामोश हो गया। आमिर खुद अपने आप में आए और पूछाः "क्या तुमने इसे काट दिया?" उन्होने कहाः हाँ। उन्होने उनकी टाँग को काटा, जलाया, पट्टी बाँधी, और वो इन सब से बखबर रहे। फिर, उन्होने कहाः मेरी कटी हुई टाँग मुझे दे दो। उन्होने उसे उन्हें दे दिया। उन्होने उसे उठाया और कहाः "ए मेरे रब, तू एहसान करने वाला है। मैं तेरा गुलाम हूँ। तेरा हुकूम है, फैसला तेरा फैसला है, कदा तेरी कदा

है। ये, एक पैर है जिसके बारे में अगर तू, इंसाफ़ वाले दिन पूछे, क्या इसके साथ तूने कभी गुनाह की तरफ़ एक कदम नहीं उठाया? मैं कह सकता हूँ के मेने तेरे हुकूम के बग़ैर एक कदम या एक सांस भी नहीं लिया।

कहानीः नमाज़ के लिए कुरबानियाँ

आटामनस/उस्मानिया सल्तनत के बरसा शहर पर कबज़ा करने से पहले उसके ग्रीस यूनानी शहरियों में से एक खुफ़िया तौर पर मुसलमान बन गया। उसके एक बहुत करीबी दोस्त ने इसकी वजह पूछीः "तुम किस तरह अपने बाप और अपने आबाओ अजदाद के मज़हब को छोड़ सकते हो?" इस तरह, उसने उसपर नुकताचीनी करी। उस यूनानी मुसलमान ने बहुत मतलब वाला जवाब दिया। उसने कहाः एक बार, मुसलमानों में से एक बंदा मेरे पास रह गया। एक दिन, मेने देखा के ये बंदा उस कमरे में जहाँ उसे रखा गया बैठ रहा था और खड़ा हो रहा था। मैं पास गया और उससे पूछा के वो क्या कर रहा है। जब उसकी हरकात रूक गई, उसने अपने हाथों को मुँह पर मला और उसने कहा के वो एक रस्मी नमाज़ अदा कर रहा था और अगर मैं उसे इजाज़त दूँ, तो वो हर रसूम नमाज़ के लिए एक सोने का सिक्का देगा। मैं लालची हो गया। दिन पर दिन मैं अदाएगी की रकम बढ़ाता गया। एक खास नुक्ते पर, मेने बताए गए वक्त की हर रसूम नमाज़ों के लिए दस सोने के सिक्कों की मांग की। उसने ये बात मान ली। मैं अपनी इबादत के लिए उसकी इस कुरबानी पर बहुत हैरान हुआ। एक दिन, मेने उससे कहाः "मैं तुम्हें आज़ाद कर दूँगा।" वो बहुत खुश हुआ। उसने अपना हाथ फैलाया और मेरे लिए दुआ कीः "ए मेरे अल्लाह! अपने इस गुलाम को ईमान (यकीन) के एज़ाज़ से नवाज़ दे!" उसी लम्हा, मेरे दिल में मुसलमान बनने की इच्छा वाक्य हुई और ये इतनी बढ़ी के मैं फौरन **कलिमा-ए शहादत** पढ़ता हुआ मुसलमान बन गया।

चौथा हिस्सा
नमाज़ की किस्में

नमाज़, मुसलमानों के लिए हुकूम की गई वो तीन ग्रुपों में हैंः फर्ज़ नमाज़ें, वाजिब नमाज़ें और नफ़िल नमाज़ें। वो हैंः

1- **फर्ज़ नमाज़ेंः** रोज़ाना की पाँच फर्ज़ नमाज़ें, जुमे की नमाज़ की दो फर्ज़ रकाअत, जनाज़े की नमाज़ (जनाज़े की नमाज़ अदा करना फर्ज़-ए किफ़ाया है)।

2- **वाजिब नमाज़ेंः** वितर नमाज़, ईद की नमाज़ें, नज़र की नमाज़ें और वो नमाज़ें जो तुमने शुरू की लेकिन पूरी नहीं कीं। ये भी वाजिब है के छोड़ी हुई वितर नमाज़ों की कज़ा अदा की जाए।

3- **नफ़िल नमाज़ेंः** रोज़ाना की पाँच नमाज़ों की सुन्नतें, तराविह की नमाज़, और वो नमाज़ जो सवाब हासिल करने के लिए अदा की जाएँ जैसे के तहजुद, तहय्यत-उल मस्जिद, इश्राक़, अवाबीन, इसतिखारा, तस्बीह की नमाज़ें। हमें उनको अदा करने के लिए हुकूम नहीं दिया गया। वो जिन पर फर्ज़ का कर्ज़ हो या वाजिब कज़ा नमाज़ें ना हों तो उनकी नफ़िल इबादतों के लिए भी सवाब मिलेगा।

नमाज़, रोज़ाना पाँच वक्त

नमाज़ अल्लाह तआला का अहकाम है। अल्लाह तआला ने कुरान अल-करीम में एक सौ से भी ज़्यादा जगहों पर "**नमाज़ अदा करो!**" का हुकूम दिया है। हर मुसलमान के लिए जो बाशअर **है** और सने बलूग़त को पहुँच चुका हो, एक दिन में पाँच वक्त की नमाज़ अदा करना कुरआन अल-करीम और हदीस-ए शरीफ़ में हुकूम दिया गया है।

सूरह रोम की सत्तरहवीं और अठारहवी आयत ए करीमा में इसका मतलब हैः "**सुबह और शाम के वक्त अल्लाहु तआला की तस्बीह** (इबादत करना; नापाकी और नाकिस से परे होने का एलान करना) **करना। आसमानी और ज़मीनी मखलूक के ज़रिए दोपहर और असर के वक्त हमद अदा करना अल्लाह तआला के लिए है।** सूरह बकरा की दो सौ उन्तालिसवी में, इसका मतलब हैः "**सलातों की और देर दोपहर की सलात की हिफ़ाज़त करो!**" [यानी, कभी नमाज़ अदा करने से मत रूको] सूरह हूद की एक सौ चौदहवीं आयत का मतलब है, **(दिन के दो वक्तों में** [दोपहर से पहले और दोपहर के बाद] **और रात के दौरान तीन बार** [शाम, रात और सुबह] **नमाज़ बनाओ जैसे के इसे करते हैं! दरअसल, जो चीज़ें अच्छी (हसनात) [रोज़ाना की पाँच वक्तों की नमाज़ों का सवाब] हैं [काबिले माफ़ी] गुनाह को खत्म कर देती हैं। ये दिमाग़ वालों के लिए एक सलाह है।)**

एक हदीस-ए शरीफ़ में, ये वाज़ेह है के **(अल्लाह तआला ने रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ें अदा करने का हुकूम दिया है। अल्लाह तआला उनको माफ़ कर देगा जो सही वुज़ू करते हैं और इन पाँच नमाज़ों को उनके मुकर्रर वक्त में अदा करते है अपने रूकूअ और सजदों को अच्छी तरह करते हुए।)**

ये रोज़ाना की पाँच नमाज़ें चालीस रकाअतों (वाहिद) तक जुड़ती हैं, इनमें से सतरह फर्ज़ हैं, तीन वाजिब हैं और बीस सुन्नत हैं। वो हैंः

1- सुबह/फज्र की नमाज़ चार रकाअत पर मुश्तमिल है। पहले सुन्नत नमाज़, जो दो रकअत पर मुश्तमिल है, अदा की जाती है। फिर फर्ज़ नमाज़, दो रकअत की, अदा की जाती है। सुन्नत (पहली दो रकाअत) बहुत अहम हैं। कुछ आलिमों ने इसे वाजिब में तकसीम किया है।

2- दोपहर की नमाज़/जुहर की नमाज़ दस रकाअत पर मुश्तमिल है। पहली सुन्नत चार रकाअत पर मुश्तमिल है, फर्ज़ चार रकाअत पर मुश्तमिल है, और आखिरी सुन्नत दो रकाअत पर मुश्तमिल है।

3- देर दोपहर बाद/असर की नमाज़ आठ रकाअत पर मुश्तमिल है। पहले सुन्नत, जो चार रकाअत पर मुश्तमिल है, और फिर फर्ज़, जो चार रकाअत पर मुश्तमिल है, अदा की जाती है।

4- शाम/मग़रिब की नमाज़ में पाँच रकाअत शामिल हैं। पहले फर्ज़, जो तीन रकाअत पर जुड़ा है, फिर सुन्नत, दो रकाअत पर मुश्तमिल, अदा की जाती है।

5- रात/ईशा की नमाज़ तेरह रकाअत पर मुश्तमिल है। पहली सुन्नत में चार रकाअत शामिल हैं। फर्ज़ में भी चार रकाअत शामिल हैं। लेकिन आखिरी सुन्नत में दो रकअतें शामिल हैं, जबकि **(वितर नमाज़)** में तीन रकअतें हैं।

असर की नमाज़ और ईशा की नाम्ज़ की पहली सुन्नतें गैर-ए मुअक्किदा हैं। दूसरी रकाअत के कअदे में, **(अत्ताहिय्यातु)** पढ़ने के बाद, **(अल्लाहुम्मा सल्लैहअला...)** और **(अल्लाहुम्मा बारिक अला...)** की दुआएँ पूरी

पढ़ी जाती हैं। तीसरी रकाअत में खड़े होने के बाद **(सुबहानाका...)** दुआ पढ़ी जाती है बिस्मिल्लाह कहने से पहले। लेकिन ज़ुहर की नमाज़ की पहली सुन्नत **(मुअक्किद)** है। यानी, ज़ोर देकर करने के लिए कहा गया। वहाँ इसके लिए बहुत सारा सवाब (बरकतें) हैं। इसकी दूसरी रकाअत के दौरान, जैसे के फर्ज़ नमाज़ों में, सिर्फ़ **अत्ताहिय्यातु** पढ़ी जाएगी और फिर हम तीसरी रकाअत के लिए खड़े हो जाएगें। खड़े होने के बाद, हम पहले बिस्मिल्लाह पढ़ते हैं और फिर सूरह (सबक) **फातिहा** पढ़ते हैं।

ज़ुहर की और ईशा की फर्ज़ नमाज़ों के बाद चार ज़ाएद रकाअतें और असर की फर्ज़ नमाज़ के बाद छः ज़ाएद रकाअतें अदा करना मुस्तहब हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में, ये बहुत मुबारक है। एक शख़्स इन सबको एक सलाम के साथ या हर दो रकाअत के बाद सलाम कहकर अदा की जा सकता है। इन दोनो ही हालतों में पहली दो रकाअतें आखिरी सुन्नत मानी जाएंगी। ये नमाज़ें, जो मुस्तहब हैं वो ज़ुहर की और ईशा की नमाज़ की दुआओं के बाद अलग से अदा की जाती है।

पहली रकाअत दुआ की शुरूआत के साथ की जाती है और दूसरी रकअत जैसे ही तुम खड़े होते हो उसके साथ शुरू हो जाती है, और हर रकअत जारी रहती है जबतक तुम दोबारा खड़े होते हो। आखिरी सलाम तक जारी रहती है। हर दूसरी रकअत के दूसरे सजदे के (सिर झूकाने) बाद हम बैठते हैं।

हर नमाज़ की रकअत में इसके फर्ज़, वाजिबात, सुन्नतें, मुफ़ीसदात (चीज़ें या हरकतें जो एक नमाज़ को रद करते हैं), और मकरूहात (हरकतें, लफज़, सोचें पैग़म्बर के ज़रिए नारज़ामंद और छोड़े गए) शामिल हैं। आगे के सफ़हों पर, हम **हनफी मसलक** के मुताबिक इन्हें वाज़ेह करेंगे।

नमाज़ के फराईज़

फर्ज़ एक ज़मानत है जो अल्लाह तआला के ज़रिए साफ़ हुकूम किया गया है। जबतक एक शख़्स फर्ज़ अदा नहीं करता, तो वो इबादत सही, सच्ची नहीं होगी। नमाज़ के बारह फराईज़ हैं, इन फराईज़ में से, सात उनमें से बाहर हैं और पाँच नमाज़ के अंदर हैं। फर्ज़ जो बाहर हैं वो **(शर्तें)** [पहले से शर्ते] कहलाती हैं। फर्ज़ जो अंदर है उन्हें **(रूकन)** कहते हैं। [कुछ इस्लामी आलिमों ने कहा है के तहरीमा की तकबीर नमाज़ के अंदर है। उनके मुताबिक, नमाज़ की रूकन और शर्ते दोनों, हर एक नम्बर में छः हैं।]

A) **नमाज़ की पहली शर्ते फर्ज़ः**

1- हदस से तहारतः वुज़ू की अदाएगी उस शख़्स के ज़रिए जिसका वुज़ू ना हो और जो जुनबी हों उनके ज़रिए गुस्ल करना।

2- नजासत से तहारतः लोग जिन्हें नमाज़ पढ़नी हो उन्हें अपने जिस्मों, कपड़ों, जगहों जहाँ उन्होने नमाज़ अदा करनी हो वो सब नजाज़त से पाक होने चाहिए, यानी, उन चीज़ों से जो मज़हबी तौर पर; खुन, पेशाब, शराब।

3- सतर-ए-अवरतः अवरत हिस्सों को ढाकना। अपने अवरत हिस्सों को छुपाने का अल्लाह तआला का फरमाने इलाही है। मुकल्लफ़ के उन हिस्सों को, यानी, उनके लिए जो बाशअर और बालिग़ हों, जिन्हें उनके लिए खुला रखना और दूसरों को दिखाना हराम [ममनुअ] है और दूसरों का नमाज़ के दौरान उन्हें देखना, या किसी भी वक्त, उसे अवरत हिस्से कहते हैं। एक मर्द का नाफ़ से घुटने तक का हिस्सा अवरत है। औरत के लिए सिवाए हाथों और मुँह के उसके सारे जिस्म के हिस्सों को अवरत हिस्से कहते हैं।

4- इस्तिक़बाले क़िब्लाः क़िब्ला की तरफ़ नमाज़ अदा करना इस्तिक़बाले क़िब्ला होता है। मुसलमानों का क़िब्ला वहाँ है जहाँ **(काबा)** जो के मक्का-ए मुकर्रमा के शहर में है। यानी, ज़मीन से अर्श तक की जगह क़िब्ला है।

5- वक्तः इसका मतलब है नमाज़ को उसे वक्त में अदा किया जाए। यानी, ये जानना क नमाज़ का वक्त शुरू हो गया है और ये इरादा करना के बताए गए वक्त में नमाज़ अदा करना।

6- नीयतः इसका मतलब है नीयत [इरादा] करना इस सोच को दिल में लाते हुए के कब उसे नमाज़ शुरू करनी है। ये नमाज़ को अदा करने की नीयत से ज़ाहिद किया जा सकता है। अगर सिर्फ़ ज़ुबान से कहे, तो इसे एक नीयत नहीं माना जाएगा। नमाज़ के लिए नीयत करने का मतलब है के दिल से इसका नाम, वक्त, क़िब्ला, कहा जाए और इमाम को तकलीद करने की इच्छा होना (जब जमाअत से नमाज़ अदा की जाए), नमाज़ अदा करने की नीयत ज़ाहिर करना। नीयत तकबीर-ए-इफ़तिताह (शुरूआत) कहते हुए करनी चाहिए। तकबीर-ए इफ़तिताह के बाद नीयत करनी सही नहीं है और इसलिए जो नमाज़ अदा की जाएगी वो काबिले क़ुबूल नहीं है।

7- तकबीर-ए तहरीमाः इसका मतलब है **(अल्लाहु अकबर)** कहना जब नमाज़ शुरू हो। इस तकबीर की शुरूआत को **(तकबीर-ए इफ़तिताह)** कहते हैं। इसके बदल कोई दूसरा लफ़्ज़ क़ुबूल नहीं होता।

B) **नमाज़ के अंदर फर्ज़ (उसके रूकन)**ः

नमाज़ के अंदर पाँच फर्ज़ हैं। इन पाँच फर्ज़ के हर एक को **(रूकन)** कहते है। वो ये हैंः

1- क़यामः इसका मतलब है खड़ा होना, जब एक शख़्स नमाज़ को शुरू करे और अदा करे। जो खडे होने में बहुत बीमार हो वो नमाज़ बैठकर अदा कर सकता है, और अगर वो बैठने में भी बहुत बीमार हो तो वो कमर के बल लेटकर अपने सिर के साथ इसे अदा कर सकता है (अपने सिर को हरकत, हिलाने, वग़ैरह के ज़रिए)। जबके एक कुर्सी में बैठे हों तो नमाज़ अदा करने की इजाज़त नहीं है।

2- किरअतः किरअत का मतलब है जुबानी पढ़ना। इसका मतलब है कुरआन अल करीम की एक सूरह [कुरआन अल-करीम का एक बाब] या एक आयत [कुरआन अल-करीम का एक हिस्सा] को पढ़ना।

3- रूकूः इसका मतलब है किरअत पूरी करने के बाद झूकना और हाथों को घुटनों पर रख लिया जाए। रूकू में तुम कम से कम तीन बार **(सुब्हा-न रब्बियल अज़ीम)** कहते हो। रूकू से खड़े होने पर तुम्हें **(समी अल्लाहु लिमन हमिदह)** कहना चाहिए। रूकू से खड़ा होने के बाद तुम्हें **(रब्बना लकल हम्द)** कहना चाहिए।

4- सजदाः इसका मतलब है रूकू के बाद ज़मीन पर माथा रखना। सज्दे का मतलब है ज़मीन पर लगातार दो बार माथा रखना हाथों, माथे और नाक को ज़मीन पर रखना। तुम्हें हर सज्दे में तीन बार **(सुब्हा-न रब्बियल आला)** कहना है।

5- क़अदा-ए आखिराः इसका मतलब है आखिरी रकअत में इतना लंबा बैठना जितना के तुम **(अत तहिय्यात)** के दुआ पढ़ सको। इसको **(आखिरी बैठने का तरि**का) भी कहते हैं।

हक़ीकत ये है के नमाज़ की शर्तें बहुत सारी हैं, जो ये बताती हैं के नमाज़ एक आला काम है और सारी इबादतों से सबसे अहम है। इसके अलावा

जब इसके वाजिबात, सुन्नतें, मुस्तहबात, मकरूहात और मुफ़सिद पर सोचा जाता है, तो ये समझ लिया जाता है के कैसे एक गुलाम अपने रब की हाज़िरी में खड़ा होता है। ये गुलाम कमज़ोर, बग़ैर ताकत की मखलूक हैं। हर एक सांस पर, उन्हें अल्लाह तआला की ज़रूरत पड़ती है जिसने उन्हें तखलीक किया। नमाज़ एक इबादत है जो एक गुलाम को उसकी कमज़ोरियों को समझने के काबिल बनाती है।

हमारी इस किताब में, ये इल्म इसके काएदे में वाज़ेह किया जाएगा।

नमाज़ की पहली शर्त

1- हदस से तहारत (बग़ैर वुज़ू या गुस्ल की हालत से पाकी)ः

इस मज़मून पर, हम वुज़ू, गुस्ल और तय्यमुम पर जानकारी देंगे।

वुज़ू की अदाएगी [वुज़ू, अबदस्त]ः

वुज़ू की अदाएगी नमाज़ा के फराईज़ में से एक है। कुरआन अल-करीम को पकड़ने, काबा के चक्कर लगाने, सज्दा-ए तिलावत करने, नमाज़े जनाज़ा भी अदा करने के लिए वुज़ू करना ज़रूरी है। लगातार/मुसलसल वुज़ू में रहना बहुत ज़्यादा सवाब लाता है, बिस्तर पर जाने के लिए, खाने और पीने के लिए जबके एक शख़्स वुज़ू के साथ है।

वो जो मर जाते हैं जबके वो वुज़ू के साथ थे जो उन्हें शहादत हासिल करने का सवाब मिलेगा।हमारे पैग़म्बर “सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम” ने फरमायाः

(वो जो मर जाते हैं जबके वो वुज़ू कर रहे होते हैं मौत का दर्द महसूस नहीं करते।इस वास्ते, वुज़ू ईमान रखने की अलामत है।ये नमाज़ की चाबी है, ये जिस्म से गुनाहों को साफ़ करने वाला हैं।)

(जब एक मोमिन वुज़ू करता है, उसके गुनाह उसकी आँखों, हाथों और पैरों से निकल जाते हैं।वो ऐसे बैठ जाता है जैसे उसे माफ़ कर दिया गया हो।)

(सब कामों से बहतर नमाज़ है।जो मुतवातिर वुज़ू करते हैं वो बिला शक/बेशक ईमान वाले हैं।एक मोमिन सुबह के वक्त भी वुज़ू से होता है और जब वो रात में सोने जाता है तब भी वुज़ू से होता है।जब वो ऐसा करता है, तब वो अल्ला तआला की हिफ़ाज़त में होता है।खाना और पानी, उसके पेट में जिसने उसे खाया जबके वो वुज़ू के साथ था, अल्लाह तआला के नाम का ज़िकर करते हैं।वो उसके लिए इस्तिग़फ़ार करते हैं जब तक के वो उसके पेट में रहते हैं।)

एक अबदस्त (वुज़ू) में फ़र्ज़, सुन्नत, अदब, और ममनुअ और रद करने वाली चीज़ें हैं।अगर एक शख़्स बग़ैर वुज़ू किए नमाज़ अदा करता है अगरचे उसे ऐसा करने की सख्त ज़रूरत महसूस नहीं होती और उसे पता है के उसका वुज़ू नहीं है, वो एक काफ़िर बन जाएगा।वो जो नमाज़ अदा करते वक्त अपना वुज़ू खो देता है, उसे एक तरफ़ का सलाम अदा करना चाहिए और अपनी नमाज़ रोक देन चााहिए।मुकर्रर वक्त के पूरा होने से पहले दोबारा वुज़ू करके उसे नमाज़ दोबारा अदा कर लेनी चाहिए।

रसूम वुज़ू के फराईज़

हनफ़ी मसलक में वुज़ू में चार फर्ज़ हैः

1- एक बार मुँह को धोना।

2- दोनों हाथों को और कुहनियों समेत एक बार धोना।

3- चौथाई सर मसह करना, यानी अपने गीले हाथ को अपने माथे पर रगड़ना।

4- दोनो पाँव गट्टो समेत धोना एक बार।

नीयत [इरादा] और तरतीब [अपने अज़ा को बताए गए तरीके मुताबिक धोना] शाफ़ई मस्लक में फर्ज़ हैं। ये ज़रूरी के नीयत करलें जब मुँह को धोएँ। अगर एक शख़्स मुँह पर पानी छुने से पहले नीयत करले, तो उसका वुज़ू सही नहीं होगा। चेहरे और ठोड़ी पर जो दाढ़ी है उसका धोना फर्ज़ है। दालक [धूले हुए अज़ा को रगड़ना] और मुवालात [बग़ैर रूके हुए एक के बाद एक अज़ा को धोना] मालिकी मसलक में फर्ज़ हैं। शिया अपने पाँव नहीं धोते, वो नंगे पैरों पर मसह करते हैं।

एक रसूम वुज़ू को कैसे अदा करें?

1- जबके तुम रसूम वुज़ू की अदाएगी शुरू करो, तो तुम इस दुआ को पढ़ोः **बिस्मिल्लाहिल-अज़ीम वलहम्दु लिल्लाह अला दीनिलइस्लाम। व अला तौफ़ीक़-इल-ईमान। अलहम्दु लिल्लाहिल-लज़ी जेअलेलमाई तहूरेन व जेअलेल-इस्लामे नूरैन।** (में अल्लाह तआला के नाम के साथ शुरू करता हूँ जो अज़ीम

है। अल्लाह तआला के लिए सब तारीफ़ें और शुक्रिये जिसने हमें इस्लाम का मज़हब दिया और जिसने हमपर ईमान की रहमते फरमाई। अल्लाह तआला के लिए सब तारीफ़ें और शुक्रिये जिसने पानी को साफ़ बनाया और जिसने इस्लाम को एक रोशनी बनाया।) फिर, हाथों को, कलाइयों के साथ, तीन बार धोओ।

2- जब तुम अपने मुहँ पे अपने सीधे हाथ से तीन मरतबा पानी डालो, तो तुम्हें मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नी चाहिएः

अल्लाहुम्मस किनी मिन होदि नबिय्येके क-ए सन ला इज़मेअ ब-देहू इबेदिन। (ए मेरे अल्लाह! मुझे हमारे नबी के हौज़ में से पानी पिला, जिसमें से एक शख़्स पानी पीले तो वो कभी दोबारा प्यास महसूस नहीं करेगा।)

3- तीन बार तुम अपने सीधे हाथ से अपनी नाक में पानी डालो और अपनी नाक को उलटे हाथ से साफ़ करो। जब तुम अपनी नाक में पानी डालो, तुम्हें मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नी चाहिएः **अल्लाहुम्माह इरहनी रायहिअतल जन्नती वरज़ुकनी मिन नि अमिहा। व-ला तुरिहनी राईहतन-नार** (ए मेरे अल्लाह! मुझे जन्नत की नेमत अता फरमा, ना के दोज़ख की बू।)

4- तुम अपनी हथेलियों में पानी लो और माथे के बालों से ठोड़ी के नीचे तक अपने चेहरे/मुँह को धो, और दोनो कानों के सामने से धोना। इस तरह करते वक्त, तुम मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ सकते होः

अल्लाहुम्मा बेयीद वजही बिनूरिक योमा तबयदद वुजहु अैवलियाका व ला तुसविद वजही बिज़नूबी योमा तस्वददु वजूहु अदाएके। (ए मेरे अल्लाह! जैसे के तुमने अपने प्यारे रोशन गुलामों के चेहरों को अपनी रोशनी से सफ़ेद किया, मेरा चेहरा भी सफ़ेद कर दे। योमुलहशर में जब तेरे दुश्मनों का चेहरा काला हो, मेरा चेहरा मेरे गुनाहों की वजह से काला मत करना।)

5- जबकि तुम अपना सीधा हाथ कोहनी को शामिल करते हुए उलटे हाथ से (तीन बार) धो रहे हो, तो तुम्हें मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नी चाहिएः **अल्लाहुम्मा अतिनी किताबी बियमीनी व हासिबनी हिसाबन यसीरन।** (ए मेरे अल्लाह! मेरे अमाल की किताब मेरे सीधे हाथ में देना और मेरे हिसाब को आसान फरमाना।)

6- जब तुम अपना उलटा हाथ कोहनी तक (तीन बार), धोओ अपने सीधे हाथ से तो तुम मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ोः **अल्लाहुम्मा ला तुतिनी किताबी बि सिमाली व ला मिन वराए ज़हरी व ला तुहासिबनी हिसाबन शदीदन।** (ए मेरे अल्लाह! मेरे अमाल की किताब मेरे उलटी तरफ़ से और मेरे पीछे से मत देना। मेरे हिसाब को सख्ती से मत लेना।)

7- दोनो कलाइयाँ धोने के बाद, अपने हाथों को दोबार धोओ और हाथों पर गीला पानी छोड़ते हुए, अपने सिर पर (हाथ पोंछते हुए) मसह करो। इस वक्त, तुम मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ सकते होः **अल्लाहुम्मा हरिरम शर्रि व विशर्रि अलेन नार। व इज़िलनी तहते ज़िल्ली अरशीका योमा ज़िल्ले इला ज़िल्लु अरशीका** (ए मेरे अल्लाह! मेरे जिस्म और मेरे बाल को दोज़ख में मत फैकना। जिस दिन कोई साया न हो, तो मुझे अर्शे-ए-अला के साए में पनाह देना।)

8- इसके बाद, तुम अपने कान के छेदों को अपने सीधे और उलटे हाथों की छंगुलियों से गीला करो और अपने अंगूठों को अपने कानों के पीछे रगड़ो और फिर मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ोः **अल्लाहुम्माज अलनी मिन्ललज़िन यसतमिअनल कौले फि यत्तेबिअन अहसनेहु।** (ए मेरे अल्लाह! मुझे लफ़ज़ को सुनने वाला बना दे और जो सबसे ज़्यादा फरमावरदार है।)

9- जबकि तुम अपनी गर्दन के पीछे का अपने हाथों के बाहरी सतह से मसह कर रहे हो तो तुम मंदरजाज़ेल दुआ पढ़ोः **अल्लाहुम्मा अतीख रकाबती मिनन-नार।** (ए मेरे अल्लाह! मेरी गर्दन को आग से आज़ाद कर।)

10- गर्दन का मसह करने के बाद, तुम अपना सीधा पैर गटटों की हडडियों के दोनों तरफ़ एक साथ तीन बार धोना चाहिए, उलटे हाथ छुंगली को पंजों में बीच में डालना, छोटे पंजे से शुरू करते हुए धोना। ऐसा करते वक्त, तुम्हें मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नी चाहिएः **अल्लाहुम्म सबित कदमई अलैस सिराति योम तज़िलू फिहिल-अक़दामु।** (ए मेरे अल्लाह! जब कयामत में पैर फिसलने लगे, तो मेरे पैरों को सिरात पर कायम कर।)

11- तुम अपन उलटा पैर गटटों की हडडियों के साथ दोनो तरफ़ से तीन बार धाओ। तुम अपनी छुगलि पंजों के बीच में डालो नीचे से, छोटे पंजे की तरफ़ से शुरू करते हुए। ऐसा करते वक्त, तुम्हें मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नी चाहिएः **अल्लाहुम्मा तातरूद कदिमी अलैस-सिराती यौमि ततरूदू कुल्लु अकदामि अदाईक। अल्लाहुम्मज अल सई मशकूरेन व ज़नबी मग़फूरन व अमिली मक़बूलन व तिजारिती लन तबूरि।** (ए मेरे अल्लाह! उस दिन जब तेरे दुश्मनों के पैर सिरात पर से फ़िसलें, मेरे पैरों को उस पर से मत गिराना। ए मेरे अल्लाह! मेरे काम को इक़बालमंद बना। मेरे गुनाहों को माफ़ कद दे। मेरे कामों को कुबूल करले। मेरी तिजारत को हलाल कर।)

हमारे रसूल 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(जो कोई भी वुज़ू करता है और आसमान की तरफ़ देखता है और ये दुआ पढ़ता हैः "सुब्हा-न-कल्ला हुम-म व बिहमदि-का, अश हदु अल्ला इलाहा इल्ला अन्ता वहदका ला शरी-क लकि अस्तिग़फीरुका व अतूबु इलेका अशहदु अन लाइल्लाह इल्लाह व अश्अहदु अन ना मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहु।" अल्लाह तआला उस शख़्स के गुनाह माफ़ कर देता है, वो उसे अपनी कुबूलियत के**

दस्तखत के मान लेता है और उसे अर्शे-ए-अला के नीचे रख लेता है। हिसाब वाले दिन, वो शख़्स जो इस दुआ को पढ़ता है आता है और इसका सवाब हासिल करता है।)

एक हदीस-ए शरीफ़ में, रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम ने फरमायाः **(जो कोई भी वुज़ू अदा करता है और फिर सूरह** "**इन्ना अंजालनाहु...**" **एक बार पढ़ता है, अल्लाह तआला उसे सिददीकों में से एक लिख लेता है। अगर वो इसे दो बार पढ़ता है, वो उसे शहीदों में से एक लिख लेता है। अगर वो इसे तीन बार पढ़ लेता है, तो वो पैग़म्बर के साथ उठाया जाएगा।)**

एक और हदीस-ए शरीफ़ में, इस तरह बयान हैः **(जो कोई भी एक वुज़ू अदा करता है और फिर दस बार मुझ पर सलातु सलाम भेजता है, अपने रसूम वुज़ू को अदा करने के बाद, अल्लाह तआला उस शख़्स की उदासियाँ दूर कर देता है और उसे खुश बनाता है। वो उसकी दुआएँ कुबूल करता है।)**

जो वुज़ू की दुआएँ नहीं जानते उन्हें इजाज़त है के वो उन्हें ना पढ़े। बहरहाल, जितनी जल्दी हो सके उसे उन्हें याद कर लेना चाहिए और जब रसूम वुज़ू अदा करे तो उन्हें पढ़े। ये ज़्यादा सवाब लेकर आएगा। रसूम वुज़ू की अदाएगी के खात्मे पर इसका ज़्यादा सवाब है, या रसूम वुज़ू को खत्म करते वक्त मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नाः "**अल्लाहुम्मज अलनी मिनन्तव्वाबीन, वज अलनी मिनल मुत तहहिरीन, वज अलनी, मिन इबादिकि-अस-सालिहीन, वजअलनी मिनल-लज़ीनि ला खौफुन अलैहिम व लाहुम यहज़िनून।**"

वो लोग जिन्हें वुज़ू की दुआएँ याद नहीं है उन्हें अपने अज़ा धोते वक्त कलिमा-ए शाहदत पढ़ना चाहिए, इस तरह, उन्हें आला बरकतें हासिल होंगी।

वज़ाहतः वुज़ू करते वक्त जो दुआएँ करनी हैं उसके लिए **227** और **228** सफ़हों को देखिए!

अगर तुम आलिम हो, नमाज़ अदा करो, क्योंकि ये ख़ुशी का ताज है जान लो के ये मोमिन की मेराज है।

रसूम वुज़ू की सुन्नतें

एक वुज़ू में अठारह सुन्नतें हैंः

1- एक वुज़ू शुरू करते वक्त बिस्मिल्लाह पढ़ना।

2- हाथों को कलाइयों तक तीन बार धोना।

3- तीन बार मुँह को धोना हर बार ताज़ा पानी का इस्तेमाल करते हुए।इसको **(मदमदा)** बोलते हैं।

4- दोनों नथनों को तीन बार धोना, हर बार ताज़ा पानी अंदर लेना।इसको **(इसतिनशाक)** बोलते हैं।

5- भौं के नीचे, दाढ़ी और मूँछों के ना दिखाई देने वाले हिस्सों को गीला करना।

6- दोनों भौं के नीचे के हिस्से मुँह धोते वक्त गीला करना।

7- दाढ़ी के लटकते हुए हिस्से पर (हल्के से पोंछना) मसह करना।

8- दाढ़ी के लटकते हुए हिस्से को धोना, सीधे हाथ की गीली उंगलियों से (तख़लील) कंधा करना।

9- दाँतों को किसी चीज़ से रगड़ना और साफ़ करना।[मिसवाक का इस्तेमाल करना एक अहम सुन्नत है।]

10- एक बार सिर का पूरा मसह करना।

11- दोनों कानों का (रगड़ना) एक बार मसह करना।

12- गर्दन का एक बार मसह करना दोनों हाथों की तीन बराबर उंगलियों से।

13- उंगलियों और पंजों के बीच में धोना।[(तख़लील) के लिए पंजों के बीच में धोना, उलटे हाथ की छोटी उंगली को पंजों के बीच में नीचे से बारी बारी धोना, सीधे पैर की छोटी उंगली से शुरू करते हुए और, सीधे पैर का पूरा करने के बाद, उलटे पैर के बड़े पंजे से करते हुए।]

14- तीन बार धोना, हर अज़ा को धोना।

15- जब चेहरा धोना शुरू करो तो दिल से नीयत करो।

16- तरतीब।दूसरे लफ़ज़ों में, अज़ाओ को सही से धोना, और तसलसुल को ना बदलना।

17- दालक।धूले हुए अज़ा को मलना।

18- मुवालात।अज़ा को एक के बाद दूसरा जल्दी धोना।

रसूम वुज़ू के अदाब

वुज़ू में अठाईस अदाब हैंः

इस हालत में अदाब का मतलब है के जब किया जाए तो रहमतों की वजह है लेकिन अगर छोड़ा जाए तो कोई गुनाह नहीं लाता। लेकिन सुन्नत करना एक बड़ी रहम है और इसे ना करना तनज़ीही मकरूह है। अदाब को मनदूब और मुस्तहब भी कहते हैं। वुज़ू के अदाबः

1- नमाज़ के वक्त से पहले वुज़ू कर लेना। (जो किसी उज़र के साथ हैं उन्हें [नमाज़ जो अदा करनी है] उसके वक्त के शुरू होने के बाद कर लेना चाहिए।)

2- जब तहारखाने में अपने को साफ़ करो, तो किब्ला तुम्हारे सीधे या उलटे हाथ की तरफ़ होना चाहिए। ये तहरीमी मकरूह है के अपना सामना या कमर किब्ले की तरफ़ करो जब पाखाना या पेशाब कर रहे हो।

3- अगर अपने पौशिदा हिस्सों को नजासत से पाक नहीं किया, तो ये एक अदब हे के उन्हें पानी से धोओ।

4- धोने के बाद अपने आपको एक कपड़े के टुकड़े से सुखाओ।

5- सफ़ाई करने के बाद अपने आपको फ़ौरन ढक लो।

6- किसी से कोई मदद के लिए मत पूछो, लेकिन अपने आप वुज़ू अदा करो।

7- किब्ले की तरफ़ रूख कर लेना जब वुज़ू किया जए।

8- हर अज़ा धोते वक्त कलिमा-ए-शहादत पढ़ना।

9- वुज़ू की बताई गई (दुआ) को पढ़ना।

10- मुँह में सीधे हाथ से पानी डालना।

11- नाक में सीधे हाथ से पानी डालना।

12- नाक को उलटे हाथ से साफ़ करना।

13- जब मुह को धो रहे हों, तो दाँतों को **मिसवाक** से ब्रश करना। अगर मिसवाक दस्तयाब नहीं है, तो एक ब्रश का इस्तेमाल किया जा सकता है।

14- जब मुँह धो रहे हों, तो (अगर रोज़ा नहीं है) गरग़रा करें। गुस्ल और के दौर वुज़ू न भी गले में हल्का गरग़रा करना चाहिए। ताहम जब तुम्हारा रोज़ा हो तो गरग़रा करना मकरूह है।

15- जब नथनों को धोओ, तो हडडी तक पानी पहुँचाओ।

16- जब कानों का मसह करो, तो हर छोटी उंगली कानों के सुराग़ में डालो बारी बारी।

17- जब पंजों के बीच में धोओ तो उलटे हाथ की छुंगली को उसकी नीचली तरफ़ गुज़ारते हुए (तख़लील) करो।

18- जब हाथों को धोओ तो (चौड़ी) अगूँठी को हिल्लाओ। ये ज़रूरी और फर्ज़ है के कसी हुई अगूँठी को हिलाना।

19- पानी को ज़ाया ना करना चाहे वो ज़्यादा ही क्यों ना हो।

20- इतना कम पानी का इस्तेमाल मत करो के जैसे तुम कोई दवा लगा रहे हो। हर तीन मरतबा अज़ा धोनों के बाद कम से कम, दो बूंद पानी की धूले हुए हिस्से से गिरनी चाहिए।

21- बरतन को वुज़ू के लिए इस्तेमाल करने के बाद, बरतन को पानी से भरकर छोड़े।

22- ये दुआ पढ़ना **(अल्लाहुम्मज अलनी मिन्ततवावीन......)** वुज़ू करने के बाद या उसके दौरान।

23- वुज़ू करने के बाद दो रकअत नमाज़ जिसे **(सुबहा)** कहा जाता है अदा करनी चाहिए।

24- एक वुज़ू करना चाहे अगरचे तुम्हारा वुज़ू ही क्यों न हुआ हो। दूसरे लफ़्ज़ों में, एक नमाज़ अदा करने के बाद, तुम्हें अगली नमाज़ के लिए वुज़ू करना चाहिए चाहे तुम्हारा वुज़ू क्यों ना हो।

25- चेहरा धोते वक्त आँखों के अंदरूनी कोनों को साफ़ करना और पलकों पर सूखे चीपड़ को साफ़ करना।

26- चेहरा, कलाइयाँ और पैर धोते वक्त, ज़रूरी मिकदार से ज़्यादा धोना। [जब कलाइयों को धो रहे हों, तो हमें अपनी हथेलियों में पानी भर लेना चाहिए और फिर उसे अपनी कोहनियों तक बहा देना चाहिए।]

27- जब एक वुज़ू अदा कर रहे हो तो, इस्तेमाल किए हुए पानी को अपने जिस्म, अपने कपड़ों, वग़ैरह छींटे ना मारने दो।

28- अगर चीज़ तुम्हारे मस्लक में मकरूह नहीं है, लेकिन दूसरे मस्लक में फर्ज़ है तो, उसको करना मुस्तहब है।

वुज़ू अदा करने की मुमानियतें

यहाँ पर वुज़ू की अदाएगी में बारह मुमानिअतें हैं। उनको करना या तो हराम है या मकरूह; वो इस तरह मंदरजाज़ेल हैंः

1- कज़ाए हाजत करते वक्त या पेशाव करते वक्त पाखाने में या बाहर, तुम्हें अपनी पीठ या सामना किब्ले की तरफ़ नहीं करना चाहिए।

2- तहारत करने की गर्ज से अपने पौशिदा हिस्सों को दूसरों की सोहबत में खोलना हराम है।

3- एक शख़्स को अपने सीधे हाथ से तहारत नहीं करनी चाहिए।

4- जब कोई पानी ना हो, तो (अपने आपको साफ़ करने के लिए) खाने की चीज़ों के साथ, खाद, लकड़ी, जानवर का चारा, कोएला, किसी और की मिलकियत, मिट्टी का टुकड़ा या टाईल, नरकट, पत्तियाँ, एक कपड़े या काग़ज़ का टुकड़ा तहारत के लिए लेना मकरूह है।

5- एक शख़्स को जहाँ एक शख़्स हौज़ से वुज़ू करे उसे कफ़ उसमे थूकना या फ़ैकना नहीं चाहिए।

6- एक शख़्स को अपने वुज़ू वाले अज़ा को बताई गई हद से ज़्यादा या कम नहीं धोना चाहिए, ना ही उनको ज़्यादा या तीन बार से ज़्यादा नहीं धोना चाहिए।

7- एक शख़्स को अपने वुज़ू के अज़ा को जिस कपड़े को तहारत के लिए इस्तेमाल किया हो उससे मलना नहीं चाहिए।

8- चेहरा धोते वक्त, एक शख़्स को अपने चेहरे पर छींटे नहीं मारने चाहिए, बल्कि ऊपर माथे से नीचे की तरफ़ डालना चाहिए।

9- एक शख़्स को पानी की सतह पर झटका नहीं मारना चाहिए।

10- एक शख़्स को अपना मुँह और आँखें कस कर नहीं बंद करनी चाहिए। अगर होंटो या पलकों का एक छोटा सा बाहरी हिस्सा भी सूखा रह जाए, तो वुज़ू कुबूल नहीं किया जाएगा।

11- एक शख़्स को अपने सीधे हाथ से नाक से कफ़ नहीं निकालना चाहिए।

12- एक शख़्स को अपने हाथों को हर बार गीला करने के बाद, एक बार ही अपनी सिर, कानों या गरदन का मसह करना चाहिए। लेकिन इसको दोबारा कर सकते हैं बग़ैर हाथों को गीला किए हुए।

मिस्वाक का इस्तेमाल

वुज़ू करते वक्त मिस्वाक का इस्तेमाल करना सुन्नत-ए मुअक्किदा है। एक हदीस-ए-शरीफ़ का बयान हैः **(एक नमाज़ जो मिस्वाक इस्तेमाल करने के बाद अदा की जाए वो सत्तर गुना अफ़ज़ल है उस नमाज़ के जो बग़ैर मिस्वाक के की जाए।)**

(सिराज़-उल-वहाज) नाम की किताब में ये बयान है के मिस्वाक के इस्तेमाल के पन्द्रह फ़ाएदे हैंः

1- एक शख़्स की आखिरी साँस में कलिमाए शहादत पढ़ने का सबब है।

2- मसूढ़ों को मज़बूत करता है।

3- ये बलग़म को रोकती है।

4- ये पित्ते पर दबाव कम करता है। ये पेट में तेज़ाबियत बनने से रोकता है।

5- ये दाँत के दर्द को रोकता है।

6- ये गंदी साँस को रोकता है।

7- अल्लाह तआला उस शख़्स से ख़ुश होता है।

8- ये सिर की रगों को मज़बूत करता है।

9- शैतान उदास होता है।

10- उस शख़्स की आँखें चमकदार होती हैं।

11- वो बहुत सारी महरबानियाँ और अच्छे काम करता है।

12- वो सुन्नत के मुताबिक काम करता है।

13- उसका मुँह साफ़ होगा।

14- वो फ़साहत के साथ बोलता है।

15- दो रकाअत नमाज़ मिस्वाक का इस्तेमाल करने के बाद वुज़ू करके अदा करना उस सत्तर रकाअत नमाज़ की अदाएगी से ज़्यादा है जो वुज़ू में मिस्वाक इस्तेमाल किए बग़ैर अदा किए जाएँ।

मिस्वाक अरबिया में उगने वाले एक पेड़ एराक (पीलू) की जड़ है। इसे सीधे खात्मे कोई दो सेंटीमिटर छिलनी चाहिए, इस हिस्से को कई घंटों के लिए पानी में रखना चाहिए। जब तुम इसे दबाओगे, तो ये एक ब्रश की तरह खुल जाएगा। जब एराक पेड़ ना मिले, जैतून की टहनी से मिस्वाक बनाई जा सकती है। औरतों के जब रोज़े ना हों तो वो चिलग़म चबा सकती हैं, मिस्वाक का इस्तेमाल करने के बजाए, सुन्नत अदा करने की नियत से।

वुज़ू करते वक्त कुछ उसूलों का ध्यान करना

जब तक के ज़रूरत हो (सख्त ज़रूरत), मंदरजाज़ेल दस उसूल मानने चाहिएः

1- एक शख़्स दोनो हाथ से माज़ूर (या बिल्कुल ही हाथ ना हो) तहारत नहीं कर सकता। इसके बजाए वो अपने बाज़ूओं को मिट्टी पर रगड़ कर और चेहरे को एक दिवार के साथ रगड़ के वो तयम्मुम कर सकता है। या उसके चेहरे पर कोई ज़ख्म है, तो उसे बग़ैर वुज़ू के नमाज़ अदा करनी चाहिए ताकि उसकी नमाज़ ना छुटे।

2- अगर एक शख़्स बीमार है, उसकी बीवी, जारिया, बच्चें, बहनें, या भाई उसके वुज़ू अदा करने में मदद कर सकते हैं।

3- पत्थरों और उसी तरह की चीज़ों से तहारत करना ऐसा ही है जैसे पानी के साथ कर लिया हो।

4- अगर एक शख़्स जो पागल हो गया हो या बेहोश हो गया हो चौबिस घंटों में सही नहीं हुआ, तो उसे सही होने के बाद अपनी छोड़ी हुई नमाज़ों की (क़ज़ा) अदा नहीं करनी पड़ेगी। वो जो अपना होश शराब, अफ़ीम या दवाई लेने की वजह से खो चुका हो उसे अपनी सारी छोड़ी हुई नमाज़ें अदा करनी होगीं। एक शख़्स जो सख्त बीमार हो के वो लेटकर भी अपना सिर हिलाकर नमाज़ अदा ना कर पा रहा हो, चाहे वो होश में ही क्यों ना हो, तो उसे नमाज़ से छूट है। अगरचे, ये हालत चौबिस घंटे से ज़्यादा चली हो।

5- ये मुस्तहब है (एक नएमत का ज़रिया) के खास बैगी पाजामों का इस्तेमाल करना और सिर को ढांपना जबकि तहारखाने में घुसा जाए।

6- जब तहारखाने में दाखिल हुआ जाए तो एक शख़्स के हाथ में अल्लाह का नाम या कुरआन में से कुछ लिखा हुआ नहीं होना चाहिए।इसे किसी चीज़ से लपेटा हुआ होना चाहिए या ये एक शख़्स की जेब में हो।

7- एक शख़्स को अपने उलटे पेर के साथ तहारखाने के दाखिल होना चाहिए और अपने सीधे पेर के साथ बाहर होना चाहिए।

8- तहारखाने में एक शख़्स को उकड़ू बैठने के बाद अपने पौशिदा हिस्सों को खोलना चाहिए और उसे बात नहीं करनी चाहिए।

9- एक शख़्स को अपने पौशिदा हिस्सों को नहीं देखना चाहिए या खिराज को ना ही तहारखाने में थूकना चाहिए।

10- एक शख़्स को किसी भी पानी में मस्जिद की दीवार पर, कब्रिस्तान में, या किसी भी सड़क पर पैशाब (ना ही गंदगी साफ़ नहीं) नहीं करना चाहिए।

चीज़ें जो एक वुज़ू को खत्म करती हैं

सात चीज़ें वुज़ू को खत्म/मंसूख करती हैंः

1- सारी चीज़ें जो आगे और पीछे के अज़ा से खारिज होंः

a) पैशाब, पाखाना और रिहा खारिज होना एक वुज़ू को तोड़ता है।

b) जब एक एनेमा या एक आदमी की उंगली उसके पीछे दाखिल हो और निकाली जाए, अगर वो गीली हो, तो इससे वुज़ू टूट जाता है। अगर वो सुखी हो, तब भी ये अच्छा है के दोबारा वुज़ू किया जाए।

c) जब रूई का बाहरी हिस्सा जोकि आदमी और औरतों ने अपने आगे के हिस्सों में रखा वो गिला हो जाए, तो उनका वुज़ू खत्म हो जाएगा।

2- बग़ैर साफ़ हुई चीज़ों का मुँह से आनाः

a) उल्टी, अगर वो मुँह भर कर हो।

b) जब एक शख़्स थूके, अगर खुन थूक से ज़्यादा है तो ये वुज़ू को तोड़ देता है।

c) अगर पेट से या फ़फड़ों से जारी खुन पतला है अगरचे ये थूक से भी कम है तो, इमाम ए आज़म अबू हनिफ़ा के मुताबिक ये वुज़ू को तोड़ देगा।

d) अगर कोई भी तेल कान में डाला हुआ मुँह से निकल आए तो वुज़ू टूट जाता है।

3- खाल से चीज़ें खारिज होनाः

a) खून, पस या पीली बहने वाली शए।

b) अगर खुन या पीला मवाद एक शख़्स के छोटे पौक्स या किसी फ़ौड़े से सारी जगहों पर फ़ैल जाए जिन्हें गुस्ल के वुज़ू में धोया जाए, तो ये एक शख़्स का वुज़ू तोड़ देगा। मिसाल के तौर पर, अगर खून नाक से आ रहा है और नाक की हडडी तक चला गया तो वुज़ू टूट जाएगा। और अगर खुन कानों से आ रहा है कान के बाहर बह जाए तो एक वुज़ू टूट जाता है।

c) एक शख़्स के ज़ख्म के खुन को या उसके पीले मवाद को या फ़ौड़े (फुन्सी) को रूई से साफ़ करना।

d) अगर मिस्वाक या टूथ पिक पर खून मुँह में धब्बा डाल दे।

e) कान से, नाफ़ से या निपलों से किसी दर्द या बीमारी की वजह से पीप निकल आए तो वुज़ू टूट जाता है।

f) एक जोंक ज़्यादा खून चूस ले तो वुज़ू टूट जाता है।

4- सोना/नींद सेः

पहलू के बल या कमर या अपनी कोहनी के बल या किसी और चीज़ पर सोने से, वुज़ू टूट जाता है।

5- बेहोश होना, पागल हो जाना, या दोरा पड़ने से भी वुज़ू टूट जाता है।नशे में होकर चलते हुए इधर उधर हिलने से भी वुज़ू टूट जाता है।

6- नमाज़ के दोरान, रूकू के दोरान या सज्दे के दोरान हँसना नमाज़ और वुज़ू दोनों को तोड़ देता है।लेकिन ये एक बच्चे के वुज़ू को नहीं तोड़ता।जब एक मुसलमान नमाज़ पढ़ते वक्त मुस्कुराए, तो उनकी नमाज़ या वुज़ू नहीं खत्म होते।जब दूसरे मौजूद लोगों के ज़रिए सुन लिया जाए, तो इसे हँसना कहते हैं।जब एक शख़्स खुद अपनी ही **हँसी** ना सुन पाए तो उसे **मुस्कुराना** कहते हैं।

7- मुवाशरत-ए फाहिशा यानी, जब एक मर्द और औरत अपने ज़ाती हिस्से (सतर) को एक दूसरे पर रगड़ें।

अगर एक शख़्स को पता है के उसने वुज़ू किया है और शुबह हो के बाद में ये टूट जाएगा, तो ये माना गया के उसका वुज़ू है।अगर उसे पता है

के उसका वुज़ू टूट सकता है और शुबह हो के क्या उसे दोबारा वुज़ू करना चाहिए, तो उसे वुज़ू करना होगा।

चीज़ें जो एक वुज़ू को नहीं तोड़तीं

ये चीज़ें एक वुज़ू को नहीं तोड़तींः

1- कीड़ों का मुँह से, कानों या एक ज़ख्म से निकलना।

2-उल्टी में बलग़म।

3- उल्टी का पतला खून, सिर से निकले, तो इससे वुज़ू टूटता अगर वो थूक से कम है।

4- दाँत में से खून निकलने से वुज़ू नहीं टूटता अगर वो थूक से भी कम है।

5- गाढ़े खून का सिर से बहना एक वुज़ू को खत्म नहीं करता चाहे अगर वो थूक से ज़्यादा ही क्यों ना हो।

6- अगर पेट से या फ़फ़ड़ों से खून मिकदार में मुँह भर कर ना हो।

7- अगर कोई तेल कान में डाला जाए कान से या नाक से बाहर आ जाए।

8- अगर कोई चीज़ नाक में सूंगी गई वापिस आ जाए, चाहे अगर कई दिन बाद भी, तो ये एक वुज़ू को नहीं तोड़ता।

9- अगर एक शख़्स ने किसी चीज़ पर खून देखा जिसे उसने काटा हो।

10- सिवाए एक फ़ौड़े के, किसी और वजह से रोना, जैसे के प्याज़, धुएँ और दूसरी तरह की गैसों की वजह से, तो इससे वुज़ू नहीं टूटता।

11- एक औरत का अपने बच्चे को दूध पिलाना उसका वुज़ू नहीं तोड़ता।

12- पसीना, चाहे कितना भी आए।

13- नुकसानदह कीड़ें जैसे के मक्खियाँ, मच्छर, पिस्सू और जुएँ चाहे अगर कितनी ही काट लें तो उससे वुज़ू नहीं टूटता।

14- जिस्म पर थोड़ा सा ख़ून जो ना बहे, और थोड़ी से कै बाहर निकले, जोकि मुँह भर कर ना हो, वो एक वुज़ू को नहीं तोड़ती।

15- अगर एक शख़्स जिस चीज़ पर लेटा हुआ है वो अचानक ले ली जाए और वो गिरता नहीं है, जबकि वो सो रहा है, तो उसका वुज़ू नहीं टूटेगा।

16- नमाज़ में सोना।

17- टाँगों को ऊपर खींच और उनपर सिर रखकर सोने से वुज़ू नहीं टूटता।

18- एक तरफ़ पैर रखकर बैठकर सोने से वुज़ू नहीं टूटता।

19- एक नंगे जानवर पर सोने से वुज़ू नहीं टूटता, बशर्त ये के वो जानवर ऊपर चढ़ रहा है या एक हमवार सड़क पर।

20- जब एक मुसलमान नमाज़ अदा करते वक्त मुसकराए, तो उनकी नमाज़ या वुज़ू ख़त्म नहीं होता।

21- अगर कोई भी नहीं बल्कि जो शख़्स हँस रहा है वो इसे सुनले, तो इसे **दहक** कहते हैं, जो सिर्फ़ नमाज़ तोड़ता है।

22- अपने बालों, दाढ़ी, मूछों या नाखूनों को काटने से एक शख़्स का वुज़ू नहीं टूटता।

23- एक नासूर या ज़ख्म से खुरंट गिरने से भी वुज़ू नहीं टूटता।

वुज़ू की सहूलतें

मसह का मतलब है पोंछना। यहाँ दो तरह के मसह हैंः

1- मोज़ों पर मसहः

एक मोज़ा पानी सोकने वाला जूता होता है जो पैर के उस हिस्से को ढकता है जिसका (वुज़ू में) धोना फर्ज़ है। जब चमड़े के मोज़े इतने बड़े हों के पंज़े उन मोज़ों के सिरों तक ना पहुँच पाएँ और मसह उस खाली जगह पर किया जाए, तो मसह कुबूल नहीं किया जाएगा। मोज़ों का मज़बूत होना और इतना फ़ीट होना ताकि पैर उनमें से बाहर ना निकल पाएँ अगर तुम एक घंटे तक भी चलो।

मसह उन मोज़ों पर भी करने की इजाज़त है जिनके तलवे और पंजे के हिस्सों पर, या सिर्फ तलवों पर चमड़ा लगा हो।

मसह उन मोज़ों पर भी करने की इजाज़त है जो बहुत ज़्यादा चल्ने वाले हों के जब उनमे चलें तो गिरे नहीं।

मेसट (बग़ैर वुज़ू के होना) हदस की हालत को पैरों तक पहुँचने से रोकती है। इसलिए, अगर एक शख़्स सिर्फ़ अपने पैर धो लेता है, फिर मेसट पहन लेता है, और फिर अपना वुज़ू पूरा करता है, और उसके बाद अपना वुज़ू खो देता है, तो वो अपने मेसट पर मसह कर सकता है जब वो बाद में अपना वुज़ू अदा कर रहा हो।

मसह मेसट के ऊपरी हिस्से पर किया जाता है, ना की तलवे के नीचे।

सुन्नत के मुताबिक मसह अदा करने के लिए, सीधे हाथ पूरी पाँचों गिली उंगलियाँ सीधे मेसट की पूरी लम्बाई पर और उलटे हाथ की उंगलियाँ उलटे मेसट पर रगड़नी चाहिए, वो ऊपर टाँगों की तरफ़ खींछी जाएँगी, पंजों के (मेसट के) सिरों से शुरू करते हुए। हाथों की हथेलियाँ मेसट को नाा छुएँ। ये फ़र्ज़ है के मसह इतना हिस्सा कवर करे जितना के तीन उंगलियों की चौड़ाई हो और हाथ की तीन उंगलियों की लम्बाई की तरह हो।

अगरचे हाथों के पीछे से भी मसह करने की इजाज़त है, ये सुन्नत है हाथों के अंदरूनी हिस्सों से ही मसह की जाए।

अगर मेसट की बहरूनी सतह गीली घास पर चलने से या बारिश से नम हो जाए, ये मसह करने की तरह ही हो जाएगा।

मोज़ों पर मसह करने का वक्त एक शख़्स अगर मुकिम है तो चौवीस घंटे रख सकता है, किसी के लिए जो लम्बे सफ़र (यानी सफ़र) पर हो तीन दिन तीन रातें, यानी, बहत्तर घंटे तो मसह कर सकता है। ये वक्त उसका मोज़े पहनने से शुरू नहीं होता, बल्कि एक शख़्स के मसह पहनने के बाद वुज़ू से होता है। अगर एक शख़्स मोज़ा पहने हुए चौविस घंटे के अंदर अपने वुज़ू टूटने के बाद सफ़र के लिए निकलता है, तो उसे अपने मोज़ों पर तीन दिन और तीन रात के लिए मसह करना चाहिए। अगर ये शख़्स लम्बे रास्ते का सफ़र बनाता है (जब उसका वुज़ू टूट गया था) और चौविस घंटे या ज़्यादा घंटों के लिए बाद में (उसका वुज़ू टूटने के बाद) मूकीम हो जाता है, तो उसे अपने मोज़ें उतारने होंगे और अपने पैरों को धोना होगा जब उसे एक वुज़ू की ज़रूरत पड़े।

इस बात की इजाज़त नहीं है के किसी भी मेसट पर मसह किया जाए जिसमें इतने कटा हुआ हो के तीन पंजे चले जाएँ। अगर इससे छोटा है तो

इसकी इजाज़त है। अगर मोज़ों पर कई जगह पर छोटा कटा हुआ हो जो तीन पंज़ों के बराबर हो अगर उन्हें एक साथ रखा जाए, तो उस पर मसह करने की इजाज़त नहीं है। अगर एक मोज़े पर इतना कटा हो जिसमें से दो पंजें नज़र आ सकते हों और दूसरे में इतना कटा हो जिसमें से दो पंजे या एक देखा जा सके, तो एक शख़्स को उन पर मसह करना होगा। कटे हुए का साईज़ जो मसह को नामंज़ूर करता है वो इतना बड़ा हो के जो तीनों पंजों को, ना के सिर्फ़ तीनों पंजों की नोकों को दिखाए।

2- ज़ख्म या पट्टी पर मसहः

मरहम, रूई, जवीरह, फाया, प्लास्टर, पट्टी या उसी तरह की कोई चीज़, जोकि एक ज़ख्म, छाले, या कटे या खाल के फटने पर लगाया जाए, अगर इसका खोलना या निकालना नुकसानदह हो तो उसपर मसह किया जा सकता है।

एक शख़्स उज़र (माफ़ी) के साथ जब चाहे वुज़ू कर सकता है। इस वुज़ू के साथ वो जितनी मर्ज़ी फ़र्ज़ और नफ़ली इबादतों की नमाज़ अदा कर सकता है और जितना मर्ज़ी चाहे कुरआन अल करीम पढ़ सकता है। जब मुकर्रर किया हुआ नमाज़ का वक्त पूरा हो जाए, तो उसका वुज़ू अपने आप खत्म हो जाएगा। हर नमाज़ के वक्त के शुरू होने के वक्त नया वुज़ू करना, हर तरह की इबादत करने की इजाज़त देता है जबतक के नमाज़ का वक्त पूरा ना हो जाए।

एक उज़र होने के लिए किसी चीज़ की ज़रूरत है जो वुज़ू को लगातार तोड़ देती है। अगर एक शख़्स जो, किसी भी नमाज़ की इबादत के वक्त के दोरान, जोकि फर्ज़ हो अदा करनी, अपना वुज़ू रखने में नाकाम रहता है चाहे सिर्फ़ इतना लंबा के सिर्फ़ फर्ज़ नमाज़ अदा की हो, उसे किसी भी वक्त

वुज़ू करना होगा नमाज़ के वक्त के शुरू होने से उसके खत्म होने तक, तो वो एक उज़र वाला शख़्स बन जाता है। अगर एक शख़्स का ज़ख्म, जो एक उज़र रखता है, चाहे एक बार ही रिसे और वो भी थोड़े वक्त के लिए हर नमाज़ के वक्त में, तो उसका उज़र लगातार माना जाएगा।

गुस्ल (ज़रूरी धोना)

एक काबिले कुबूल नमाज़ के लिए एक सही वुज़ू और सही गुस्ल चाहिए होता है। हर औरत या मर्द के लिए जो जुनूब हो ये फर्ज़ है, और हैज़ (माहवारी) के बाद और निफ़ास (ज़चगी) के एक गुस्ल वुज़ू किया जाए जब वहाँ पर वक़्त की नमाज़ के अदा करने के लिए बहुत वक्त हो उस नमाज़ का वक्त खत्म होने से पहले। जुनूब होना सोहबत के ज़रिए या मनी खारिज होने के ज़रिए होता है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने एक हदीस-ए शरीफ़ में फरमाया **(एक शख़्स जो वुज़ू करने के लिए उठता है वो अपने जिस्म के बालों के बराबर नएमतें पाता है** [जिसका मतलब है बहुत सारे], **और ये भी के उसके बहुत सारे गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं। उसे जन्नत में ऊँचा दर्जा हासिल होता है। जो नेमतें उसे अपने गुस्ल की वजह से हासिल होंगी वो दुनिया में किसी भी चीज़ से ज़्यादा फाएदेमंद हैं। अल्लाह तआला ने फरिश्तों से फरमायाः मेरे इस गुलाम को देखो! बग़ैर कोई नारज़ामंदी दिखाए, वो मेरे हुकूम के बारे में सोचता है और रात में उठता है और जनाबत से गुस्ल अदा करता है। गवाह रहो के मैं अपने इस गुलाम के गुनाहों को माफ़ कर दूँगा।)**

एक हदीस-ए शरीफ़ में बयान हैः **(जब तुम नापाक हो जाओ, तो गुस्ल वुज़ू अदा करने में जल्दी करो! क्योंकि, किरामन कातिबीन उस शख़्स के**

ज़रिए तकलीफ़ पाते हैं जो जनाबत की हालत में रहते हैं।) हज़रत इमाम-ए ग़जाली ने कहा उन्होने एक शख़्स को सपने में देखा ये कहते हुए, मैं सिर्फ़ थोड़े वक्त के लिए जुनब/जुनूबी की हालत में रहा। जिसके नतीजे में, उन्होने एक आग की कमीज़ मेरे ऊपर फैंकी। और मैं अभी तक आग में हूँ। एक हदीस-ए शरीफ़ में बयान हैः **([अल्लाह के] हमदर्दी वाले फरिश्ते उस घर में नहीं घुसते जिसमें एक तस्वीर, एक कुत्ता, या एक जुनबी शख़्स हो।)**

अगर एक शख़्स, चाहे अगर वो अपनी रोज़ाना की नमाज़ें बराबर अदा करता हो, इबादत के वक्त उसने जनाबत की, उसे सख्त सज़ा दी जाएगी। अगर वो पानी से गुस्ल नहीं करता, तो उसे एक तयम्मुम कर लेना चाहिए। एक जुनूब शख़्स मंदरजाज़ेल चीज़ें नहीं कर सकताः **1-** वो कोई नमाज़ अदा नहीं कर सकता। **2-** वो कुरआन अल-करीम को और उसकी आयात को छू नहीं सकता। **3-** वो काबे के चारों तरफ़ तवाफ़ नहीं कर सकता। **4-** वो मस्जिद में दाखिल नहीं हो सकता।

एक गुस्ल के फराईज़

हन्फ़ी मसलक के मुताबिक गुस्ल में तीन फर्ज़ हैंः

1- पूरे मुँह को धोना। गुस्ल उस हालत में कुबूल नहीं हो सकता के जैसे के एक पिन की नौक बराबर जगह मुँह के अंदर गीली ना हो जाए या दाँतों या दाँत की खोखलापन गीले ना हो जाए।

2- नथनों को धोना। एक गुस्ल कुबूल नहीं किया जाएगा अगर एक शख़्स नाक के नथनों के नीचे सूखे नज़ले या मुँह के अंदर रोटी चबाए हुए टुकड़े को धोया ना जाए। हंबली मसलक के मुताबिक, पूरे मुँह को धोना और

नथनों को धोना वुज़ू और गुस्ल दोनों में फ़र्ज़ है। शाफ़ि-ई मसलक में गुस्ल की नेत करना फर्ज़ है।

3- जिस्म के हर अज़ा को धोना। नाफ़ के अंदर, मूँछ में, भौं में और दाढ़ी में यहाँ तक के उसके नीचे खाल में भी, सिर के बालों को भी धोना फर्ज़ है। अगर उंगली के नाखूनों, होंठों, पलकों या जिस्म के कोइ भी हिस्से पर [जैसे के नाखून पालिश], कोई भी ऐसी चीज़ जिस पर पानी न ठहरे, तो गुस्ल क़ुबूल नहीं किया जाता।

एक गुस्ल की सुन्नतें

1- सबसे पहले हाथों को धोना।

2- सतर को धोना।

3- जिस्म से किसी भी नजासत को धोना।

4- गुस्ल से पहले रसूम वुज़ू करना। जब चेहरे को धोएँ, तो गुस्ल करने का इरादा करना। शाफ़िई मसलक में इरादा करना फ़र्ज़ है।

5- पूरे जिस्म को रगड़ते हुए धोना तीन बार।

6- पूरे जिस्म को धोने के बाद, दोनो पेरों को धोना।

गुस्ल किस तरह किया जाए?

सुन्नत के मुताबिक गुस्ल का अदा करनाः

1- सबसे पहले हमें अपने हाथों को और पौशिदा हिस्सों को धोना चाहिए चाहे अगर वो साफ़ ही क्यों ना हो। फिर, अगर जिस्म पर कहीं नजासत लगी हो, तो हमें उसे साफ़ कर लेना चाहिए।

2- फिर हमें पूरा वुज़ू करना चाहिए। अपना चेहरा धोते वक्त हमें एक गुस्ल अदा करने का इरादा करना चाहिए। अगर हमारे पैरों के नीचे पूरा पानी नहीं पहुँचा, तो हमें अपने पैरों को भी धोना चाहिए।

3- फिर हमें अपने पूरे जिस्म पर तीन बार पानी बहाना चाहिए। इस तरह करते हुए, पहले हमें अपने सिर पर तीन बार पानी डालना चहिए, फिर सीधे कंधे पर तीन बार और फिर उल्टे कंधे पर तीन बार। हर बाार जब हम जिस हिस्से पर पानी डाल रहे हों तो वो हिस्सा पूरी तरह गीला होना चाहिए। पहली बार पानी डालने के दौरान हमें इसे आराम से रगड़ना भी चाहिए।

गुस्ल के दोरान, इस बात की इजाज़त है के एक अज़ू पर पानी डालते वक्त इसे दूसरे अज़ू पर भी बहने दिया जाए, जो, इस सिसिले में, भी साफ़ हो जाएगा। क्योंकि एक गुस्ल में पूरे जिम्स को एक अज़ू की तरह समझा जाता है। अगर एक वुज़ू करते वक्त एक अज़ू पर पानी बहाते वक्त दूसरा अज़ू गीला हो जाए, तो दूसरा अज़ू साफ़ नहीं समझा जाएगा। जब एक गुस्ल मुकम्मल हो जाए तो दोबारा वुज़ू करना मकरूह है। लेकिन अगर गुस्ल करते वक्त ये टूट गया तो ये ज़रूरी हो जाता है के दोबारा वुज़ू किया जाए।

वज़ाहत (मुलम्मा या भरे हुए दाँतों के बारे में)

हनफ़ी मसलक में, अगर दाँतों के बीच का, और दाँत की कैविटी के अंदर का हिस्सा, गीला नहीं होता, तो गुस्ल क़ुबूल नहीं किया जाएगा। इसलिए, जब दाँतों में मुलम्मा या भरवाते हैं, तो गुस्ल सही (माना) नहीं जाता। एक शख़्स जनाबत से बाहर नहीं आता। दूसरे लफ़्ज़ों में, जब पानी दाँतों के मुलम्मे

और भराई में नहीं पहुँचता, जोकि सोने, चाँदी, या किसी और चीज़ माद्दे से बने होते है जोकि नजस नहीं है, तो हनफ़ी मसलक के आलिमों के मुताबिक, गुस्ल वुज़ू क़ुबूल नहीं किया जाता।

तहतावी अपनी **मराकिल-फलाह** की वज़ाहत के छियानवें सफ़ेह और अपनी **नएमत-ए इस्लाम** के तुर्की तर्जुमे में भी मंदरजाज़ेल लिखते हैंः "एक हनफ़ी का शाफ़ई मसलक की किसी चीज़ की नकल करना जोकि वो अपने मसलक में नहीं कर सकता तो इसमें कोई नुकसान नहीं है।इसी तरह का **बहरूरराइक** और **नहरूलफ़ाईक** किताबों में भी लिखा है।लेकिन ऐसा करने के लिए उसे उस मसलक की शराइत को भी पूरा करना होगा।अगर वो बग़ैर हर्ज के नकल कर रहा है और शर्तो को ध्यान में नहीं रखता तो वो एक **(मुलाफ़ीक)** कहलाएगा, यानी, वो शख़्स जो सहूलतों को देखता है और हासिल करता है।इस बात की इजाज़त नहीं है।

एक शख़्स जो अपने ख़ुद की मसलक का फ़र्ज़ अदा नहीं करता तो वो इसे करने में दूसरे मसलक की नकल कर सकता है।लेकिन ऐसा करने के लिए उसे उस मसलक की शर्तो को भी पूरा करना होगा।मालिकी या शाफ़ीई मसलक की नकल/तकलीद करने के लिए ये काफ़ी है के जब तुम एक गुस्ल कर रहे हो या वुज़ू कर रहे और जब नमाज़ अदा करने की नीयत करो तो ये याद रखना काफ़ी है के तुम मालिकी या शाफ़िई मसलक की तकलीद कर रहे हो।दूसरे लफ़ज़ों मे, उस शख़्स का तब ही क़ुबूल होगा अगर, शुरू में ही, वो अपने दिल में ये ख्याल डाल लेः **(मैं नीयत कर रहा हूँ गुस्ल की और मालिकी [या शाफ़ि-ई] मसलक की तकलीद करने की।)** जब हनफ़ी मसलक का एक शख़्स जिसके दाँत में मुलम्मा चढ़ा हो या भरा हुआ हो इस तरह से नीयत करे तो उसका गुस्ल सही है।वो अपने आपको जुनूब हालत से आज़ाद कराएगा और पाक हो जाएगा।जब वो मालिकी या शाफ़ि-ई मसलकों की नकल करेगा,

तो उसके रसूम वुज़ू और नमाज़ें सही होगीं। वो एक जमाअत की नमाज़ अदा कराने में इमाम हो सकता है जिनकी कोई दाँतों का मुलम्मा या भराई ना हो।

उनके लिए जो शाफ़ि-ई मसलक की नकल कर रहें हो; ये ज़रूरी है के जब वो रसूम इबादत जमाअत में अदा कर रहे हों तो सूरह फातिहा को पढ़ना चाहिए। और, जब दो मुख़ालिफ़ जिंसों के लोगों के बीच जिनको शादी की इजाज़त हो सकती है आपस में एक दूसरे को छुएँ, तो नमाज़ के लिए एक वुज़ू, (नाकि गुस्ल, यानी) अदा करना दोनो के लिए ज़रूरी हो जाता है; इसी मामले के लिए जब दोनों जिंसों में से हर एक, हथेली से दोनो में से किसी के भी अज़ा को छुए अपनी तबीयत को आराम पहुँचाने के लिए, अपने जिस्म पर या किसी और पर, तो उन्हें नमाज़ के लिए वुज़ू की ज़रूरत पड़ेगी। उन्हें नजासत से भी परहेज़ करना होगा, चाहे अगर वो मिकदार में थोड़ी ही क्यों ना हो। जब ये लोग नमाज़ अदा करने की ज़रूरत समझें, या कुरआन अल-करीम को पकड़ने की सोचें, तो उन्हें वुज़ू करना होगा जोकि शाफ़ि-ई मसलक के मुताबिक भी जाईज़ है। एक हनफ़ी मुसाफ़िर (एक शख़्स जो सफ़र कर रहा हो) के लिए, ज़ोहर और असर की या मुग्रिब और ईशा की नमाज़ को मिलाने के लिए तकदीम के या ताख़ीर के ज़रिए, शाफ़ि-ई मसलक की तकलीद करते हुए, तो उसे शाफ़ि-ई मसलक के मुताकि वुज़ू करना होगा।

हैज़ (माहवारी) और निफ़ास (ज़च्चगी) औरतों की हालतें

वहाँ पर ग्यारह तरह के गुस्ल हैं, जिनमें से पाँच फर्ज़ हैं। उनमें से दो में एक औरत शामिल है जो हैज़ (माहवारी) और निफ़ास (ज़च्चगी) की हालतों से बाहर निकलने पर गुस्ल करती हैं।

इबन आबिदिन अपनी किताब (**मनहल-उल-वारिदीन**) में कहते हैंः फ़िकह के आलिमों के ज़रिए ये इतेफ़ाक राए से ज़ाहिर हुआ के हर मुसलमान, मर्द और औरत, को इस्लामी तालीम हासिल करनी चाहिए ये हर मुसलमान औरत के लिए फर्ज़ है के हैज़ और निफ़ास की तालीम सीखना। हर मुसलमान मर्द को हैज़ और निफ़ास का इल्म सीखना चाहिए जब उसकी शादी होने लगे। जब उसकी शादी हो जाए, तो उसे अपनी बीवी को ज़रूर सीखाना चाहिए।

हैज़ वो खून है जो एक सेहतमंद लड़की के जेनिटल अज़ा से निकलना शुरू होता है कुछ दिनों के लिए या महीनों या कुछ सालों के लिए जब वो आठ साल की हो जाती है और नवें साल में लग जाती है, या एक औरत का पूरे दिनों की पाकी के बाद उसके पिछले हैज़ के वक्त के मुकाबले और जो कम से कम तीन दिन, यानी बहत्तर घंटों तक उस लम्हे से जब इसे पहली बार देखा गया। कोई भी रंगीन बहने वाली शए, सिवाए सफ़ेद (बेरंग) माए को छोड़कर, सब हैज़ का खून कहलाएंगी। जब एक लड़की का हैज़ शुरू होता है, तो वो बालिग़, (जवान) हो जाती है, यानी एक औरत बन जाती है। वो मज़हब के एहकाम और मुमानियतों को मानने के लिए ज़िम्मेदार बन जाती है।

जब खून को देखा गया उस वक्त से और जब तक खून खत्म हो गया उन दिनों को आदत (**हैज़/माहवारी की वक़्फा**) कहते हैं। हैज़ की मुददत ज़्यादा से ज़्यादा दस दिन और कम से कम तीन दिन है। हर औरत को अपनी हैज़ की मुददत को दिनों और घंटों में ध्यान रखना होगा। जब एक लड़की आठ साल से ऊपर हो जाती है, तो ये उसकी माँ के लिए फर्ज़ हो जाता है या, अगर उसकी माँ नहीं है, तो उसकी दादी नानी, बड़ी बहनें, फुफ़ियाँ और खालाएँ सब ही, उसे हैज़ और निफ़ास के बारे में बताए।

निफ़ास का मतलब है ज़च्चगी की हालत। ये एक बच्चे के पैदा होने के बाद एक औरत की बच्चेदानी से जो खून निकलता है वो होता है। निफ़ास के लिए कोई कम से कम मुददत नहीं है। जब खून रूक जाए तो उसे फौरन गुस्ल कर लेना चाहिए। ज़्यादा से ज्यादा निफ़ास की मुददत चालीस दिन है। चालीस दिन के बाद वो गुस्ल कर सकती है और नमाज़ शुरू कर सकती है

चाहे अगर खून जारी हो। चालीसवें दिन के बाद खून निकलना इसतिहादा [यानी, उज़र है] है। औरतों को अपनी निफ़ास की मुददत को भी याद रखना चाहिए।

तीन दिन से, या बहत्तर घंटों से कम खून का निकलना, चाहे अगर वो पाँच मिनट से भी कम हो, या, इस नई बालिग़ लड़की के लिए, दस दिन के बाद खून जब ये दस दिन से ज़्यादा के लिए जारी रहे या, उसके लिए जो नया ना हो, आदत के बाद खून का जारी रहना जब ये दोनो ही आदत के दिनों से ऊपर और दस दिन से ज़्यादा लगातार जारी रहे, या हामला औरत का खून या आइसा (बूढ़ी) औरत या नौ साल से नीची लड़की के लिए, ये माहवारी/हैज़ नहीं है। इसे **इसतिहादा** कहेंगे। इसतिहादा का ज़्यदा खून एक बीमारी की अलामत है। अगर ये काफ़ी अरसा कायम रहे तो खतरनाक हो सकता है, इसलिए जिस शख़्स को हो उसे औरतों के इमराज़ के माहिर को दिखाना चाहिए।

एक औरत जो इसतिहादा के दिनों में चल रही हो उसे ऐसा शख़्स माना जाएगा जो एक माफ़ी (उज़र) के साथ हो ठीक उसी तरह जैसे किसी की नाक से लगातार खून आना; बहरहाल, उसे नमाज़ और रोज़ा अदा करना होगा।

हैज़ या निफ़ास के दौरान नमाज़, रोज़ा, तिलावत और शुक्र सजदा, कुरआन अल-करीम को पकड़ना मस्जिद में दाखिल होना, काबे के चारो तरफ़ तवाफ़ करना, और सोहबत करना सब हराम (ममनुअ) हैं। बाद में वो उन रोज़ों की कज़ा अदा कर सकती है, लेकिन उन नमाज़ की इबादतों की नहीं जो उसने अदा नहीं की। एक औरत को अपने खाविंद को बता देना चाहिए के कब उसका हैज़ शुरू होगा। हमारे पैग़म्बर 'सल्ललाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(एक औरत जिसने अपने मियाँ से अपने हैज़ के शुरू होने और खत्म होने को छुपाया वो नफ़रतज़दा है।)** जब हैज़ और निफ़ास खत्म हो जाए तो फ़ौरन गुस्ल करना फर्ज़ है। ये अल्लाह तआला का एक एहकाम है।

यहाँ पर कई अल्फ़ाज़ हैं जो एक निकाह को रद करने की वज़ूहात बनते हैं, यानी तलाक। एक शख़्स को अपने निकाह के खोने की इसी तरह डर होना चाहिए जैसे के उसे अपने ईमान के खोने का डर होता है। तुर्की किताब **(तम इलमिहाल)** के **585**वें सफ़ेह को देखिए!

हक तआला अपने गुलामों के ज़रिए बदला लेता है वो जो रूहानी इल्म नहीं जानते अल्लाह तआला के ज़रिए बखशे जाते हैं सोचते हैं के ये गुलामों के ज़रिए हुआ

सब चीज़ें खालिक की हैं, ये गुलामों के ज़रिए कराई जाती हैं। ये मत सोचो के, बगैर उसकी मर्ज़ी के, एक भूसे का टुकड़ भी हिल सकता हे !

तयम्मुम

तयम्मुम का मतलब है मिट्टी का इस्तेमाल करते हुए पाक होना। जब तुम्हे पानी न मिले या दस्तयाब पानी को इस्तेमाल करना मुमकिन न हो, तो तुम्हे किसी चीज़ जैसे के साफ मिट्टी, रेत, या पत्थर (वो साफ़ हों और मिट्टी के हों)

उनसे तयम्मुम कर लेना चाहिए वुज़ू या गुस्ल की जगह पर।एक नमाज़ के वक्त के शुरू होने से पहले तयम्मुम कर लेना हनफ़ी मसलक में सही है, (जिसका मतलब है के नई इबादत की जा सकती है, जब इसका वक्त शुरू हो, उस तयम्मुम के साथ जो तुमने उसके शुरू होने से पहले किया।) बाकी तीनों मसलकों के मुताबिक ये सही नहीं है नमाज़ के वक्त से पहले शुरू करना, (तुम रोज़ाना की पाँच नमाज़ों में से एक को तयम्मुम के साथ अदा नहीं कर सकते उसके मुकर्रर वक्त के शुरू होने से पहले)।

तयम्मुम एक सहूलत है रसूम वुज़ू या गुस्ल अदा करने के लिए।हमारे मज़हब में, मिट्टी के साथ तयम्मुम करना ऐसा ही है जैसे पानी का इस्तेमाल करके पाक होना।हमारे मज़हब ने साफ़ बताया है के बहुत सारी नजासतें मिट्टी से साफ़ की जा सकती हैं।

कुछ खास हालतें जिनमें तयम्मुम दरकार हैः

1- साफ़ पानी को ढूँढने में नाकाम होना वुज़ू या गुस्ल करने के लिए (जब तुम शहर में हो तो ये हमेशा फर्ज़ होता है के पानी तलाश किया जाए।)

2- कोई बीमारी जो तुम्हे पानी इस्तेमाल करने से रोके या खतरा हो के वो मर जाएगा या ठंड की वजह से बीमार हो जाएगा उन हालतों में जहाँ पानी इस्तेमाल हुआ।

3- अगर वहाँ पर कोई दुश्मन, एक वहशी या ज़हरीला जानवर हो।

4- कैद में हो और पानी को इस्तेमाल करने के काबिल न हो।

5- मार दिए जाने का खतरा हो।

6- अगर मुसाफ़िर के पास पीने के पानी के अलावा और कोई पानी न हो।

7- अगर एक शख़्स कुए से पानी न खींच पाए।

तयम्मुम के फराईज़

तयम्मुम के तीन फराईज़ है। वुज़ू या गुस्ल की जगह तयम्मुम का तरीका एक जैसा ही है। सिर्फ़ एक फ़र्क है वो है नीयत का। वुज़ू की जगह जो तयम्मुम किया गया वो गुस्ल की मिकदार के बराबर नहीं है। गुस्ल के लिए भी ऐसा ही तयम्मुम सही है, तुम्हें एक गुस्ल के लिए भी नीयत करनी होगी।

1- जनावत से पाकी की नीयत करना या बगैर वुज़ू की हालत से। अगर एक शख़्स जिसका कोई वुज़ू नहीं है, अपने शार्गिदों को सिखाने के लिए तयम्मुम करता है, तो वो एक फर्ज़ नमाज़ इस तयम्मुम के साथ अदा नहीं कर सकता।

2- अपनी दोनो हथेलियों को साफ़ मिट्टी पर मलना, फिर पूरे चेहरे का मसह करना।

3- दोनो हाथ साफ़ मिट्टी पर मलने के बाद, पहले सीधे बाज़ू का, फिर उलटे बाज़ू का मसह करना चाहिए।

वहाँ पर कुछ आलिम हैं जो कहते हैं के तयम्मुम के दो फ़राईज़ हैं। उन्होने दूसरे और तीसरे फर्ज़ को मिला दिया और उन्हें एक बताया। दोनों तरीके सही हैं।

तयम्मुम की सन्नतें

1- बिस्मिल्लाह (अल्लाह तआला के नाम में) के साथ शुरू करना।

2- हथेलियों को मिट्टी पर रखना।

3- हथेलियों को मिट्टी पर आगे पीछे फिराना।

4- अगर हथेलियों में मिट्टी लगी रह जाए, तो हाथों के अंगूठों से ताली बजाओ जब तक पूरी तरह मिट्टी न हट जाए।

5- जब हाथों को मिट्टी पर रखो तो उंगलियों को खोल लो।

6- पहले चेहरे पर मसह करो, फिर सीधे हाथ/बाज़ू पर और फिर उलटे बाज़ू पर।

7- वुज़ू की तरह इसे जल्दी अदा करना।

8- हाथों और चेहरे पर कोई ऐसी जगह न छोड़ना जिसका मसह न हो।

9- तयम्मुम से पहले, जहाँ पानी मिलने की उम्मीद हो वहाँ उसे ढूँढा जाए।

10- हाथों को मिट्टी पर रखकर उसे ऐसे झाड़ों जैसे उसे मार रहे हो।

11- जिस तरह ऊपर बताया गया है उस तरह बाज़ूओं का मसह करो।

12- उंगलियों के बीच में मसह करो, और इस तरह करते वक्त, जो अंगूठी तुमने पहनी है उसे हिलाओ।

तयम्मुम के मुताबिक तवज्जुह देने के लिए ज़ाएद पौइण्टस

1- अगर एक शख़्स बग़ैर बुज़ू के अपने शार्गिदों को सीखाने की गर्ज़ से तयम्मुम करता है, तो वो उसके साथ नमाज़ अदा नहीं कर सकता।

2- तयम्मुम के लिए अकेले नीयत करना इस तयम्मुम के साथ नमाज़ अदा करना काफ़ी नहीं है।ये ज़रूरी है के नमाज़ अदा करने के लिए तयम्मुम की नीयत करना।

3- बहुत सारे एक ही मिट्टी पर तयम्मुम करते हैं।इस वास्ते, मिट्टी और इसी तरह की दूसरी चीज़ें जब तयम्मुम के लिए इस्तेमाल की जाएँ तो मुसतमल न हो जाएँ।जो धूल हाथों और चेहरे से तयम्मुम के बाद गिरती है वो मुसतमल होती है।

4- शाफ़ि-ई और हंबली मसलकों के मुताबिक, एक तयम्मुम सिर्फ मिट्टी पर ही किया जा सकता है।दूसरे मसलकों के मुताबिक, तयम्मुम किसी भी तरह से साफ़ मिट्टी की चीज़ से किया जा सकता है, चाहे अगर उसपर कोई धूल ही न हो।चीज़ें जो जल जाए और राख में बदल जाएँ या जो आग से पिघल जाएँ वो मिट्टी की नहीं होतीं।इसलिए, तयम्मुम पेड़ों, घास, लकड़ी, लोहे, तांबे, पीतल, रोग़नी दीवारें, सोने या शीशे पर नहीं किया जा सकता।ये रेत पर किया जा सकता है।मोतियों या मुंगे पर नहीं किया जा सकता।इसे पाक मिट्टी, रेत, पत्थर, चूना, मिट्टी कच्चे या पक्के बर्तन जिन पर रंग न हो, मिट्टी की कच्ची या पक्की ईंट, मिट्टी या ईटों या पत्थर या चूने की दीवार गीरू और मुल्तानी पर इसे कर सकते हैं।अगर वहाँ पर सिर्फ़ मिट्टी हो, तो उस्से

तयम्मुम किया जा सकता है, अगर उसमें जो पानी है वो पचास फीसद से भी कम हो।

5- इस बात की इजाज़त है के कई फ़र्ज़ी इबादतें एक तयम्मुम के साथ अदा करली जाएँ।

6- जब एक मुसाफिर (सफर) को ख़ास इशारों के ज़रिए पक्के तौर पर मान ले, या एक मुसलमान जोकि एक आदिल के ज़रिए आगाह किया जाए बालिग़ और होश की उमर को पहुँच चुका हो, उसे बताए के दो किलोमिटर से भी कम फासले पर उसे पानी मिल जाएगा, तो ये उसके लिए फ़र्ज़ हो जाएगा के चलकर पानी ढूँढे या हर सिमत में किसी को भेजे दो सौ मिटर तक।अगर उसे पक्की उम्मीद न हो तो उसे पानी के लिए देखने की ज़रूरत नहीं है।

7- अगर एक शख़्स जिसके साथ उसका आदिल दोस्त हो, बग़ैर पानी के लिए पूछे हुए तयम्मुम करे और नमाज़ अदा करनी शुरू करदे, और बाद में उसे बताए जाए के वहाँ पानी है, तो उसे वुज़ू करना होगा और नमाज़ दोबारा अदा करनी होगी।

8- इस बात की इजाज़त है के तयम्मुम करके नमाज़ अदा करली जाए, जबकि पानी दो किलोमिटर दूर हो।

9- एक शख़्स जो भूल गया हो के उसकी सहूलियात में पानी है, वो तयम्मुम करके नमाज़ अदा कर सकता है, अगर वो शहर, गाँव [या किसी भी आबाद जगह पर] में नहीं है।

10- अगर एक शख़्स जो ये सोचे के उसका पानी खत्म हो जाएगा, लेकिन बाद में पता लगा के नमाज़ के बाद भी उसके बाद पानी है, तो उसे वो नमाज़ दोबारा अदा करनी होगी जो उसने तयम्मुम अदा करके की।

11- एक मुसाफिर के लिए ये वाजिब है, (यानी एक मुसलमान का लम्बे सफ़र पर होना) के जो उसके साथ हैं उनसे पानी के लिए पूछे अगर वो उसे पानी देने से मना करदें, तो वो तयम्मुम करके नमाज़ अदा कर सकता है। अगर एक मुसाफ़िर का दोस्त वाजिब पैसे में पानी बेच रहा है, तो मुसाफिर को चाहिए उसे खरीद ले अगर ऐसा कर ने के लिए उसके पास ज़ाएद पैसा है तो। अगर उसका मालिक ग़बन-ए फाहिश पर बेच रहा है, यानी, ज़्यादा पैसा (ग़ैर मामूली पैसे) लेकर, या अगर मुसाफिर के पास वाजिब दाम भी न हो इसे खरीदने के लिए, तो उसे इजाज़त है के तयम्मुम करके नमाज़ अदा कर सकता है।

12- एक शख़्स तयम्मुम कर सकता है, जबकि पानी वहाँ मौजूद हो लेकिन सफ़र के दोरान पीने के लिए दस्तयाब हो (अगर वहाँ पर शर्ते हों जैसे के सेहरा में होना)।

13- अगर वहाँ पर दस्तयाब (मुबाह) पानी की मिकदार कम है, एक शख़्स जोकि जनबी हो वो उस औरत पर फ़ौकियत ले सकता है जिसकी हैज़ की मुददत नई खत्म हुई हो, उस शख़्स के ऊपर जो बग़ैर वुज़ू के हो, एक मरे हुए मुसलमान पर, वो उस पानी को धोने के लिए (जोकि चारों ही मामलों में ज़रूरी है) इस्तेमाल कर सकता है। पानी के मालिक को सब पर फ़ौकियत है। जब पानी मुख्तलीफ़ मालिक का हो, तो उसे एक साथ मिलाया जाए, मुसलमान की मैय्यत को पहले नहलाया जाएगा।

14- अगर एक शख़्स जो जुनूब है वो तयम्मुम करता और फिर अपना वुज़ू खो देता है, तो वो जुनूब नहीं बन जाता। अगर वहाँ पर थोड़ा पानी है तो वो सिर्फ़ एक वुज़ू करे।

15- अगर जुनूब की जिस्म का आधे से ज़्यादा सतह बीमार है, जैसे के एक ज़ख्म, चेचक या बहुत तेज़ बुखार है, तो वो एक तयम्मुम कर सकता है। अगर उसकी खाल का ज़्यादा हिस्सा सेहतमंद है और अगर ये मुमकिन हो के बीमार हिस्से को गीला किए हुए बग़ैर वो अपने को धो सकता है, तो वो पानी के साथ गुस्ल कर सकता है। अगर वो ऐसा नहीं कर सकता, तो उसे तयम्मुम कर लेना चाहिए।

तयम्मुम किस तरह किया जाए?

1- सबसे पहले, अपने आपको जनाबत या बग़ैर वुज़ू की हालत से पाक करने की नीयत करनी चाहिए।

अकेले तयम्मुम की नीयत करना तयम्मुम को उसके साथ नमाज़ अदा करने के लिए काफ़ी नहीं है। ये भी ज़रूरी है के कुछ चीज़ करने के लिए जैसे इबादत (नमाज़) अदा करने के लिए नीयत करना; मिसाल के तौर पर, जनाज़े की नमाज़ अदा करने के लिए, सजदा-ए तिलावत के लिए, या वुज़ू या एक गुस्ल की जगह तयम्मुम अदा करने की नीयत करके तयम्मुम करना।

जब तयम्मुम अदा करने की नीयत करें तो ये ज़रूरी है के वुज़ू और गुस्ल को एक दूसरे से अलग अदा किए जाएँ। एक शख़्स उस तयम्मुम के साथ नमाज़ अदा नहीं कर सकता जो उसने अपने आपको जनाबत से पाक होने के लिए किया था। वुज़ू के लिए ज़रूरी है एक दूसरा तयम्मुम किया जाए।

2- दोनो आस्तिनों को कुहनियों तक मोड़ते हुए ऊपर करो और दोनो हथेलियों, को उंगलियों के साथ खोलो, उन्हें ऊपर और नीचे रगड़ो और हिलाओ साफ़ मिट्टी पर, पत्थर या एक चूने या मिट्टी वाली दीवार पर। फिर एक शख़्स चेहरे पर दोनो हथेलियों से एक बार मसह करते हैं, यानी, चेहरे पर इतने आराम से रगड़ो इतने हिस्से में हर हथेली की तीन उंगलियों के बराबर वो चेहरे को हुए। अगर तुम्हारे चेहरे के किसी भी हिस्से जैसे के पिन की नौक के बराबर अगर तुम्हारे हाथ से अनछुए रह गए तो तयम्मुम सही नहीं होगा।

चेहरे पर एक मुकम्मल मसह करने के लिए, दोनों हाथ की खुली हथेलियाँ, हर हाथ की चारों उंगलियों को साथ में मिलाओ और अपनी दो लम्बी उंगलियों के सिरों को दोनो हाथ से मिआओ, और इस तरह से माथे पर रखो जैसे के वो रूएँ पर रखे हों, और आहिस्ता से थोड़ी तक नीचे ले जाओ। एक सतर पर उंगलियों को माथे पर, पलकों पर, नाक की दोनो तरफ़, होंठों पर, और थोड़ी के चेहरे वाले हिस्से पर रगड़ो। इसी तरह हथेलियों को गालों पर रगड़ो।

3- दूसरी बार हाथों को मिट्टी पर रखो और हाथों को ताली बजाओ ताकि ज़्यादा मिट्टी और धूल झड़ जाए, पहले उलटे हाथ की चारों उंगलियों के अदरूनी हिस्सों को रगड़ो सीधे हाथ की उंगलियों के सिरो के नीचे रखकर खेचते हुए कुहनी तक ले जाओ। इस तरह ले जाने में सीधे हाथ के नीचे हाथ फिर जाएगा। फिर बाएं हाथ की हथेली सीधे हाथ के ऊपर की तरफ़ कुहनी से उंगलियों तक खेंचते हुए लाओ और बाएँ हाथ के अंगूठे अन्दर की तरफ़ को सीधे हाथ के अंगूठे की पीठ पर फेरो, फिर इसी तरह सीधे हाथ के अंगूठे की पीठ पर फेरो, फिर इसी तरह सीधे हाथ को बाएं हाथ पर फेरो फिर उंगलियों का खिलाल करो। अगर अंगूठी पहनी हो तो उसे उतारना या हिलाना ज़रूरी है। हथेलियों को मिट्टी पर रगड़ो, लेकिन मिट्टी और धूल को हाथों पर रहना चाहिए।

वुज़ू के लिए और एक गुस्ल के लिए तयम्मुम करना ज़रूरी है।

चीज़ें जो एक तयम्मुम को खारिज करती हैं

तयम्मुम के जो उज़्र ज़रूरी हैं जब वो खत्म हो जाएँ तो तयम्मुम रद और खारिज हो जाता है, जब पानी मिल जाए, और उन चीज़ों की हालत में जब एक शख़्स का वुज़ू या गुस्ल खारिज हो जाए।

वुज़ू, गुस्ल और तयम्मुम के फाएदे

इन पाकियों/सफ़ाईयों से जो इबादत करने के लिए की जाती हैं बहुत सारे फाएदे उठाए जा सकते हैं। हमारी दिमाग़ी सेहत साथ के साथ जिस्मानी सेहत के मामले में इसके बहुत फ़ायदे हैं। हम उन फाएदों में से कुछ मंदरजाज़ेल बता रहे हैंः

1- हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में, हमारे हाथ हर तरह के जरासिमों के राबते में आते हैं। वुज़ू करते वक्त हाथों, चेहरे और पैरों को धोना छूत और खुजली की बीमारियों के खिलाफ़ बहुत असरदार है। कुछ जरासिम और बीमारियों पैदा करने वाले कीड़े खाल के ज़रिए जिस्म में घुस जाते हैं।

2- अपने नथनों को धोने के ज़रिए जोकि हमारी साँस के निज़ाम के मालिक हैं, हम धूल और जरासिमों को अपने पूरे जिस्म में दाखिल होने से बचाते हैं।

3- चेहरे को धोने से खाल मज़बूत होती है। ये सिरदर्द और थकान को हल्का करता है। ये नसों और रगों को उभारता है। इस वजह से, वो लोग जो लगातार वुज़ू करते हैं अपने चेहरे की ख़ुबसूरती को नहीं खोते चाहे जब वो बूढ़े ही क्यों न हो जाएँ।

4- उन मामलों में जिनमें एक गुस्ल की ज़रूरत होती है, एक बड़ी ताकत सर्फ़ होती है, दिल की धड़कन और ख़ून का दौरान बढ़ जाता है, साँस का उतार चढ़ाओ भी बढ़ जाता है। जिस्म की बढ़ी हुई हरकात थकान को कम करती हैं और आराम का सबब बनती हैं। आमतौर से, दिमाग़ी हरकत अच्छी ख़ासी आहिस्ता हो जाती है। गुस्ल के साथ, जिस्म अपनी पूरानी ताकत पा लेता है। दवा के इलाज के तदारक के तौर पर, जिस्म को बराबर धोना बहुत अहम है।

5- आम हालतों में, हमारे जिस्म में साकन बरकी कुव्वत बाकी होती है। एक जिस्म की सेहत इस बरकी ताकत से नज़दीकी मिलती हुई होती है। ये नफ़सियाती दवाओ, मौसमी हालात, कपड़ों, रहने की हालत और काम करने की जगह, और रियास्तों की वजह से नाहमवार/ग़ैरमतावाज़न हो जाता है जिसके लिए एक शख़्स को गुस्ल करना चाहिए। ये बरकी वज़न गुस्से में चार गुना और जब एक शख़्स को गुस्ल की ज़रूरत हो उस वक्त बारह गुना बढ़ जाता है। आज, इतना दिखने वाली शुआओ के साथ, बाहरी ख़ाल की तस्वीरें ली जा सकती हैं। ये मालूम किया गया है के, सोहबत करने के बाद, जिस्म की पूरी सतह इस ज़ाएद साका बरकी वज़न से ढक जाती है। ये परत ख़ाल की ऑक्सीजन तबादले को रोकती है। ये ख़ाल के रंग को फीका करती है और जल्दी झुर्रियाँ लाती है। इससे बचने के लिए, ये ज़रूरी है के पूरे जिस्म को धोया जाए, किसी भी हिस्से को बग़ैर धूले न छोड़ा जाए, चाहे वो धब्बा एक पिन के सिरे के बराबर ही क्यों न हो। इस तरह, पानी जिस्म को मनफ़ी बरकी वज़न लेने का सबब बनाती है और जिस्म को उसकी असली हालत में पहुँचाती

है। इसलिए, दवाई के असबाब के तौर पर भी, गुस्ल एक लाज़मी सफ़ाई बन गई है।

6- वुज़ू और गुस्ल घूमाने के निज़ाम पर भी मसबत असर डालता है। वो नसों की सख्ती और तंगाई को बचाता है। वुज़ू में, इलाकाई घुमाओ होता है। गुदूदी निज़ाम ऊपर की नाक और गले की गुठली को धोने से उभरती है। इसके साथ ही, गले को और उसके हाशिए को धोने से गुदूदी निज़ाम पर असर पड़ेगा। इस गुदूदी घूमाओ से, जो वुज़ू और गुस्ल के ज़रिए आसान कर दिए गए हैं, बचाओ के वाले लिए जिन्हे lymphocyte कहते हैं वो जिस्म को नुकसानदायक माददों से बचाती है और जिस्म के मुकाबले को बढ़ाती है।

7- तयम्मुम, जोकि मिट्टी या मिट्टी के सामान से किया जाए, जब वहाँ पानी न हो तो, वो भी जिस्म की साकन बिजली को बहुत हद तक कम कर देती है।

2- नजासत से तहारत

एक शख़्स के जिस्म, या कपड़ों पर कोई नजासत (माददे जिन्हें इस्लाम ने नापाक बताया है) नहीं होनी चाहिए जोकि सलात (नमाज़) पढ़ रहा हो या उस जगह पर जहाँ वो इबादत कर रहा हो। सिर का घेरा, टोपी, एक पगड़ी, चमड़े के जूते और नलिन (खड़ाऊँ) भी कपड़ों में आ जाते हैं। क्योंकि एक शख़्स की गर्दन के इतराफ़ बंधे हुए स्कारफ़ का लटका हुआ हिस्सा इधर उधर घूमता है जैसे वो शख़्स घूमता है, जब वो नमाज़ पढ़ रहा होता है, तो उसे भी कपड़े की तरह मान लेते हैं, और अगर उस कपड़े का हिस्सा साफ़/पाक नहीं है तो नमाज़ कुबूल नहीं की जाएगी। जहाँ वो खड़ा हुआ है और जहाँ वो अपना सिर रख रहा है, उस कपड़े पर जो ज़मीन पर फैला हुआ

है, जब वो हिस्से साफ़ हों, तो नमाज़ कुबूल की जाएगी चाहे अगर उसके दूसरे हिस्सों पर नजाज़त लगी हो। क्योंकि, सकार्फ़ की तरह, कपड़ा जिस्म से जुड़ा हुआ नहीं होता। उस शख़्स की नमाज़ कुबूल नहीं होती जो एक बंद बोतल में पैशाब उठाए हुए हो। क्योंकि, बोतल वो जगह नहीं है जहाँ पैशाब बनता है। [इसलिए इस बात की इजाज़त नहीं है के जबके खून की या आयोडीन की टिंक्चर की बंद बोतल उठाकर नमाज़ अदा कर रहा हो या एक बंद बॉक्स हो जिसमे खून से भरा रूमाल हो या कपड़े का एक टुकड़ा हो जिसमे नजासत लगी हो दरहम के साईज़ या उससे बड़ी जिन जगहों पर एक शख़्स के दोनो पैर पड़ेंगे और जहाँ एक शख़्स सिर रखे वो साफ़ होना चाहिए। एक कपड़े, शीशे [या नाएलॉन] को बिछाकर या नजासत पर रखना कुबूल होता है। ये नमाज़ के लिए नुकसानदह नहीं होता अगर एक शख़्स के कपड़े का लटकता हुआ सिरा जब झुके तो किसी सुखी नजासत को छुए।

अगर कावा नजासत (नीचे देखिए) इतनी बड़ी नहीं है जितना के एक दरहम की जिसामत या ज़्यादा, एक शख़्स की खाल या कपड़ों पर उस जगह पर जहाँ वो नमाज़ पढ़ रहा हो तो इसलिए अदा की गई नमाज़ कुबूल हो जाएगी। बहरहाल, अगर ये एक दरहम की तरह है तो ये तहरीमी मकरूह है और ये वाजिब है के इसे साफ़ किया जाए। अगर ये दरहम से ज़्यादा है तो ये फ़र्ज़ है के इसे धोया जाए। अगर ये दरहम से छोटा है तो इसे धोना सुन्नत है। ये फ़र्ज़ है के धोना, चाहे अगर वो एक बूंद, शराब की ही क्यो न हो। इमामएन [इमाम-ए अबू युसूफ़ और इमाम-ए मौहम्मद] और बाकी तीन मसलक के मुताविक, कावा नजासत को पूरा धोना चाहे वो छोटा सा ही क्यों न हो इसे धोना फ़र्ज़ है। ऊपर बताई गई कसोटी नजासत के मामले वो तभी होगी जब एक शख़्स को नमाज़ पढ़नी हो, तब नहीं जब एक शख़्स नजासत को धब्वो में रखे।

एक दरहम का वज़न एक मिस्काल के बराबर है, यानी चार ग्राम और अस्सी सेंटीग्राम, गाढ़ी नजासत के बराबर। पतली नजासत वो है जो एक शख़्स के खुले हाथ की हथेली में पानी की सतह की तरह बड़ी हो। जब गाढ़ी नजासत एक मिस्काल से भी कम उस जगह पर फैली हो जो हाथ की हथेली से बड़ा हो एक शख़्स के कपड़ों पर, तो ये नमाज़ को बातिल नहीं करता।

यहाँ पर दो किस्म की नजासत हैंः

1- काबा (गलीज़) नजासतः वो सब चीज़ें जो एक वुज़ू या गुस्ल को ज़रूरी करती हैं जब वो एक इंसानी जिस्म से निकले, बहे लेकिन खाल खराब न हो, गौश्त, उन जानवरों का पैशाब और पाखाना जिनका गौश्त नहीं खा सकते [सिवाए चिमगादड़ के] और उनके बच्चे; आदमी का खून और सारे जानवरों का खून; शराब, गोश्त खाने वाले, सूअर, घरेलू परिंदों का पाखाना, जानवरों और भेड़ और बकरियों का पाखाना सब ग़लीज़ है यानी, काबा।

2- खफ़ीफ़ नजासतः जब तुम्हारे अज़ू में से एक या तुम्हारे कपडों के एक हिस्से पर खफ़ीफ़ नजासत के दाग़ पड़ जाए, तो मनफ़ी तौर पर ये तुम्हारी नमाज़ पर असर नहीं डालता जब तक के वो अज़ू के एक-चौथाई या उस हिस्से को जिस पर धब्बा लगा हो ढक न ले। खाए जाने वाले जानवरों का पैशाब और उन चिड़ियों का पाखाना जिनका गोश्त खाया नहीं जाता वो खफ़ीफ़ है। खाए जाने वाले परिंदों जैसे कबूतर और चिड़ियों की बीट साफ़ है।

नजासत से बहने वाली शए अर्क निचोड़ना भी नजस है। इस वजह से, रकी और शराब काबा नजासत है और, शराब की तरह, इनको पीना हराम है। नमाज़ पढ़ने से पहले खून, शराब और नशीली चीज़ों को कपड़ों या जिस्म पर से धो लेना चाहिए। जब गंदा माददा उड़ता है तो ये साफ नहीं

होता। बोतले, या इसी तरह के वक्स, जिनमें ये गंदे मादे हों उन्हें नमाज़ के दौरान पहने जाने वाले कपड़ों की जेबों से निकाल देना चाहिए।

नजासत को किसी भी किस्म के साफ़ पानी, मुस्तमल पानी या बहने वाली शए जैसे सिरका या गुलाब जल से साफ़ कर लेना चाहिए। पानी जो एक वुज़ू या गुस्ल के लिए इस्तेमाल किया जाए उसे **(मुसतमल पानी)** कहते हैं। ये साफ़ होता है। अगरचे, ये हदस की हालत से पाकी के लिए साफ़ नहीं होता (बगैर वुज़ू या गुस्ल की हालत होना)। नजासत इससे साफ़ की जा सकती है। एक शख़्स इससे दूसरा वुज़ू या गुस्ल नहीं कर सकता।

इस्तन्जाः नजासत के खारिज होने के बाद अपने आगे या पीछे के हिस्से को साफ़ करने को इस्तन्जा कहते हैं। इस्तन्जा सुन्नत-ए मुअक्दि है। दूसरे लफ़्ज़ों में, एक मर्द या औरत के लिए ये सुन्नत है के पाखाना या पैशाब करने के बाद बेतुलखला में अपने आगे या पीछे (सतर) को साफ़ करना एक पत्थर के साथ या कुछ पानी के साथ ताकि कोई पेशाब या पाखाना वहाँ छुटा न रह जाए। अगरचे, अपने अवरत हिस्सों को दूसरो के सामने खोले बगैर पानी से इस्तन्जा करना मुमकिन नहीं तो उसे पानी के साथ इस्तन्जे को छोड़ देना चाहिए चाहे अगर एक बड़ी मिकदार नजासत की लगी ही क्यों न रह जाए। एक शख़्स को अपने अवरत हिस्सों को खोलना नहीं चाहिए और इसी हालत में नमाज़ पढ़ लेनी चाहिए। अगर एक शख़्स उन्हें खोलता है, तो वो एक गुनहगार बन जाता है जो एक हराम करता है। जब उसे एक अकेली जगह मिल जाए, तो उसे पानी के साथ इस्तन्जा करना चाहिए और नमाज़ दोबारा अदा करनी चाहिए। **"अगर एक अहकाम तुम से हराम कराने का सबब बने, तो तुम्हें [देर करनी चाहिए या] अहकाम को छोड़ देना चाहिए ऐसा न हो तुम हराम कर दो।"**

ये तहरीमी मकरूह है के किसी हडडी, खाने का समान, खाद, ईटों, बर्तन या गलास के टुकड़ों, कोएले, जानवरों के खाने या दूसरे के सामान,

कीमती चीज़ों जैसे के सिल्क, मस्जिद से फेंकी हुई चीज़ों, ज़मज़म पानी, पत्तियों या कागज़ से इस्तन्जा करना। एक सादे कागज़ की भी इज़्ज़त लेनी चाहिए। इस बात की इजाज़त है के कागज़ के टुकड़ों या अखबारों से जिसमें ग़ैर रूहानी नाम हों या तहरीरे हो जिनका मज़हब से कोई लेना देना न हो उनसे इस्तन्जा कर सकते हैं। लेकिन तुम किसी भी ऐसे कागज़ से इस्तन्जा नहीं कर सकते जिसमें इस्लामी हुरूफ हों। किब्ले की तरफ़ मुह या पीठ करके पैशाब या पाखाना करना, जबकि खड़े हो या नंगे हो, बग़ैर किसी उज़र तो ये मकरूह है। जहाँ पैशाब पड़ा रह जाए वहाँ गुस्ल करने की इजाज़त नहीं। ताहम तब इजाज़त है अगर पैशाब रूके नहीं और बह जाए। इस्तन्जे के लिए इस्तेमाल पानी नजस हो जाता है। अपने कपड़ों पर इसके छींटे मत आने दो। इसलिए, जब इस्तन्जा करो तो तुम अपने अवरत हिस्सों को खोल लो और इसे अकेली जगह पर करो। एक शख़्स अपने हाथ को पतलून में डालकर वाशबेसिन के सामने करके और इस तरह अपने अज़ा को अपनी हथेली के पानी से धो कर इस्तन्जा नहीं कर सकता। जब पैशाब के धब्बे लग जाएँ, तो एक शख़्स की हथेली में नजस हो जाता है और इस तरह पतलून जिस पर वो गिरा है नजस हो जाएगी। अगर वो हिस्सा, जहाँ ये पानी गिरा है, वो भरी हथेली से ज़्यादा है, वो नमाज़ सही नहीं होगी। **इसतिबरा**ः आदमियों के लिए वाजिब है के **इसतिबरा** करें, यानी पेशाब की जगाह कोई बूंद न छोड़े, चलकर, खाँसकर या उलटी तरफ़ लेटने से। एक शख़्स जब तक वुज़ू न करे जब तक वो मुतमईन न हो जाए के वहाँ पर एक कतरा भी नहीं बचा। एक कतरा भी बाहर निकलना वुज़ू दोनो को बातिल करता है और underwear गंदी करता है। अगर भरी हथेली से कम पतलून पर गिर जाए, तो एक शख़्स के लिए मकरूह है के वुज़ू करके उससे नमाज़ पढ़ना। अगर ज़्यादा कतरे, तो नमाज़ बिल्कुल सही नहीं है। वो जिन्हे इसतिबरा की परेशानी है उन्हें रूई के गोले बाजरे की बीज के बराबर अपनी पैशाब के छेद पर रख लेना चाहिए। रूई पेशाब के बाहरी कतरे सोख लेगा। सिर्फ़ रूई के सिरे बाहर नहीं निकलने चाहिए।

3- सतर-ए अवरत

(सतर-ए अवरत और औरतों का अपने आपको ढकना)

एक शख़्स के जिस्म के वो हिस्से जो उसके लिए हराम हैं खुले छोड़ने, दूसरों को दिखाना और जो दूसरों के लिए भी हराम हैं देखना, उन्हें अवरत हिस्से कहते हैं। एक आदमी के **अवरत हिस्से** उसकी नाफ और घुटनों के नीचले हिस्सों के बीच में होते हैं। घुटने अवरत हैं। इन हिस्सों को खोल कर नमाज़ अदा करना सही नहीं है; (दूसरे लफ़्ज़ों में ये बातिल और बेकार है।) जब नमाज़ अदा करें, आदमियों के लिए सुन्नत है के वो अपने दूसरे हिस्से [बाज़ू, सिर], को ढके, और मोज़े पहने। उनके लिए मकरूह है के इन हिस्सों को खुला करके नमाज़ अदा करना।

औरतों के सारे हिस्से सिवाए हथेलियों और चेहरे के, जिनमें उनके हाथों के बाहरी हिस्से उनके बाल और उनके पाँव चारों मसलक में अवरत हैं। इस वजह से, औरतों को **(अवरत)** कहते हैं। ये उनके लिए फर्ज़ है के अपने इन हिस्सों को ढांपना। अगर चौथाई हिस्सा मर्द या औरत के अवरत हिस्सों के इतनी देर खुला रह जाए के एक रूकन हो जाए, तो नमाज़ सही नहीं होगी। अगर एक छोटा हिस्सा खुला रहे, तो नमाज़ ज़ाया नहीं होगी, बल्कि वो मकरूह हो जाएगी। हलका कपड़ा पहनना जो उसके नीचे की साख्त या रंग दिखा दे वो बिल्कुल उसी तरह है जैसे जिस्म के हिस्सों को ढांपा न गया हो।

जब अकेले हो और नमाज़ अदा न कर रहे हों, तो औरतों के लिए फर्ज़ है के अपनी नाफ़ और घुटनों को ढांप कर रखे, अपनी कमर और पेट को ढांपे ये वाजिब है, और जिस्म के दूसरे हिस्सों को ढांपना अदब है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(एक शख़्स की आँखों को जो एक नामहरम औरत को नफ़सपरस्ती से देखे आग से भरी जाएंगी और उसे दोज़ख में फैंका जाएगा। एक शख़्स जो एक नामहरम औरत से हाथों को मिलाए उनको उसके गले के इरद गिरद बांधकर दोज़ख में भेजा जाएगा। वो जो बग़ैर ज़रूरत के एक नामहरम औरत से बात करे, और हवस के साथ, तो वो हर बोले हुए लफ़्ज़ के लिए वो एक हज़ार साल के लिए दोज़ख में रहेगा।)**

एक दूसरी हदीस शरीफ़ से वाज़ेह है, **(अपने पड़ोसी की बीवी या दोस्त की बीवी को देखना दस गुना ज़्यादा गुनाह है जैसे किसी नामहरम औरत को देखना। शादी शुदा औरतों को देखना एक हज़ार गुना ज़्यादा है जैसे के लड़कियों को देखना। ये सब ज़िना के गुनाहों की तरह हैं।)**

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने बयान कियाः **(ऐ अली! अपनी रानों को मत खोलो। किसी की रानों को मत देखो, चाहे वो एक लाश हो या एक शख़्स जो ज़िन्दा हो!)**

एक और हदीस-ए शरीफ़ में, ये बयान किया गया है **(अपने अवरत हिस्सों को मत खोलो। इस वास्ते, के वहाँ पर ऐसे भी लोग हैं जो तुम्हें नहीं छोड़ेगे उनकी तरफ शर्म महसूस करो और उनकी इज़्ज़त करो)।** [ये फर्द हपहज़ा के फरिश्तें हैं।]

दोबारा, ये एक हदीस-ए शरीफ़ में वाज़ेह हैः **(अपने अवरत हिस्सों को ढांपो। किसी को उन्हें मत दिखाएँ सिवाए अपनी बीवी या अपनी जारिया के। जब तुम अकेले हो तो अल्लाह तआला से भी शर्म करो!)**

(अल्लाह तआला उन आदमियों पर लानत भेजे जो औरतों की नकल करते हैं और उन औरतों पर भी जो मर्दो की नकल करती हैं।)

(अगर एक शख़्स, एक नामहरम लड़की को देखकर अल्लाह के अज़ाब से डरे और अपने चेहरे को उससे परे करले तो अल्लाह तआला उसे एक नई इबादत का इनाम अता करता है और वो इस इबादत का मज़ा चखते हैं।

(अल्लाह तआला उस मर्द (या औरत) को जो अपने अवरत हिस्से खुले रखते हैं या किसी और के अवरत हिस्से को देखते हैं उनपर लानत भेजे।)

(एक शख़्स जो एक जमाअत की नकल करता है वो उनमें से एक हो जाता है।)

ये हदीस-ए शरीफ़ बताती है के एक शख़्स जो अपने आपको दूसरो में ढाल लेता है अखलाक में, चाल या कपड़ों की वज़ह में वो उनमें से एक हो जाता है। वो जो अपने आपको मुश्रिकों के खराब फैश्न में शामिल कर लेते हैं और जिन्होने हराम को फाइन आर्ट का नाम दिया है और जो लोग हराम करते है उन्हें ये कलाकार कहते हैं, उनमें इस हदीस-शरीफ़ को चेतावनी की तरह लेना चाहिए।

ये भी हराम है आदमियों के लिए के दूसरे आदमी के अवरत हिस्से को देखे और औरतों के लिए भी के दूसरी औरतों के अवरत हिस्सों को

देखे। इसी तरह आदमियों के लिए हराम है के वो औरतों के अवरत हिस्सों को देखे और औरतों के लिए भी के मर्दो के अवरत हिस्सों को देखें। एक आदमी के अवरत हिस्से दूसरे आदमियों के लिए एक जैसे हैं जैसे के एक औरत के दूसरी औरतों के लिएः नाफ़ और घुटनों के बीच का हिस्सा। एक औरत के अवरत हिस्से, दूसरी तरफ़, हाथ और चेहरे के सिवाए पूरा जिम्स आदमियों के लिए नामहरम है। (कोई भी मुखतलिफ़ जिंस का रूकन जोकि एक शख़्स का करीवी रिश्तेदार जिसे महरम कहते हैं न हो तो वो नामहरम होगा)। इस्लाम ने एक शख़्स के महरम रिश्तेदारों के नाम दिए हैं। वो अठारह हैं)। एक नामहरम औरत के अवरत हिस्सों को देखना चाहे बग़ैर हवस के हराम (ममनुअ) है।

जब एक बीमार शख़्स जो एक कंबल के नीचे नंगा लेटा हुआ है वो अपने सिर के इशारे से कंबल के नीचे से नमाज़ अदा करता है। वो उसे नंगा अदा करता है। अगर वे कंबल के बाहर सिर निकाल कर इसे अदा करे, तो वो अपने आपको कंबल से ढके हुए अदा करता है, जोकि काबिले क़ुबूल है।

एक आदमी, अगर अपनी हवस को बचाले, तो जो अठारह औरतें उसपर हराम हैं निकाह के ज़रिए तो वो उसके सिरों, चेहरों, गलों, बाज़ूओ, घुटने से नीचे टांगों को देख सकता है। वो उनके सीने, बाज़ूओं के नीचे जगह, उसके पहलूओं, रानों, घुटनों या उनकी कमर के ऊपर के हिस्सों को नहीं देख सकता।

एक औरत के लिए, उसके अंकल और आंटियों के लड़के नामहरम हैं। उसका देवर और उसकी बहन का मियाँ भी नामहरम हैं। उनके साथ वात करना और उनके साथ एक ही जगह पर होना हराम है। आदमियों के लिए उनकी चाचाओं/तायाओं, फुफ़ियों, मामुओं, खालाओं की वेटियों से बात करना हराम है। उनके लिए अपनी या भाईयों की वीवियों के साथ वात करना हराम है।

एक आदमी उन अठारह औरतों से कभी शादी नहीं कर सकता जो उसके लिए महरम हैं। वो उनसे बात कर सकता है। वो एक साथ, अकेले, हो सकते हैं, जहाँ कोई न हो। एक औरत अठारह आदमियों से शादी नहीं कर सकती। ये अठारह आदमी और औरते ये हैंः

नस्ब के रिश्तेदार

आदमी	**औरतें**
1. बाप	**1.** माँ
2. बाप और माँ के बाप (दादा/नाना)	**2.** माँ और बाप की माएँ (दादी/नानी)
3. बेटा और बेटे और बेटी के बेटे (पोते-नवासे)	**3.** बेटी और बेटे और बेटे की बेटियाँ
4. भाई	**4.** बहन
5. भाई के बेटे	**5.** बहन के बेटियाँ
6. बहन के बेटे	**6.** भाई की बेटियाँ
7. ताया/चाचा और मामू	**7.** फूफ़ी और खाला

(दूध शरीक) दूधिया रिश्तेदार

आदमी	औरतें
8. दूध वालिद	**8.** दूध माँ
9. दूध वालदेन के बाप	**9.** दूध वालदेन की माँए
10. दूध बेटा, दूध बेटे और दूध बेटी के बेटे	**10.** दूध बेटी, दूध बेटी और दूध बेटे की बेटियाँ
11. दूध शरीक भाई	**11.** दूध शरीक बहन
12. दूध शरीक बहन के बेटे	**12.** दूध शरीक बहन की बेटियाँ
13. दूध शरीक भाई के बेटे	**13.** दूध शरीक भाई की बेटियाँ
14. दूध शरीक चाचा और दूध शरीक मामा	**14.** दूध शरीक फ़ूफ़ीयाँ और दूध शरीक खालाएँ

सुसराली रिश्तेदार

आदमी	औरतें
15. ससुर	**15.** सास
16. सौतेला बेटा	**16.** सौतेली बेटी

17. सौतेला बाप	**17.** सौतेली माँ
18. दामाद	**18.** बहू

वो आदमी और औरतें जो सड़क पर निकलते हैं जबकि उनके अवरत हिस्से बग़ैर ढके हों या जो दूसरो के अवरत हिस्सों पर नज़र डालते हैं वो दोज़ख की आग में जलाए जाएंगे।

4- इस्तिकबाले किबला (किबले की तरफ़ मुँह करना)

इस्तिकबाल-ए किबला का मतलब है कावे की तरफ़ नमाज़ अदा करना। मक्का-ए मुकर्रमा शहर में, कावे की इमारत की सिमत को **(किबला)** कहते हैं। पहले, **जरूसलेम** किबला था। हिजरा के सतराहवें महीनों बाद, मंगल में, शावान के महीने के बीच में मुसलमानों को कावा की तरफ़ घूमने का हुकूम दिया गया है।

किवला कावा की इमरत नहीं है; ये इसका इमारती प्लाट है।

यानी, ज़मीन से अर्श तक की जगह किवला है। इस वास्ते, एक शख़्स जो एक कुँए में हो [दरिया के अन्दर हो], ऊँचे पहाड़ पर हो [या एक जहाज़ में] वो उस सिमत की तरफ़ नमाज़ अदा कर सकता है। नमाज़ बिल्कुल सही होगी अगर आढ़ी सिमतों के दरमियान इफ़तिताही आपटिक असाव में कावा शामिल है।

इस हालत में के एक शख़्स अपनी रसूम नमाज़ दोनो को [यानी, दोपहर जल्दी की नमाज़ और दोपहर बाद की नमाज़, या शाम की नमाज़ और रात की नमाज़ मालिकी या शाफ़ि-ई मसलकों की तकलीद करते हुए मिलाकर] अदा नहीं कर पाए, बीमारी की वजह से, चोरी के खतरे, शिकारी जानवरों के खतरे, दुश्मन के ज़रिए पहचान लिए जाने के खतरे की वजह से, या इस मामले में के अगर वो अपने जानवर से उतरा तो दोबारा उस पर चढ़ नहीं पाएगा, तो एक शख़्स जिस सिमत की तरफ़ मुमकिन हो सके मुँह करके नमाज़ अदा कर सकता है। पानी के जहाज़ या रेल गाड़ी में ज़रूरी है के किबले की तरफ़ रूख करके नमाज़ अदा करना।

5- इबादत के औकात

एक हदीस-ए शरीफ़ का बयान हैः "**जिब्राईल अलैहिस्सलाम (और मैं [इबादत जिसे कहते हैं] एक साथ, नमाज़ [या सलात] अदा कर रहे थे, और जिब्राईल अलैहिस्सलाम) हम दोनो के लिए उस नमाज़ की इमामत कर रहे थे, दो दिन लगातार, काबे के दरवाज़े के साईड में। हम दोनो ने सुबह की नमाज़ फज्र के तौर पर (सुबह गोधुली) सहर में अदा की; इबतिदाई दोपहर की नमाज़ सूरज के अपने उरूज से रवानगी पर; देर दोपहर बाद की नमाज़ जब किसी चीज़ के साया दोपहर के साए के बराबर हो जाए उस चीज़ की लम्बाई से बढ़ जाए; शाम की नमाज़ जैसे के सूरज गुरूब हो [उसके ऊपर का अज़ा ग़ायब हो जाए] जाए; और रात की इबादत/नमाज़ जब के शाम की रोश्नी गहरी होने लगी। दूसरे दिन, हमने सुबह की नमाज़ उस वक्त पढ़ी जब सुबह की गौधुली बढ़ने लगी; इब्तिदाई दोपहर की नमाज़ जब एक चीज़ का साया बढ़ जाए दोबारा उस चीज़ की लम्बाई से देर दोपहर बाद की नमाज़ उसके फ़ौरन बाद; शाम की नमाज़ उसके बताए गए वक्त पर रोज़ा तोड़ते हुए; और रात की नमाज़ एक तिहाई रात के आखिर में। फिर उन्होने कहा ए मौहम्मद, ये तुम्हारे**

लिए और तुम से पहले आने वाले पैग़म्बरों के लिए नमाज़ के औकात हैं। अब आपकी उम्मत इन पाँचों नमाज़ों को इन दोनों वक्तों के बीच में अदा करें जिनपर हमने अदा किया।" इस हदीस-ए शरीफ़ में ये वाज़ेह हुआ के (रोज़ाना) नमाज़ों का नम्बर पाँच है।

सुबह/फज्र की नमाज़ का वक्तः ये जब सफ़ेदी जिसे फज्र कहते है मश्रिक में नज़र आए तब शुरू होता है। ये सूरज निकलने के साथ खत्म हो जाता है।

जल्दी दोपहर/ज़ुहर की नमाज़ः इसका वक्त शुरू होता है जब चीज़ों का साया, छोटा हो जाए, दोबारा लम्बा होना शुरू हो जाए। जब किसी चीज़ का साया उसकी असली चीज़ की लम्बाई से दुगना या तिगना हो जाए तो ये खत्म हो जाता है। साबिक वाला दो इमाम अबू यूसुफ़ और मौहम्मद अश शएवानी, के मुताबिक है, और बाद वाला अल इमाम अल-आज़म के मुताबिक है।

देर बाद दोपहर/अस्र की नमाज़ः ये ज़ुहर की नमाज़ का वक्त खत्म होने के साथ अस्र की नमाज़ का वक्त शुरू होता है।

1- इमामएन के मुताबिक, जब किसी चीज़ का साया उसकी लम्बाई की तरह लम्बा हो जाए और जब तक सूरज गुरूब नहीं होता चलता रहता है।

2- इमाम-ए आज़म के मुताबिक, जब किसी चीज़ का साया उसकी लम्बाई से दुगना लम्बा हो जाए और सूरज के ग़ायब होने तक रहता है। जब तक सूरज पीला न हो जाए उस वक्त तक नमाज़ को मुल्तवी करना हराम है। एक वाक्य जो उस वक्त हो जब सूरज के निचले अज़ा और उसकी सतर के एक नेज़ा उफ़क पर ज़ाहिर हो। ये हराम (ममनुअ) है के उसके वक्त तक

नमाज़ को मुल्तवी करना। बहरहाल, अगर तुम अस्र की नमाज़ उसके वक्त तक अदा न कर पाओ, तो तुम्हे सूरज गुरूब होने तक पढ़ लेना चाहिए।

मग़रिब की नमाज़ का वक्तः जब सूरज छुप जाए तो इसका वक्त शुरू होता है। ये मग़रिब में शफ़क गुरूब होने तक रहता है। रात की नमाज़ का वक्त जब शाम की इबादत का वक्त चूक जाता है। ये फज्री-सादिक (असली सहर) की सफ़ेदी साथ खत्म होता है।

रात की/इशा नमाज़ का वक्तः इमाम-अल-आज़म के मुताबिक, इशा की नमाज़ का वक्त मग़रिब में सफेद शफ़क जाते रहने से शुरू होता है। इसे देर दोपहर बाद की नमाज़ के वक्त के मामले में इसी तरीके से वाज़ेह किया गया है। यानी, अगर एक शख़्स कम से कम तीस मिनट ज़्यादा इंतेज़ार करे और फिर रात की नमाज़ अदा करें, तो उसने उसे सारे इमामों के मुताबिक अदा किया। आधी रात के बाद के वक्त तक इसे मुल्तवी करना मकरूह तहरीमी है।

एक नमाज़ को उसके मुकर्रर वक्त से पहले या बाद में (उन्हें उनके मुकर्रर अरसे में न पढ़ना) अदा करना हराम है। येंि एक बहुत बड़ा गुनाह है। (तुर्किए नयूसपेपर) के ज़रिए बनाए गए time tebles में नमाज़ और इमसाक के औकात बिल्कुल सही बताए गए हैं।

वहाँ पर तीन वक्त है जब एक नमाज़/सलात को अदा करना मकरूह तहरीमी, यानी, हराम है। एक सलात सही (बातिल) नहीं होगी अगर ये फर्ज़ है और ये इनमें से किसी एक वक्त में पढ़ी गई। ये तीन वक्त हैं, सूरज निकलने का वक्त, सूरज गूरूब होने का और वो वक्त जब सूरज ज़वाल [दोपहर के बीच, ये वो वक्त है जब सूरज उफ़क से ऊँचे नेज़े पर हो और जिसके बाद जल्दी दोपहरबाद की नमाज़/जुहर की नमाज़ शुरू होती है।] इन तीन वक्त में से किसी में भी, जनाज़े की नमाज़ जो पहले ही तैयार कर ली गई (मकरूह

वक्त शुरू होने से पहले) या सज्दा-ए तिलावत या सज्दा-ए सहू किसी की भी इजाज़त नहीं है। एक नमाज़ में एक मुसलमान को अदा करने की इजाज़त है सूरज गुरूब होते वक्त वो है देर दोपहर बाद (अस्र) की नमाज़, (जोकि वो किसी तरह तब तक पढ़ने से कासिर रहे थे)।

वहाँ पर दो अरसे हैं वक्त के जिस दौरान सिर्फ़ नफ़ली नमाज़ अदा करना मकरूह है। उस वक्त से जब एक शख़्स सुबह की नमाज़ अदा करता है सूरज उगने तक। देर दोपहरबाद की नमाज़/अस्र की नमाज़ के बाद उस वक्त के अरसे के बीच में और शाम की फर्ज़ नमाज़ के बीच में।

वज़ाहत

(जुनूब और शुमाल कुतूबों पर नमाज़ और रोज़े की अदाएगी)

एक जगह की नमाज़ के औकात तबदील होते हैं, खते अस्तवा के फ़ासले से, यानी, अरज़े बल्द की डीगरी तक इस पर मुनहसिर करते हैं, साथ ही साथ इसके मौसमों पर भीः

ठंडे इलाकों में, शुमाली आर्कटिक सर्कल के शुमाल में, जब सूरज ढलने वाला होता है, तो फज्र शुरू हो जाती है जबकि सहर ग़ायब नहीं होती। इसलिए, बालटि सी के शुमाली खात्मे पर, गरमियों में, कोई रात नहीं होती। इसलिए, रात और सुबह की नमाज़ों का वक्त वहाँ वाकअ नहीं होता।

हनफ़ी मसलक में वक्त नमाज़ का सबब है, नाकि उसकी पहली शर्त। जब वहाँ कोई सबब नहीं होता, तो नमाज़ फर्ज़ नहीं होती। इसलिए,

मुसलमानों के लिए जो उन मुल्कों में रह रहे हो, ये दो नमाज़ें फर्ज़ नहीं हैं। जुनूबी निस्फ़ कुरह में चूंकि सब तरफ़ समुद्र है, तो वहाँ कोई ज़मीन नहीं है इसके वाक्अ होने के लिए।

जब शहर में एक नया चाँद निकलता है शाबान की तीसवीं रात में तो, ये ज़रूरी है के सारी दुनिया में रोज़ा शुरू कर दिया जाए। दिन के दौरान नया चाँद दिखना आने वाली रात का नया चाँद है। [एक मुसलमान जो कुतूबों में एक पर या चाँद पर जाए तो उसे दिन के दौरान रोज़ा रख लेना चाहिए अगर वो सफ़ारी (सफ़र में नहीं है) नहीं है। जब दिन की रौशनी का वक्त चौबीस घंटों से बड़ा हो, उसे अपना रोज़ा वक्त से शुरू करना चााहिए और वक्त से खोल लेना चाहिए उसे अपने आपको उस वक्त के मुताबिक ढाल लेना चाहिए जो मुसलमान तकलीद करते हैं एक शहर में जहाँ दिन इतने लम्बे नहीं होते। अगर वो रोज़ा नहीं रखता, तो उसे इसकी कज़ा करनी होगी जब वो एक शहर में जाएगा जहाँ दिन ज़्यादा लम्बे नहीं होते।]

अज़ान और इक़ामत

अज़ान का मतलब है 'आम खबर'। आदमियों के लिए ये सुन्नत-ए मोअक्दिा है रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ों की अज़ान पढ़ना, छोड़ी [कज़ा] हुई नमाज़ों की जोकि फर्ज़ हैं उन्हें अदा करना, जुमे की नमाज़ों में खतीब की तरफ़। औरतों के अज़ान पढ़ना या इकामत कहना मकरूह है। अज़ान एक ऊँची जगह पर अदा की जाती है दूसरों को वक्त का बतलाने के लिए। अज़ान कहते वक्त, ये मुस्तहब है के हाथों को उठाकर उंगलियों को कानों में रखकर और अंगूठे से कानों की सिरों को छूना। इकामत कहना अज़ान कहने से ज़्यादा कीमती है। अज़ान और इकामत किबले की तरफ़ रूख करके कहना

चाहिए। उनको कहते वक्त किसी से बात नहीं करनी चाहिए, ना ही किसी की तकरीर या सलाम का जवाब देना चाहिए।

अज़ान और इक़ामत कब कही जाए?

1- जब कज़ा नमाज़ें, अकेले या जमाअत में, शहर में या खेत में अदा कर रहे हों, तो आदमियों के लिए अज़ान और इकामत को ज़ोर से कहना सुन्नत है। लोग, जिन, पत्थर जो आवाज़ को सुनेंगे वो उठाए जाने वाले दिन इसके गवाह होगें। एक शख़्स जो एक से ज़्यादा कज़ा नमाज़ अदा करता है, एक के बाद दूसरी, उसे अज़ान और इकामत पहले कहनी चाहिए। फिर, इन कज़ा नमाज़ों को अदा करने से पहले, उसे इकामत कहनी चाहिए। इस बात की मंज़ूरी है अगर कज़ा नमाज़ की वो अज़ान न कहे।

2- वो जो वक्त की नमाज़ घर में, अकेले या जमाअत में अदा करते हैं, उन्हें अज़ान या इकामत कहने की ज़रूरत नहीं है। क्योंकि मस्जिदों में अज़ान और इकामत कहना ऐसा ही है जैसे घरों में भी कह लिया। बहरहाल, उनके लिए ये अच्छा है के अज़ान और इकामत कहें। वक्त की नमाज़ अदा करने के बाद एक इलाके की मस्जिद में, या एक मस्जिद में जिसकी जमाअत जानी हुई हो, एक शख़्स जो इसे मुनफ़रिद अदा कर रहा है उसे अज़ान या इकामत कहने की ज़रूरत नहीं है। सड़कों के साथ मस्जिद में, या उन मस्जिदों में जिनके इमाम या मुअज़्ज़िन या जमाअत में जो जानी हुई हों, बहुत सारे लोग जो मुख़्तलीफ़ औकात में आए मुखतलीफ़ जमाअत बनाई एक ही वक्त की नमाज़ के लिए। वो हर जमाअत के लिए अज़ान और इकामत कहेंगे। वो जो अकेले नमाज़ अदा कर रहा है ऐसी मस्जिद में उसे भी अज़ान और इकामत इतनी ऊँची कहनी चाहिए के वो खुद सुन ले।

3- मुसाफ़िर, जब जमाअत में नमाज़ अदा करते हैं, साथ ही साथ जब वो मुनफ़रिद तौर पर नमाज़ अदा करते हैं, तो उन्हें अज़ान और इकामत कहनी चाहिए। अगर एक शख़्स जो मुनफ़रिद तौर पर वहाँ नमाज़ अदा कर रहा है जहाँ दूसरे भी नमाज़ अदा कर रहे हैं, तो इसके लिए इजाज़त है के वो अज़ान न कहे। एक मुसाफ़िर अज़ान और इकामत कहता है जब वो एक घर में अकेले नमाज़ अदा कर रहा हो। इस वास्ते, अज़ान और इकामत मस्जिद में कही गई उसकी नमाज़ उसमें शामिल नहीं है। अगर कुछ मुसाफ़िरों ने एक घर में अज़ान दी, वो जो (वही) नमाज़ बाद में पढ़ें, उसी जगह पर तो उन्हें उसे नहीं कहना।

एक आकिल (बालिग़) लड़के, एक अंधे मर्द, एक पैदाईशी नाजाईज़ के ज़रिए , या एक लाइल्म दिहाती जो जानते हैं के अज़ान किस तरह कहनी चाहिए, तो उनके ज़रिए कही गई अज़ान बग़ैर कराहत (या केराहत) के जाईज़ है। ये तहरीमी मकरूह है एक जुनूब शख़्स के लिए अज़ान या इकामत कहना, एक शख़्स के लिए जो बग़ैर वुज़ू हो अज़ान कहना, एक औरत के लिए, एक फ़ासिक या शराबी शख़्स के लिए, एक बच्चे जोकि आकिल नहीं है अज़ान कहना या (किसी के लिए भी) बैठ कर अज़ान कहना ठीक नहीं है। ऐसे मामलों में, अज़ान की अदाएगी दोबारा होगी। अज़ान के सही होने के लिए ज़रूरी है एक मुअज़्ज़िन का आकिल मुसलमान होना। लाऊडस्पीकर के ज़रिए अज़ान कहना सही नहीं है।

फासिक शख़्स की अज़ान सही न होने की वजह है, क्योंकि उसके इबादत के ऊपर लफ़्ज़ भरोसा नहीं करते। ये नमाज़ का वक्त नहीं माना जाता, जब इसे एक फासिक शख़्स या एक लाऊडस्पीकर के ज़रिए कहा जाए। उनके ज़रिए दी गई अज़ान या किसी भी अलामत के ज़रिए से रोज़ा नहीं खोलना चाहिए।

वो जो अज़ान को पूरी इज़्ज़त देते हुए (ऊँचे मिंबर पर चड़कर), पढ़ते हैं, उसके हुरूफ़ों को तोड़े मोड़े या तबदील किए बगैर, उसके गाने की तरह न कहते हुए, उसको सुन्नत के मुताबिक कहते हुए, वो ऊँचे दर्जे पर पहुँचेगे।

लेकिन, अगर अज़ान सुन्नत के मुताबिक नहीं मिसास के तौर पर अगर इसके कुछ लफ़्ज़ बदले हुए या तर्जुमा किए हुए या इसे गाकर कहा जाए,- या अज़ान की आवाज़ लाऊडस्पीकर से आ रही हो- वो जो उसे सुन रहा हो इसके लफ़्ज़ न दोहराए। [लाऊडस्पीकर के ज़रिए जो पेश किया जाए वो इमाम या मुअज़्ज़िन की आवाज़ नहीं है। उनकी आवाज़ बिजली और मकनातीस में बदल जाती है। जो सुना जाता है वो बिजली और मकनातीस के ज़रिए पैदा की गई आवाज़ है।]

वज़ाहत (क्या अज़ान को लाऊडस्पीकर के ज़रिए देने की इजाज़त है?)

लाऊडस्पीकरों, को मीनारों पर लगाना, कुछ मुअज़्ज़िनों के लिए एक सुस्ती का सबब बन गये हैं और उन्हें अंधेरे कमरों में बैठे बैठे अज़ान कहने का सबब हैं, बजाए इसके के सुन्नत का ध्यान रखे। मिंबर, हमारे रूहानी ज़ैवर हैं जो सदियों से आसमान को खुबसूरत बनाते आए हैं, वो लाऊडस्पीकरों के लिए पाल बन गए हैं, इस ज़ालिमाना बिदअत के लिए। इस्लामी आलिम हमेशा साई न्सी एजाद को मानते आए हैं। इसलिए ये शक से बाहर है के रेडियो और लाऊडस्पीकरों के ज़रिए नशरो अशाअत फ़ाएदेमंद है, ये एक एजाद है जो न सिर्फ इस्लाम ने चेहरा बनाया, बल्कि उसे तालीम का एक ज़रिया बनाकर बड़ावा दिया। अगरचे, लाऊडस्पीकर की चिड़ाने वाली आवाज़ के ज़रिए

इबादत करना नुकसानदह है, इस तरह मुसलमानों को अज़ान की मठिए आवाज़ से परे होना पड़ा। ये एक गैर- ज़रूरी बेकार की तरह है मस्जिदों पर लाऊडस्पीकरों को लगाना। जब ये आला, जोकि इस तरह झंझनाता है जैसे के एक चर्च की घंटी है बजाए पाक आवाज़ों के अकीदतमंद दिलों से इमान के साथ इनको सुन्नत थे, वो मौजूद नहीं है, अज़ान जो मिंबरों पर दी जाती थीं और मस्जिदों में तकबीर की आवाज़ें जो गैरमुल्कियों को भी जोश में डाल देती थीं। जमाअत जो अज़ान की आवाज़ सुन कर मस्जिदों को भर दिया करती थीं, हर कोने में, अपनी नमाज़ें ख़ुशअ (गहराई और मलानत के साथ) के साथ अदा करते थे, जैसे के सहाबा के वक्त में ये आसमानी असर अज़ान के अंदर जो ई मान वालों को बेख़ुदी में डालता था, वो गायब हो गया है इस लाऊडस्पीकर की धाती लहरों में।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया "**जो कोई भी आराम से अज़ान के लफ़्ज़ों को धोहराएगा जब उसे सुनेगा, हर हुरफ के लिए उसे एक हज़ार इनाम मिलेगा और उसके एक हज़ार गुना माफ़ कर दिए जाएंगे।**"

ये सुन्नत है एक शख़्स के लिए जो अज़ान को सुने और चुपके से जो उसने सुना है उसे दोहराए, चाहे अगर कुरआन अल करीम ही क्यों न पढ़ (किरअत) रहा हो। "**हय्य अला...**" का हिस्सा सुनने के बाद, उसे दोहराना नहीं है, बल्कि कहना है, "**ला होला वला कुव्वता इल्ला बिल्लाह।**" आज़ान कहने के बाद तुम (इबादत जिसे कहते हैं) सलावात पढ़ो और फिर बताई गई अज़ान की दुआ पढ़ों। **अशहदु अन्ना मौहम्मदन रसूलुल्लाह** दूसरी बार, ये मुस्तहब है के दोनो अंगूठों के नाखूनों को चूमों और अपनी आँखों पर नरमाई से उन्हें रगड़ो। ऐसा इकामत कहते वक्त नहीं करना चाहिए।

अज़ान की किरअत

अल्लाहु अकबर (चार बार)
अश हदु अन ला इलाहा इल्लल्लाह (दो बार)
अश हदु अनना मुहम्मदन रसूलुल्लाह (दो बार)
हय्य अलस्सलाह (दो बार)
हय्य अलल फलाह (दो बार)
अल्लाहु अकबर (दो बार)
लाइला-ह इल्लाह (दो बार)

सिर्फ़ सुबह की नमाज़ की अज़ान में, हय्य अल्ल फलाह के बाद, तुम्हे दो बार **(अस-सलातु हय्रून मिनन-नौम)** कहना चाहिए। इकामत के लिए, तुम्हे कहना है **(कद कामा तिस-सलातु)** दो बार **(हय्य अलल फलाह)** के बाद।

अज़ान की अल्तमास

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः (जबकि अज़ान पढ़ी जा रही हो, ये दुआ पढ़ोः "**व इनइ अशहदु अन ला इलाहा इल्लल्लाहु वाहदहु ला शरीकह व अशहदु अननी मुहम्मदन अबदुहु व रसूलुहू व रदीतु बिल्लाहि रब्बन व बिल इस्लामी दीनेन व बि मुहम्मदिन सल्लल्लाहु अलैहि व सलामि रसूलन नबिय्या**"

रसूलुल्लाह अलैहि सलाम ने अपनी एक हदीस-ए शरीफ़ में फरमाया, "**ए मेरी कौम! जब अज़ान खत्म हो जाए, तो ये दुआ भी पढ़ोः**

(अल्लाहुम्म रब्बि हाज़िहिद-दा वतित ताम्मेति वस्सलातिल-काएमति आति मुहम्मदनील-वसलाति वल-फ़ज़ीलति वद-दरेजेतर-रिफ़ाएति वब असहु मिकामन महमूदनिल-लज़ी व अदतेहु इन्नेके ला तुखलिफुल-मीआद”)।

अज़ान में लफ़्ज़ों के मआनी

अल्लाहु अकबरः अल्लाह सबसे बड़ा है।उसे कुछ नहीं चाहिए।वो अपने बंदों की इबादतों को लेने के लिए बहुत बड़ा है।इबादतें उसे कोई फ़ाएदा नहीं देतीं।इस लफ़्ज़ को चार बार दोहराया जाता है, ताकि इसके मआनी की अहमियत अच्छी तरह दिमाग़ में बैठ जाए।

अशहदु अन ला इलाहा इल्लल्लाहः अगरचे उसे अपनी अज़मत के लिए किसी की इबादत की ज़रूरत नहीं, गवाही देता हूँ मैं कि अल्लाह के सिवा कोई इबादत के लायक नहीं।कोई उसकी तरह नहीं।

अशहदु अनना मुहम्मदन रसूलुल्लाहः मैं गवाही देता हूँ और मानता हूँ के हज़रत मुहम्मद 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' पैग़म्बर हैं उसके ज़रिए भेजे गए, वही इबादतों के तरीके बताने वाले हैं जो उसने ज़रिए पसन्द किए गए यानी सिर्फ जो इबादतें आपके ज़रिए बताई गई वही ठीक हैं।

हय्य अलस्सलाह, हय्य अलल फलाहः ये दो लफ़्ज़ हैं जो मोमिनों को नमाज़ के लिए बुलाते हैं, जो खुशियों और निजाअत का सबब हैं।

अल्लाहु अकबरः कोई उसकी लायक इबादत नहीं कर सकता।वो इतना बड़ा है, अभी तक के किसी की इबादत उसके लायक या उसके लिए ठीक नहीं है।

ला इलाहा इल्लल्लाहः वो, अकेला, इबादत के लायक है, अपने आपको उसके सामने आजिज़ करो। इस हकीकत के साथ के कोई उसके लायक इबादत नहीं कर सकता, उसके अलावा कोई और इबादत के लायक नहीं। नमाज़ में ताअज़ीम की बड़ाई इन लफ़्ज़ों की अज़मत से समझी जा सकती है जो हर किसी को बताने के लिए चुने गए हैं।

6- नीयत (इरादा)

नीयत (इरादा) उस वक्त करना चाहिए जबकि इफ़तिताह की तकबीर (शुरूआत) की जाए। नमाज़ के लिए नीयत करने का मतलब है के दिल से उसका नाम, वक्त, किबला, ये इच्छा रखना के इमाम की तकलीद करे (जब नमाज़ जमाअत में अदा की जाए) के नमाज़ की अदाएगी की जाए।

तकबीर इफ़तिताह के बाद नीयत करना सही नहीं है और इस तरह नमाज़ अदा की गई काबिले कुबूल नहीं है। जबकि फ़र्ज़ या वाजिब नमाज़ों के लिए तुम इरादा कर रहे हो, तो तुम्हे पता होना चाहिए के नमाज़ का कौनसा फ़र्ज़ या वाजिब तुम अदा कर रहे हो। रकाअत के नमबर के लिए नीयत करने की ज़रूरत नहीं है। जब एक सुन्नत अदा की जाए, तो नीयत करता हूँ "**नमाज़ अदा करने की**" काफ़ी है। जनाज़े की नमाज़ के लिए ये नीयत है "**अल्लाह की रज़ा के लिए नमाज़ अदा करता हूँ और मरने वाले के लिए दुआ करता हूँ।**"

इमाम को आदमियों के इमाम बनने के लिए कोई नीयत नहीं करनी होती। लेकिन (अगर वो नहीं करता) तो वो जमाअत में नमाज़ का सवाब हासिल नहीं करता। अगर वो इमाम होने की नीयत कर लेता है तो वो ये सवाब भी कमा लेता है। इमाम को इस तरह नीयत करनी चाहिए "**औरतों के इमाम बनने के लिए,"** (जब वो औरतों की जमाअत की इमामत करे)।

जब नमाज़ें अदा की जाए, तो मुँहज़ुबानी नीयत काफ़ी नहीं है। अगर वो दिल से नहीं की गई, तो नमाज़/इबादत क़ुबूल नहीं होगी।

7- तकबीर-ए तहरीमा

तहरीमा का मतलब है जब नमाज़ शुरू की जाए तो **अल्लाहु अकबर** कहना और ये फर्ज़ है। कोई और लफ़्ज़ उसकी जगह बदल कर क़ुबूल नहीं हो सकता। कुछ आलिमों का कहना है के ये नमाज़ के अंदर है। उनके मुताबिक पहले से शर्ते सात हैं शुमार में और नमाज़ के रूकन नमबर में पाँच हैं।

नमाज़ के रूकन

नमाज़ के अंदर फर्ज़ को (रूकन) कहा जाता है उनके नमबर पाँच हैं,

कयाम

नमाज़ पाँच रूकन में से पहला है। कयाम का मतलब है खड़े होना। जब खड़े हों, तो दोनो पाँव एक उंगली की चौड़ाई की चार गुना एक दूसरे से अलग हो। वो जो बहुत बीमार हो नमाज़ बैठकर पढ़ सकते हैं, और अगर वो इतना बीमार हो के बैठ भी नहीं सकता तो अपनी कमर के बल लेट जाए और अपने सिर के इशारे से इसे अदा करे (अपने सिर की हरकत के ज़रिए, इशारे, से वग़ैरा)। एक तकिया उसके सिर के नीचे रख दिया जाए ताकि उसका चेहरा किबले की तरफ़ रहे, बजाए आसमान के, और अगर वो लेटा है, उसे अपने घूटने मोड़ लेने चाहिए, उसे अपनी टांगे किबले की तरफ़ नहीं फैलानी चाहिए।

एक शख़्स जो बहुत ज़्यादा बीमार हो खड़े होने में, या चक्कर महसूस करे या सिरदर्द हो दाँतदर्द हो या जिस्म के किसी हिस्से में दर्द हो या पैशाब या रिया/हवा निकलती हो पर काबू नहीं कर पाता हो या खून जारी हो जब वो खड़ा हो, या उसे डर हो के उसका दुश्मन उसे देख लेगा (और नुकसान) पहुँचाएगा। जब वो खड़ा होगा तो उसका कुछ चोरी हो जाएगा, या उसका रोज़ा टूट जाएगा या तकरीर बिगड़ जाएगी या अवरत हिस्से खुल जाएंगे, जबकि वो खड़ा हुआ है, तो उसे बैठकर नमाज़ अदा करनी चाहिए। रूकू के लिए उसे थोड़ा आगे झुकना होगा। सजदे के लिए उन्हें अपना सिर फर्श पर रखना होगा। अगर एक शख़्स अपना सिर फर्श पर नहीं रख पा रहा, जबकि वो बैठकर नमाज़ अदा कर रहा हो, तो उसे रूकू के लिए थोड़ा झुकना चाहिए और सजदे के लिए उससे ज़्यादा झुकना चाहिए। अगर उसका सजदा में झुकना उसके रूकूऊ के झुकने से ज़्यादा नहीं है, तो उसकी नमाज़ सही नहीं होगी। अगर वो एक पत्थर या लकड़ी का टुकड़ा फर्श पर रखकर उसपर सजदा करता है तो वो गुनहगार होगा, चाहे अगरचे उसकी नमाज़ कुबूल ही क्यों न हो जाए। यानी, ये मकरूह तेहरीमी है।

किरअत

ये फर्ज़ है के जबकि खड़े हो कुरआन अल करीम की आयत को सुन्नत की और वितर की हर रकाअत में पढ़ना, और फर्ज़ की दो रकाअतों में जब नमाज़ अकेले पढ़ रहे हों। छोटी सूरह पढ़ना ज़्यादा सवाब लेकर आता है।

किरअत की तरह, सूरह फातिहा को इन रसूम नमाज़ों के हिस्सों में पढ़ना और सुन्नत की हर रकाअत में एक सूरह या तीन आयात को पढ़ना और वितर की नमाज़ में और फर्ज़ की दो रकाअतों में। फर्ज़ में, (यानी, नमाज़ की दुआ ज़रूरी है), ये वाजिब है या सुन्नत के फातिहा और दूसरी सूरह को पहली

दो रकाअतों में पढ़ना। मजीद ये, के सूरह से पहले फातिहा को पढ़ना वाजिब है। अगर इन पाँच वाजिबात में से एक भूल गए, तो सजद-ए सहूव करना ज़रूरी है। जब किरअत की जाए, तो इस बात की इजाज़त नहीं है के कुरआन अल करीम का तर्जुमा किया जाए।

हर नमाज़ की इबादत में, सिवाए जुमे की नमाज़ और ईद की नमाज़ के ईमाम के लिए, ये सुन्नत है के पहली रकाअत में (फातिहा के बाद) जो सूरह पढ़े वो दूसरी रकाअत पढ़ी जाने वाली सूरह से दोगिनी लम्बी हो। एक शख़्स जो अकेले नमाज़ अदा करता है उसे हर रकाअत में एक जैसी लम्बी सूरह पढ़नी होगी। ईमाम के लिए ये मकरूह है के एक ही नमाज़ की इबादत में उसी रकाअत में वही आयत पढ़े ये तनज़ीही मकरूह है, के दूसरी रकाअत में, वही आयत पढ़ना जो पहली रकाअत में पढ़ी गई हो। दूसरी रकाअत में ये ज़्यादा मकरूह है के उन आयात या सूरहों को पढ़ना जो पहली रकाअत में पढ़ी गई सूरतों या आयात से मुकदम हैं। दूसरी रकाअत में, ये मकरूह है के पहली अगली सूरह को छोड़कर दूसरी अगली सूरह को पढ़ना। ये हमेशा वाजिब है के कुरआन की सूरतों या आयात को उनके मरतबे में पढ़ना जैसे के कुरआन में वो लिखी हुई हैं।

रूकू

सूरह के बाद तुम तकबीर कहते हुए रूकू के लिए झुकते हो। रूकू में आदमी अपनी उंगलियों को खोल लेते हैं और उन्हें अपने घुटनों पर रख लेते हैं। वो अपनी कमर और सिर को एक ही सतह पर सीधा रखते हैं। रूकू में तुम **(सुबहाना रब्बियल-अज़ीम)** कम से कम तीन बार कहते हो। अगर इमाम तुम्हारे इसे तीन बार कहने से पहले अपना सिर उठाले तो, तुम्हे भी, फौरन, अपना सिर उठा लेना चाहिए। रूकू में तुम्हारे बाज़ू और टांगे सीधी होनी

चाहिए। औरतों को अपनी उंगलियाँ नहीं खोलनी चाहिए। उन्हें अपना सिर और कमर एक सतर पर नहीं रखना चाहिए, या अपने बाज़ूओं को सीधा नहीं रखना चाहिए। इमाम के लिए ये सुन्नत है, साथ ही साथ उस शख़्स के लिए भी जो अपनी नमाज़ खुद अदा कर रहा हो, उसे **(समि-अल्लाहु-लिमन हमिदह)** कहना जबकि वो रूकू से सीधा हो रहा हो। जमाअत को ये नहीं कहना। इसको कहने के फौरन बाद, एक शख़्स जो खुद नमाज़ पढ़ रहा हो, और जमाअत, इमाम के ये कहने के बाद, उसे कहना चाहिएः **(रब्बना लकल हमद)** और सीधा हो जाना है, और फिर, **(अल्लाहु अकबर)** कहना सज्दे घुटने के बल जाते हुए, पहले सीधा घुटना रखो और फिर उलटा घुटना, उसके बाद फर्श पर, सीधा फिर उलता हाथ रखें। आखिर में, नाक और माथे की हडडियाँ फर्श पर लगाईए।

सज्दा

सज्दे में, उंगलियों को बंद रखे, किबले की तरफ़ एक कतार में निशानदही करें कानों के साथ, और सिर हाथों के बीच में हो। ये फर्ज़ है के माथा किसी साफ़ चीज़, जैसे के पत्थर, मिट्टी, लकड़ी, फर्श कपड़े को छुए, और (आलिमों के ज़रिए) ये कहा गया है के नाक भी नीचे रखना वाजिब है। इस बात की इजाज़त नहीं है के बग़ैर किसी अच्छे उज़र के खाली नाक को फर्श पर रखना। फर्श पर सिर्फ माथे को रखना मकरूह है। ये या तो फर्ज़ है या वाजिब के दोनो पाँव या कम से कम हर पैर के एक पंजे को फर्श पर टिकाना। यानी, अगर दोनो पाँव फर्श पर नहीं रखे तो, नमाज़ या तो सही नहीं होगी या ये मकरूह हो जाएगी।

सज्दे में, पंजों को मोड़ना और किब्ले की तरफ घुमाना ये सुन्नत है।

आदमियों को अपने बाज़ूओं और रानों को पेट से अलग रखना चाहिए। हाथों और घुटनों को ज़मीन पर रखना सुन्नत है। ये सुन्नत है के ऐड़ियों को कयाम के वक्त चार उंगल की चौड़ाई पर एक दूसरे से अलग रखे, लेकिन रूकू में, कौमा, और सज्दे में इनको एक साथ रखना सुन्नत है।

जब सज्दे के लिए झुको तो, अपने लंबे ढलि लिबास के झूलते हुए हिस्सों को या अपने पाजामे को उठाना मकरूह है, और नमाज़ पढ़ने से पहले इन्हें मोड़ना मकरूह है। ये मकरूह है के मुड़ी हुई [या छोटी] आस्तीनों कफों, या लिबास के हिस्सों के साथ नमाज़ अदा करना। अपनी सुस्ती या सिर को ढांप कर नमाज़ अदा करने की अहमियत को न समझते हुए खुले सिर नमाज़ अदा करना मकरूह है। और नमाज़ को नाचीज़ कर देना कुफ्र का बाइस बनता है। ये मकरूह है के जबकि एक शख़्स गंदे कपड़ों में हो, या जो कपड़े वो काम पर इस्तेमाल करता है (यानी, चिकने और गंदे कपड़े) उनमें नमाज़ अदा करना।

कअदा ए-आखिरा

आखरी रकाअत में इतना लंबा बैठना फर्ज़ है के अत तहिय्यात पढ़ी जा सके। जबकि तुम बैठे हो तो तुम्हें अपनी उंगलियों से कोई निशान नहीं बनाना। जब बैठे हुए हो, तो आदमियों को अपने उलटे पैर को ज़मीन पर लगा लेने चाहिए उसके पंजों को सीधी तरफ़ घुमाते हुए, पैर पर बैठे हुए। सीधा पैर ऊपर की तरफ़ होना चाहिए, ज़मीन को पंजों से छूते हुए और किबले की तरफ़ इशारा करते हुए ऐसे तरीके से बैठना सुन्नत है।

औरतों को तवरूक के ज़रिए बैठना चाहिए। यानी, उनको अपने कुल्हों को ज़मीन पर टिकाना चाहिए। उनकी रानें एक दूसरे के नज़दीक होनी

चाहिए। उनके पैर सीधी तरफ़ निकलेंगे। उनके उलटे पैर ज़मीन पर होने चाहिए सीधी तरफ़ इशारा करते हुए।

नमाज़ किस तरह अदा की जाए?

एक आदमी अकेले किस तरह नमाज़ अदा करे

सुबह की नमाज़ की सुन्नत मंदरजाज़ेल तरीके से अदा की जाएः

1- तुम किब्ले की सिम्त की तरफ़ घूम जाओ। पैरों की ऐड़ियों को चार उंगल चौड़ाई पर एक दूसरे से अलग रखो। अंगूठे के सिरे कानों की लो को छुएँ और हथेलियाँ किब्ले की तरफ़ रहें। दिल से ये कहते हुए, "**मैं अल्लाह की रज़ा के लिए आज सुबह की सुन्नत नमाज़ अदा करता हूँ, मैं किब्ले की तरफ़ रूख करता हूँ,**" सीधे हाथ को उलटी कलाई पर नाफ़ के नीचे तक बांध लो "**अल्लाहु अकबर**" कहते हुए।

2- नज़रों को उस जगह पर जमा कर रखें जहाँ सज्दे [झुकाने के लिए] में सिर झुकेगा।

a) तुम **सुब्हानाका दुआ** पढ़ो।
b) आऊज़ु और बिस्मिल्लाह पढ़ने के बाद, तुम सूरह फ़ातिहा पढ़ो।
c) फ़ातिहा के बाद, बग़ैर बिस्मिल्लाह पढ़े, तुम्हें मज़िद एक सूरह पढ़नी होगी, मिसाल के तौर पर फील सूरह [शाफ़िई मस्लक में, तुम फातिहा और ज़ाइद सूरह के बीच बिस्मिल्लाह पढ़ते हो।]

3- दूसरी सूरत पढ़ने के बाद, **अल्लाहु अकबर** कहते हुए रूकु [घुटनों पर हाथों को रखते हुए झुकना] में जाओ। रूकु में, तुम अपनी उंगलियों को खोलकर घुटनों पर रख लो (पकड़ने के तरीके से)। अपनी कमर और सर को एक सीध में रखो। अपने पैरों को देखते हुए **सुब्हाना रब्बियल अज़ीम** तीन बार कहो। तुम इसे पाँच या सात बार भी कह सकते हो।

4- समि अल्लाहु लिमन हमिदह कहते हुए रूकू से सीधे हो जाओ। सीधे होते हुए, तुम्हें अपने पाजामे को ऊँचा नहीं करना चाहिए और अपनी आँखों को सज्दे की जगह से भी नहीं हटाना चाहिए। जब तुम सीधे खड़े हो जाओ, तो तुम्हें **रब्बना लकल हमद** कहना चाहिए। [इस तरह खड़े होने को क़ौमा कहते हैं।]

5- एक लम्हे के लिए बग़ैर हरकत के खड़े हो और फिर **अल्लाहु अकबर** कहते हुए सज्दे के लिए झुक जाओ। सज्दे के लिए झुकते वक्त, a) पहले सीधा घुटना और फिर उलटा घुटना नीचे रखो, उसके बाद सीधा और उलटा दोनो हाथ ज़मीन पर रखो।

b) तुम अपने पंजे झुकाओ और उन्हें किब्ले की तरफ़ घुमाओ।

c) सर हाथों के बीच में रहे।

d) उंगलियाँ बंद होनी चाहिए।

e) हथेलियों को ज़मीन पर टिकाओ, कुहनियों को ज़मीन पर न बिछाओ।

f) तुम्हें सज्दे में कम से कम सुब्हान रब्बियल आला तीन बार कहना चाहिए। फिरः

6- उसके बाद, **अल्लाहु अकबर** कहते हुए, तुम अपना उलटा पैर ज़मीन पर रखो उसके पंजों को सीधी तरफ़ रखते हुए। सीधा पैर ऊपर की तरफ रहे उसके पंजे ज़मीन पर रहें और किब्ले की तरफ़ इशारा रहे। तुम अपनी रानों पर बैठ जाओ, अपनी हथेलियों को घुटनों पर रखो और अपनी उंगलियों को थोड़ा खोल दो।

7- अल्लाहु अकबर कहते हुए, तुम दोबारा सज्दे में चले जाओ। [एक लम्हे के लिए, दोनो सज्दों के बीच में बगैर हरकत बैठने को जलसा कहते हैं।]

8- सुब्हाना सब्बियल आला कम से कम तीन बार कहने के बाद सज्दे में, तुम **अल्लाहु अकबर** कहते हुए खड़े हो जाओ। जब तुम खड़े हो, तो खड़े होने के लिए सहारे के तौर पर हाथों पर झुकना नहीं चाहिए, ना ही ग़ैर ज़रूरी अपने पैरों को हिलाना चाहिए। जब सज्दे से खड़े हो, तो तुम्हें सबसे पहले अपना माथा, फिर अपनी नाक, फिर, उलटा हाथ और सीधा हाथ, फिर उलटा घुटना और सीधा घुटना उठाना चाहिए।

9- जब खड़े हो, तो तुम्हें बिस्मिल्लाह, **फातिहा** और दूसरी सूरत पढ़नी चाहिए। फिर तुम **अल्लाहु अकबर** कहते हुए रूकू में झुक जाओ।

10- दूसरी रकाअत [नमाज़ की इकाई जो हर एक खड़े होने, झुकने, और दो बार सज्दों के अमाल पर मुश्तमिल है] भी इसी तरह पूरी होगी जिस तरह पहली रकाअत वाज़ेह की गई। बहरहाल, दूसरे सज्दे के बाद, जब तुम अल्लाहु अकबर कहो, तो तुम्हें खड़े नहीं होना, बल्कि तुम अपनी रानों पर बैठ जाओ।

a) **अत्तहीयात, अल्लाहुम-म सल्लैह, अल्लाहुम-म बारक और रब्बना आतिना** की दुआएँ पढ़ने के बाद तुम्हें पहले सीधी तरफ़ सलाम कहना होगा, फिर उलटी तरफ़, **अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह** कहना होगा।

b) ये करते हुए, तुम्हे खास दुआएँ पढ़नी होगीं "**अल्लाहुम-म अन्तस-सला मु व मिन-कस सला मु तबारक-त या ज़ल-जलालि वल-इकरमि।**" फिर तुम खडे हो जाओ और बीच में कुछ कहे बग़ैर तुम सुवह की नमाज़ की फर्ज़ [ज़रूरी इबादत] अदा करो।तुम्हें सुन्नत और फर्ज़ या फर्ज़ और सुन्नत के बीच कुछ बोलना नहीं चाहिए।अगरचे ये नमाज़ की नफ़ी नहीं करता, लेकिन सुन्नत का सवाव खत्म हो जाता है।

नमाज़ पूरी करने के बाद, तुम्हें मंदरजाज़ेल दुआ पढ़नी होगी, तुम्हें पूरे तीन इस्तिग़फ़ार पढ़ने होंगे।फिर तुम आयतलकुरसी और सुब्हानल्लाह, अलहमदुलिल्लाह, अल्लाहु अकबर, **33** बार पढ़ो, और दुआ "**ला इला-ह इल्लल्लाहु वह दहू ला शरीक लहुल मुल्कु व लहुल हम्दु व-हु-व अला कुल्लि शैइन कदीर**" एक बार पढ़ो।[इन दुआओं को बहुत हल्के से पढ़ना चाहिए।इनको ज़ोर से पढ़ना विदअत है।]

उसके बाद, तुम्हें दुआ [अर्ज़ करना] करनी है।जबकि दुआ मांग रहे हो, तो आदमियों को अपनी बाज़ू सीधे सीने तक रखने हैं।बाज़ूओं को कुहनियों पर नहीं मोड़ना।हथेलियों को खुला रखना है; वो आसमान की तरफ़ मुड़े हों।इस वजह से के नमाज़ के लिए किब्ला काबा है और दुआ के लिए किब्ला आसमान है।दुआ माँगने के बाद, तुम्हें "**सुबहाना रब्बिका...**" की आयत भी पढ़नी चाहिए।फिर आराम से अपने हाथों को अपने चेहरे पर मलो।

जिन नमाज़ों की सुन्नत चार रकाअत की हैं उनकी दूसरी रकअत के आखिर में बैठी हुई हालत में, और फर्ज़ नमाज़ों में, तुम्हें अत्तहीयात की दुआ पढ़नी चाहिए।तीसरी और चौथी रकाअत में सुन्नत नमाज़ में, तुम्हें फातिहा के बाद दूसरी सूरत भी पढ़नी होगी।फर्ज़ नमाज़ों की तीसरी और चौथी रकाअत में तुम्हें सिर्फ़ फातिहा पढ़नी है, कोई दूसरी सूरत नहीं।इसी तरह शाम की नमाज़

के फर्ज़ हैं। यानी, तुम्हें तीसरी रकाअत में कोई दूसरी सूरत नहीं पढ़नी। वितर की नमाज़ की तीनों रकाअतों में, तुम्हें फातिहा की सूरत पढ़ने के बाद दूसरी सूरत पढ़नी होती है। तीसरी रकाअत में दूसरी सूरत पढ़ने के बाद, तुम्हें अपने दोनो हाथ कानों तक उठाने होगें तकबीर [अल्लाहु अकबर] कहते हुए, और (बाद में उलटे हाथ को कलाई तक सीधे हाथ से पकड़ते हुए) तुम्हें दुआ जिसे कहते हैं **कुनूत** पढ़नी होगी। देर बाद दोपहर और रात की नमाज़ की इबतदाई सुन्नतें दूसरी सुन्नत नमाज़ की चार रकाअत की तरह हैं। लेकिन जब तुम उसकी दूसरी रकाअत के बाद बैठते हो, तो अत्तहीयात पढ़ने के बाद, अल्लाहुम्म-म सल्लीह और अल्लाहुम बारिक पूरी पढ़ी जाएंगी।

एक औरत अकेले नमाज़ किस तरह अदा करेः

एक औरत जो अकेले नमाज़ अदा करती है, मिसाल के तौर पर **सुबह की नमाज़ की सुन्नत,** उसे मंदरजाज़ेल तरीके से अदा करेगीः

1- वो अपने आपको सर से लेकर पैर तक ढांपगी, उसके जिस्म के खदोखाल ज़ाहिर नहीं होने चाहिए। सिर्फ़ हाथ और चेहरा खुला रहना चाहिए। उसे भी वही सूरतें और दुआएं नमाज़ में पढ़नी हैं जोकि एक आदमी जब अकेले नमाज़ अदा करता है तो पढ़ता है, जिस तरह पहले बताया गया है। फर्क यह हैंः

a) उन्हें अपने हाथों को कानों तक नहीं उठाना जैसा के आदमी करते हैं। उन्हें अपने हाथ अपने कंधों तक उठाने है और नीयत (इरादा)

बांधनी है। फिर वो अपने सीने के ऊपर उलटे हाथ को कलाई सीधे हाथ से पकड़ेगी।

b) रूकू करते वक्त उन्हें अपनी कमर को सीध में नहीं रखना।

c) सज्दे में वो अपने बाज़ूओं को फर्श पर बिछा लेती हैं।

d) बैठने की हालत में वो अपने कुल्हों पर बैठे। यानी, वो अपने कुल्हे ज़मीन पर टिका कर बैठे हों। उनकी रानें एक दूसरे के करीब हों। उनके पाँव उनके सीधी तरफ़ से बाहर निकले हों।

सबसे बढ़िया तरीका एक औरत का नमाज़ अदा करने के लिए अपने आपको ढांपने का, वो के सर का कवर इतना बड़ा पहनना के उसके हाथों को भी ढक ले और चौढ़ा सर्कट इतना लंबा के उसके पैर भी ढक जाएँ।

नमाज़ के वाजिबात

नमाज़ के वाजिब ये हैंः

1- फातिहा (सूरह) को पढ़ना।

2- फातिहा के बाद एक दूसरी सूरह या कम से कम तीन छोटी आयतें पढ़ना।

3- दूसरी सूरह पढ़ने से पहले फातिहा पढ़ना।

4- फ़र्ज़ नमाज़ों की पहली और दूसरी रकअत में और सुन्नत और वाजिब नमाज़ों की हर रकअत में फातिहा और दूसरी सूरत पढ़ना।

5- (दो) सज्दे करना एक के बाद फ़ौरन दूसरा करना।

6- तीन चार रकअतों वाली नमाज़ में दूसरी रकअत में तशहहुद पढ़ने जितना बैठना।

7- दूसरी रकअत में तशहहुद से ज़्यादा न बैठना।

8- सज्दे में, नाक और माथा दोनो ज़मीन पर टिकाना।

9- आखिरी रकअत में बैठी हुई हालत में **अत्तहीयात** पढ़ना।

10- तादील-ए अरकान, यानी इतना लम्बा बेहरकत (जितना के कह सके) खड़े होना के सुब्हानल्लाह कह सके।

11- नमाज़ के खात्मे पर "असस्लामु अलेकुम व रहमतुल्लाह कहना।

12- वितर नमाज़ की तीसरी रकाअत के आखिर में दुआए कुनूत पढ़ना।

13- ईद की नमाज़ों में तकबीर पढ़ना।

14- इमाम के लिए सुबह, जुमे, ईद, तराविह, वितर, और शाम और रात की नमाज़ों की पहली दो रकातों में आयात को तेज़ पढ़ना।

15- इमाम के लिए, साथ ही उस शख़्स के लिए जो खुद नमाज़ अदा कर रहा हो, तो ये वाजिब है के ज़ोहर और असर की नमाज़ों में, शाम की नमाज़ की तीसरी रकाअत में और रात की नमाज़ की तीसरी और चौथी रकाअतों में आयतों को न सुनाई देने वाली हलकी आवाज़ में पढ़ना चाहिए।इमाम के लिए जो सूरतें वाजिब हैं तेज़ आवाज़ में पढ़ने के लिए वो उस शख़्स के लिए भी इजाज़त दी गई हैं जो खुद नमाज़ अदा कर रहा है के तेज़ आवाज़ में साथ के साथ नरमाई से पढ़े।

अरफ़ा के दिन पर सुबह की नमाज़ से, यानी, कुरबानी की ईद से पहले वाले दिन से, चौथे दिन की असर की नमाज़ तक, जोकि तादाद में नमाज़ की तेईस दुआएँ हैं, ये सबके लिए वाजिब है तकबीर-ए तशरीक (अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर।ला इल्लाहा इल्ललल्लाह।वल्लाहु अकबर।अल्लाहु अकबर व लाइलाहिल-हमद) किसी भी फर्ज़ नमाज़ के सलाम के फौरन बाद एक बार पढ़ना।

सज्दा-ए सहव (गल्ती हो जाने और छूट जाने की वजह से सज्दा करना)

जब एक शख़्स नमाज़ अदा करते वक्त एक नमज़े फर्ज़ जानबुझकर या भूल से छोड़ दे, तो उसकी नमाज़ टूट जाएगी। नमाज़ के वाजिबों में से एक भुले से टूट जाए तो नमाज़ नहीं टूटती। अगरचे, उसे सज्दा-ए सहव करना होगा। एक शख़्स जो ज़रूरी सज्दा-ए सहव अदा नहीं करता या जो नमाज़ के वाजिबात में से एक भी जानबुझकर छोड़ता है तो उसे वो नमाज़ दोबारा अदा करनी होगी। ये वाजिब है। अगर वो ऐसा नहीं करता, तो वो गुनहगार बन जाएगा। सुन्नत को छोड़ने पर सज्दा-ए सहव की ज़रूरत नहीं है। सज्दा-ए सहव एक फर्ज़ को देर करने में या छोड़ने पर/वाजिब में देरी करने में अदा करना चाहिए।

इस हालत में के कई सज्दा-ए सहव लाज़िम हों तो, एक सज्दा-ए सहव करना काफ़ी है। जब एक इमाम नमाज़ में गलती करे और सज्दा-ए सहव करे, तो जमाअत को भी ऐसा करना चाहिए। अगर एक शख़्स जमाअत में गलती करे तो उसे सज्दा-ए सहव नहीं करना चाहिए।

सज्दा-ए सहव करने के लिए; एक तरफ़ सलाम फैरने के बाद (नमाज़ के आखिर में), तुम्हे दो सज्दे करने चाहिए और फिर नमाज़ पूरी करने के लिए बैठ जाए। तुम्हे बैठी हुई हालत में **(अततहीयातु)**, **(सल्लि और बारिक)**, **(रब्बाना)** की दुआएँ पढ़नी चाहिए। दोनो तरफ़ सलाम फैर कर और साथ के साथ वग़ैर सलाम किए हुए भी सज्दा-ए सहव करने की इजाज़त है।

चीज़ें जो सज्दा-ए सहव को ज़रूरी बनाती हैंः

खड़े हो जाना जब की तुम्हे बैठना चाहिए था। बैठ जाना जबकि तुम्हे खड़े होना था। जहाँ तुम्हे तेज़ पढ़ना है वहाँ हल्के पढ़ना। जहाँ तुम्हे हल्के पढ़ना है वहाँ तेज़ पढ़ना। जहाँ एक शख़्स दुआ पढ़ रहा है, वहाँ कुरआन अल करीम से पढ़ना। जहाँ कुरआन अल करीम से पढ़ना है वहाँ एक दुआ का पढ़ना। मिसाल के तौर पर, सूरह फ़ातिहा के बजाए अततहीयात की दुआ पढ़ना, या जब तुम्हे अततहीयात पढ़नी हो तो सूरह फ़ातिहा का पढ़ना। इस हालत में, फ़ातिहा को छोड़ देना चाहिए। नमाज़ की अदाएगी पूरी करने से पहले सलाम कर लेना। फर्ज़ नमाज़ों की पहली और दूसरी रकअतों में दूसरी सूरत को न पढ़ना, तीसरी या चौथी रकाअतों में इसे पढ़ना। सूरह फ़ातिहा के बाद पहली दो रकअतों में दूसरी सूरह न पढ़ना। ईद की नमाज़ों की तकबीरों को छोड़ना। वितर की नमाज़ में दुआए कुनूत छोड़ना।

सज्दा-ए तिलावत

कुरआन अल करीम में चौदह जगहों पर सज्दे की आयतें आई हैं। किसी के लिए भी जो इनमें से किसी एक को पढ़ रहा है या सुन रहा है, चाहे वो इसका मतलब न समझता हो, उसपर सज्दा (सिर झुकाना) करना वाजिब हो जाता है। एक शख़्स जो सज्दे की आयत को लिख रहा है या हिज्जे कर रहा हो उसे सज्दा नहीं करना चाहिए।

सज्दा उन पर वाजिब नहीं है जो आयत की गूंज को पहाड़ों से, जगलों में या किसी और जगह से आती हुई सुनें, या उनके लिए भी नहीं है जो इसे चिड़ियों से सुनें। इसका इंसानी आवाज़ होना ज़रूरी है। रेडियो या लाऊड स्पीकर से जो आवाज़ सुनाई देती है वो इंसानी अवाज़ नहीं है, बल्कि ये एक बेजान धात की तजदीद है जो उस शख़्स की आवाज़ की तरह है जो कुरआन अल करीम को पढ़ (या किरअत) रहा हो। इसलिए, एक शख़्स के लिए सज्दे

की आयत को टेप रिकाडर या रेडियो या लाऊड स्पीकर से सुनकर सज्दा-ए तिलावत करना वाजिब नहीं है।

एक वुज़ू के साथ, सज्दा-ए तिलावत करने के लिए, किब्ले की तरफ़ खड़ा होना चाहिए, अपने हाथों को कानों तक उठाए बग़ैर **अल्लाहु अकबर** कहना चाहिए, और सज्दे के लिए झुक जाना चाहिए। सज्दे में तुम्हें तीन बार **सुब्हाना रब्बियल आला** कहना चाहिए। फिर, जब खड़े हो, तो तुम्हें सज्दा पूरा करने के लिए **अल्लाहु अकबर** कहना चाहिए। ये ज़रूरी है के सबसे पहले नीयत करे। नीयत के बग़ैर ये कुबूल नहीं होगा।

जबकि तुम नमाज़ अदा कर रहे हो, उस हालत में तुम्हें (सज्दा-ए तिलावत की आयत) को पढ़ना है, तो तुम्हें फौरन एक दूसरा रूकू और सज्दा होगा, और फिर खड़े हो जाना है और अपनी किरअत (कुरआन की) को जारी रखना होगा। अगर तुम नमाज़ के रूकू के लिए झुक गए, कई आयतें पढ़ने के बाद, सज्दे को आयत के बाद, और ऐसा करते हुए अगर तुमने सज्दा-ए तिलावत की नीयत करली, तो नमाज़ का रूकू या सज्दे सज्दा-ए तिलावत माने जाएगें। जब जमाअत में नमाज़ अदा कर रहे हो, उस वाक्ये में के इमाम एक सज्दे की आयत पढ़ दें, तो तुम्हें इमाम के साथ एक ज़ाएद रूकू और दो सज्दे करने होंगे, चाहे तुमने इमाम की कही हुई आयत ना सुनी हो। जमाअत को रूकू में नीयत करनी होगी। नमाज़ के बाहर, सज्दा-ए तिलावत उस आयत को पढ़ने के फौरन बाद कर लेना चाहिए, या जितनी जल्दी मुमकिन हो सके, अगर ये मकरूह वक्त में है या भूल पाया है; इस हालत में इसे दूसरे मुनासिब वक्त तक के लिए मुल्तवी कर देना चाहिए।

शुक्र का सज्दा

ये सज्दा-ए तिलावत की तरह है। ये उस शख़्स के लिए मुस्तहब है जिसे नएमतें मिली हों या जिसे मुसिबत पर बचाया गया हो के अल्लाह तआला के लिए **सज्दा-ए शुक्र** अदा करे। सज्दे में वो पहले कहे, "**अल्हमदुलिल्ला**"। फिर उसे सज्दे की तसबीह पढ़नी चाहिए। नमाज़ के बाद शुक्र का सज्दा करना मकरूह है।

ऐसा कहा जाता था के जो तादील-ए अरकान का ध्यान नहीं रखते, जब नमाज़ अदा करते हैं, तो इसका सारी मखलूक पर नुकसान दह असर पड़ता है। क्योंकि, उनके गुनाह की वजह से, या तो बारिश नहीं होती या बिना मौसम के बारिश होती है, इस तरह अच्छे के बजाए नुकसान ज़्यादा होता है।

नमाज़ की सुन्नतें

1- दोनो हाथों को कानों तक उठाना तकबीर इफ़तिताह [जब नमाज़ शुरू करें अल्लाह अकबर कहा जाए] कहने के लिए। औरतों को अपने दोनो हाथों को अपने कंधों तक उठाना चाहिए।

2- जब हाथ उठाए जाएँ, तो हथेलियों को किब्ले की तरफ़ होना चाहिए।

3- तकबीर कहने के बाद सीधे हाथ से उलटे हाथ को कलाई के साथ पकड़ना।

4- उलटे हाथ के ऊपर सीधे हाथ को रखना।

5- आदमियों को अपने हाथों को नाफ़ के नीचे बाँधना, लेकिन औरतों को अपने हाथों को अपने सीने पर रखने चाहिए।

6- तकबीर-ए इफ़्तिताह कहने के बाद सुब्हानाका कहना।

7- इमाम के लिए, या एक शख़्स के लिए जो मुनफरिद नमाज़ अदा कर रहा है, आऊज़ु [आऊज़ु बिल्लाहि मिन-श-शै-ता निर रजीम] का कहना।

8- बिस्मिल्लाह का कहना।

9- रूकू में तीन बार सुब्हाना रब्बियल-अज़ीम का पढ़ना।

10- सज्दे में तीन बार सुब्हाना रब्बियल-आला का पढ़ना।

11- आखिरी क़अदा में "अल्लाहुम्मा सल्लि अला..." और अल्लाहुम्मा बारिक..." दुआएँ पढ़ना।

12- नमाज़ के आखिर में, कंधों के सिरों को देखते हुए सिर को सीधी तरफ़ और फिर उलटी तरफ़ फेरना, सलाम करते वक्त ["अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह कहते हुए"]।

13- जुमे और ईद की नमाज़ों के अलावा, पहली रकाअत में इतनी लम्बी सूरत पढ़ना जोकि दूसरी रकाअत में पढ़ी गई सूरह से दुगनी हो, [ये उसूल इमाम पर आएद होता है।]

14- रूकू से सीधे होते वक्त समिअल्ला हुलिमन हमिदह कहना।

15- रूकू के बाद सीधे खड़े होने के बाद रब्बना लकल हम्द कहना।

16- सज्दे में, उंगलियों को मिलाकर एक साथ रखना (यानी, उनके बीच में कोई खला न छोड़ना) और पंजों को मोड़ना ताकि वो किब्ले की तरफ़ रहें।

17- रूकू और सज्दों में झुकते वक्त और जब सज्दों से सीधे हों तो अल्लाहु अकबर कहना।

18- हाथों और घुटनों को ज़मीन पर रखना।

19- क़याम की हालत में ऐडियों को चार उंगल की चौड़ाई से एक दूसरे से परे रखना, लेकिन रूकू, कोमा, और सज्दे में उन्हें एक साथ रखना।

20- फातिहा के बाद खामोशी से "आमीन" कहना, रूकू के लिए झूकते वक्त अल्लाहु अकबर कहना, रूकू में उंगलियों को खोलना और घुटनों

को पकड़ना, सज्दों के लिए झुकते वक्त अल्लाहु अकबर कहना, आदमियों के लिए अपने सीधे पांव को खड़ा रखना जबकि वो उलटे पांव पर बैठे हों, दोनों सज्दों के बीच में बैठना।

शाम की नमाज़ में, छोटी सूरतें पढ़ी जाती हैं। सुबह की नमाज़ में, पहली रकाअत दूसरी रकाअत से बड़ी होती है। वो जो जमाअत में इमाम की तकलीद करते हैं, उन्हें फ़ातिहा और दूसरी सूरह नहीं पढ़नी चाहिए। उन्हें सुब्हानाका और तकबीरें कहनी चाहिए। वो तहिय्यात और सलवात-ए शरीफ़ पढ़ते हैं।

नमाज़ की मुस्तहबात

1- कयाम की हालत में सज्दे की जगह को देखना।

2- रूकू में पैरों को देखना।

3- सज्दे में, उस जगह को देखना जहाँ नाक है।

4- बैठी हुई हालत में, अपने घुटनों को देखना।

5- फातिहा सूरह के बाद जो दूसरी आयतें तुम पढ़ों सुबह और दोपहर की नमाज़ में वो लम्बी हों, और शाम की नमाज़ों में छोटी हों।

6- वो जो जमाअत में इमाम की तकलीद कर रहे हैं उन्हे बिल्कुल न सुनाई दी जाने वाली आवाज़ में तकबीर कहनी चाहिए।

7- रूकू में उंगलियों को खोलकर घुटनों पर रखना।

8- रूकू में सिर और गर्दन को एक बराबर रखना।

9- जब सज्दे के लिए झुकने लगे तो पहले सीधा घुटना और फिर उलटा घुटना नीचे रखें।

10- दोनो हाथों के बीच में सज्दा करना।

11- सज्दे में, माथा रखने से पहले नाक को नीचे रखना।

12- जब नमाज़ में जमाई आए तो उलटे हाथ के बाहरी हिस्से से मूँह को ढाँपना।

13- आदमियों को अपनी कुहनियाँ फर्श से ऊँची रखनी चाहिए। ताहम, औरतों को अपनी कुहनियाँ फर्श पर बिछा कर रखनी चाहिए।

14- सज्दे में बाज़ूओं और रानों को पेट से अलग रखना चाहिए। [आदमियों के लिए]

15- रूकू में बेहरकत खड़े होना और सज्दे में इतना लम्बा के तीन तसबीह पढ़ली जाएँ।

16- सज्दे में सिर उठाने के बाद हाथों को उठाना।

17- सज्दे में हाथों को उठाने के बाद घुटनों को उठाना।

18- कअदा की हालत में, हाथों को घुटनों पर किब्ले की तरफ़ सीधे तरीके से रखना।

19- जब सीधे और उलटी तरफ़ सलाम कहा जाए, तो सिर को घुमाना।

20- जब सीधे और उलटी तरफ़ सलाम पढ़ा जाए, तो कंधों के सिरों को देखना।

नमाज़ के मकरूहात

1- अपने कोट/चोग़े को बग़ैर सही तरीके से पहने हुए कंधों पर डाल लेना मकरूह है।

2- जब सज्दे के लिए जाने लगे तो अपने कपड़े के लटकते हुए हिस्सों को या अपने पाजामे को उठाना मकरूह है।

3- अपने कपड़े के लटकते हुए हिस्सों को या आस्तीनों (या कफ़ों) को मोड़े हुए नमाज़ शुरू करना मकरूह है।

4- ग़ैर ज़रूरी हरकतें मकरूह हैं।

5- ऐसे कपड़े पहनकर नमाज़ अदा करना जो तुम काम पर पहनते हो (अगर वो चिकने और गंदे हों) या जिन्हे तुम अपने अफ़सरों से मिलने जाते वक़्त नहीं पहनते तो ये मकरूह है।

6- मूँह में कुछ रखना जो सही तरीके से कुरआन अल करीम की किरअत न करा पाए तो ये मकरूह है। अगर ये एक शख़्स को कुरआन अल करीम की किरअत सही न करा तो नमाज़ बिल्कुल खत्म हो जाएगी।

7- नंगे सिर नमाज़ अदा करना मकरूह है।

8- पाखाना, पेशाब की हालत होने की हालत में, या जब तुम्हें हवा छोड़ने की ज़रूरत महसूस हो उस हालत में नमाज़ शुरू करना मकरूह है।

9- नमाज़ के दौरान, सज्दे की जगह से पत्थरों को या मिट्टी को हटाना मकरूह है।

10- जब नमाज़ शुरू कर रहे हों, या नमाज़ के दौरान उंगलियों को चटखाना मकरूह है।

11- नमाज़ के दौरान अपने पहलू में हाथ रखना मकरूह है।

12- अपने सिर (चेहरे) को चारों तरफ़ हिलाना मकरूह है और अपनी आँखों को इधर उधर घुमाना तनज़ीह मकरूह है। अगर तुम अपना सीना क़िब्ले से घुमा लोगे, तो तुम्हारी नमाज़ खारिज हो जाएगी।

13- तशहहुद में (क़अदा में और खास दुआएँ पढ़ते हुए नमाज़ के दौरान), कुत्ते की तरह बैठना, यानी अपने कुल्हों पर बैठना राने खड़ी करके और रानों को पेट से और घुटनों को सीने से मिला लेना और हाथों को ज़मीन पर रख लेना, मकरूह है।

14- सज्दे में आदमियों के लिए अपनी कलाइयों को फ़र्श पर रखना मकरूह है।

15- एक शख़्स के चेहरे की तरफ़ या ऐसे लोगों के पीछे जो तेज़ आवाज़ में बातें कर रहे हों नमाज़ अदा कर रहे हों तो ये मकरूह है।

16- हाथ या सिर के इशारे से किसी के सलाम का जवाब देना

मकरूह है।

17- नमाज़ के बाहर यहाँ तक के नमाज़ के दौरान जमाई लेना मकरूह है।

18- नमाज़ अदा करते वक्त आँखें बंद करना।

19- इमाम का मेहराब के अंदर खड़े होना मकरूह है।

20- इमाम के लिए अकेले नमाज़ अदा करना ऐसी जगह पर जो फर्श से आधे मिटर ऊँचा हो जहाँ जमाअत हो तो ये तनज़ीही मकरूह है।

21- एक इमाम के लिए नीची जगह पर अकेले नमाज़ अदा करना भी मकरूह है।

22- पीछली सफ़ में नमाज़ अदा करना जबकि आगे की सफ़ में जगह हो या पीछे की सफ़ में अकेले नमाज़ अदा करना जब आगे की सफ़ में कोई जगह खाली न हो तो ये मकरूह है।

23- ऐसे कपड़े पहनकर नमाज़ अदा करना जिसमें एक तस्वीर हो या जानदार लोगों की तस्वीरें हो ये तहरीमी मकरूह है।

24- अगर एक जानदार की तस्वीर दीवार में खींच दें या कपड़े के टुकड़ों पर या लटके हुए काग़ज़ या दीवार पर सिर के ऊपर लगे हों, सामने, या फौरन सीधे या उलटे एक शख़्स की तरफ़ जो नमाज़ अदा कर रहा हो तो ये मकरूह है।सलीब की तस्वीर भी एक जानदार की तस्वीर की तरह है।

25- आग या चिंगारियों को तरफ़ नमाज़ अदा करना मकरूह है।

26- तुम नमाज़ में पढ़ते हो आयतें या तसबीहें उंगलियों पर गिनना।

27- अपने आपको सिर से लेकर पैर तक तौलिए से ढापना नमाज़ अदा करने के लिए ये तहरीमी मकरूह है।

28- अपने सिर के चारों तरफ़ पगड़ी बाँधना अपने सिर के ऊपर के हिस्से को खुला रखते हुए नमाज़ अदा करना तहरीमी मकरूह है।

29- नाक और मुँह को बंद करके नमाज़ अदा करना तहरीमी मकरूह है।

30- बग़ैर सख्त ज़रूरत के गले से खाँसी करके बल्ग़म करना मकरूह है।

31- अपने हाथ एक या दो बार हिलाना, मकरूह है।

32- नमाज़ की किसी एक सुन्नत को छोड़ना मकरूह है।

33- बग़ैर ज़रूरत (सही उज़र के), अपने बच्चे को अपने बाज़ूओं में लेकर नमाज़ अदा करना मकरूह है।

34- जबतक के ज़रूरत न हो ऐसी चीज़ों का सामना करना नमाज़ अदा करते हुए जो तुम्हारे दिल को भटकाएँ और तुम्हारे ख़ुशुअ को रोकें, जैसे के सजावट की चीज़ें, खेल, गाने के साज़/आलात, या कोई भी खाना जिसकी तुम्हे इच्छा हो इस तरह तो ये मकरूह है।

35- दीवार या शहतीर से झुकना जब फर्ज़ नमाज़ अदा कर रहे हो अगर ऐसा करने की ज़रूरत न होतो ये मकरूह है।

36- रूकू में झुकते हुए या जब रूकू से सीधे होते हुए अपने हाथों को कानों तक उठाना मकरूह है।

37- रूकू के लिए झुकने के बाद किरअत को पूरा करना मकरूह है।

38- जब सज्दे और रूकू कर रहे हों, तो इमाम के करने से पहले अपने सिर को झुकाना या ऊपर उठाना मकरूह है।

39- ऐसी जगहों पर जो के नजस हों वहाँ नमाज़ अदा करना मकरूह है।

40- कब्र की तरफ़ मुँह करके इसे अदा करना मकरूह है।

41- तशहहुद (कअदा की हालत में) में सुन्नत के मुताबिक न बैठना मकरूह है।

42- दूसरी रकाअत में तीन आयात को लम्बा पढ़ देना पहली रकाअत में जो कहा गया उससे ज़्यादा तो ये मकरूह है।

जब नमाज़ अदा न कर रहे हों वो चीज़ें करना जो मकरूह हैंः

1- जब बेतुलखला में या किसी और जगह पाखाना या पेशाब कर रहे हों या रफ़ाए हाजत से फारिख होकर अपने आपको साफ़ कर रहे हो और तुम्हारा अगला य पिछला हिस्सा किबले कि रूख हे तो ये तेहरिमी मकरूह होगा।

2- सूरज या चाँद की तरफ़ पेशाब या पाखाना करना।

3- एक छोटे बच्चे को हाजतो से राहत दिलाने के लिए इन दिशाओ में किसी एक की तरफ़ पकड़कर कराना मकरूह है एक बालिग़ के लिए जो इसे पकड़े।इसी तरह, एक बच्चे का कुछ इस तरह करना बालिग़ के लिए जो के हराम हो वो उस बालिग़ के लिए भी हराम हे जो बच्चे को ऐसे पकडा हो।

4- बग़ैर किसी वाज़ेह उज़्र के अपनी टाँगों को या एक टाँग को किब्ले की तरफ़ फैलाना तहरीमी मकरूह है।

5- कुरआन की तरफ़ या दूसरी इस्लामी किताबों की तरफ़ भी अपनी टाँगों को फैलाना मकरूह है।अगर वो ऊँचे सतर पर हों तो ये मकरूह नहीं है।

चीज़ें जो एक नमाज़ को मंसूख करती हैं

1- बग़ैर किसी वाज़ेह उज़्र के, गले से बलग़म करना नमाज़ को खारिज करता है।

2- जिस शख़्स ने छींका हो और कहा हो, "अलहम्दुलिल्लाह" नमाज़ में उसे, "**यरहमुकल्लाह**" कहना नमाज़ को खारिज करता है।

3- अगर एक शख़्स मुंफरिद नमाज़ अदा कर रहा हो वो पास की जमाअत के इमाम का सुने के उन्होने एक गलती करदी है क़ुरआन अल-करीम की किरअत करते हुए और इमाम को इस गलती की तंबीह करे, तो उसकी नमाज़ बेअसर हो जाएगी। अगर इमाम क़ुरआन अल-करीम की किरअत करते वक्त, उस शख़्स की तंबीह सुनकर अपने आपको सही करे, तो इमाम की नमाज़ भी बेअसर हो जाएगी।

4- अगर एक शख़्स नमाज़ अदा करते वक्त "**ला इलाहा इल्लाह**" कहे, अगर उसकी नीयत दूसरे शख़्स को जवाब देने की है तो, उसकी नमाज़ बेअसर हो जाएगी। अगर उसकी नीयत अल्लाह तआला की वहदानियत को वाज़ेह करने के लिए हो, तो उसकी नमाज़ बेअसर नहीं होगी।

5- एक शख़्स के अवरत हिस्सों को खोलना।

6- दर्द या दुख की वजह से चिल्लाना नमाज़ को बेअसर करता है। (अगर तुम जन्नत और दोज़ख के बारे में सोचकर चिल्ला रहे हो, तुम्हारी बेअसर नहीं होगी।)

7- किसी के सलाम का जवाब देना, चाहे किसी भी तरह से, नमाज़ को बेअसर करता है।

8- अगर एक शख़्स जिसने पाँच वक्त की इबादतों की नमाज़ों से चंद नमाज़ें ही छोड़ी हों और उसे याद हो के उसने साबका नमाज़ें नहीं पढ़ीं, तो उसकी नमाज़ खारिज/बेअसर हो जाएगी।

9- अगर एक शख़्स, जोकि नमाज़ अदा कर रहा हो, वो ऐसी हरकत या काम करता है के कोई भी शख़्स जो उसे देखता है वो सोचता है के वो नमाज़ अदा नहीं कर रहा तो, उसकी नमाज़ बेअसर हो जाएगी।

10- खाना या पीना।

11- बातचीत करना।

12- किसी के ज़रिए की गई गलती को सही करना सिवाए इमाम के जिसकी वो तकलीद कर रहा हो, नमाज़ को बेअसर करती है (उस शख़्स की जिसने सही करा हो)।

13- नमाज़ अदा करते वक्त हँसना।

14- कराहना या “आऊच!” वग़ैरह कहना, नमाज़ को बेअसर करता है।

चीज़ें जो एक नमाज़ को तोड़ने के लिए जाईज़ हैंः

1- एक साँप को मारने की वजह से।

2- एक भागते हुए जानवर को पकड़ने की वजह से।

3- एक झूंड को भेड़ियों से बचाने की वजह से।

4- एक खाने को आग से हटाते हुए जो उबल रहा हो।

5- जब नमाज़ का वक्त कज़ा होने का या जमाअत में जाने के लिए देर होने का खतरा न हो, दूसरे मसलक के मुताबिक अपने आपको उस चीज़ से बचाना जो नमाज़ को बेअसर करती हो, जैसे के नजासत को साफ करना जो एक दरहम सी भी कम हो या फिर वुज़ू करना जब तुम्हें याद आ जाए के तुमने एक औरत को छुआ था जोकि नामहरम थी, तो तुम्हें अपनी नमाज़ तोड़ देनी चाहिए।

6- पेशाब या हवा निकालने की वजह से (अगर तुम्हें सख़्त ज़रूरत महसूस हो)।

चीज़ें जो एक नमाज़ को तोड़ने के लिए फर्ज़ हैं

1- नमाज़ तोड़ देनी चाहिए एक शख़्स के चिल्लाने की वजह से जो मदद के लिए पुकार रहा हो, एक अंधे शख़्स को बचाने के लिए जो कुँए में गिरने ही वाला हो, एक शख़्स को बचाने के लिए जो जलने वाला हो या डुबने वाला हो, या आग बुझाने की वजह से।

2- जब तुम्हारी माँ, बाप, दादी या दादा तुम्हें आवाज़ दें, तुम्हारे लिए ये वाजिब नहीं है के तुम फर्ज़ नमाज़ तोड़ो, बल्कि इसकी इजाज़त है; ताहम, अगर ज़रूरी नहीं है तो तुम्हें इसे नहीं तोड़ना चाहिए।लेकिन नफ़िल नमाज़ [चाहे सुन्नतें भी] तोड़ी जा सकती है।अगर वो मदद के लिए पुकारे, तो ये ज़रूरी है के फर्ज़ नमाज़ को भी तोड़ दिया जाए।

जमाअत (इजतमाअ) में नमाज़

रोज़ाना की पाँच नमाज़ों में, चाहे एक शख़्स ही क्यों न हो वो जमाअत क तौर पर काफ़ी है।आदमियों के लिए सुन्नत है के रोज़ाना की पाँच वक्त की फर्ज़ नमाज़ों को जमाअत से पढ़ें।ईद और जुमे की नमाज़ों के लिए ये ज़रूरी (फर्ज़) है।हदीस-ए शरीफ़ से वाज़ेह है के जमाअत में अदा की गई नमाज़ें ज़्यादा सवाब देती हैं बनिसबत एक शख़्स के मुंफरिद अदा करने के।हमारे पैग़म्बर अलैहिस-सलाम ने फरमायाः **(जमाअत में अदा की गई नमाज़ को उस नमाज़ से जो वो अकेले अदा करता है उससे सत्ताईस बार इतना ज़्यादा सवाब मिलता है।)** दोबारा, आपने कहाः **(वो जो सही वुज़ू करता है और जमाअत से नमाज़ अदा करने की खातिर मस्जिद जाता है, तो हर कदम के लिए जो वो लेगा, उसे एक ईनाम दिया जाएगा, उसके आमाल नामे से एक गुनाह मिटा दिया जाएगा और उसे जन्नत में एक सीढ़ी दर्जा चढ़ा दिया जाएगा, अल्लाह तआला के ज़रिए।)**

जमाअत में नमाज़ अदा करना मुसलमानों में मेल का कायम करता है।ये ईमान वालो के बीच में प्यार और उनस बढ़ाता है।जमाअत जमा करती है और बात करती है।इस तरह, मुसिबत या बीमारी आसानी से पकड़ली जाती है।जमाअत मुसलमानों की एक खुबसूरत मिसाल है एक जिस्म, एक दिल की तरह।

एक बीमार शख़्स या माज़ूर के लिए, एक शख़्स के लिए जिसका पैर कट गया हो, एक शख़्स के लिए जो चलने में बहुत बूढ़ा हो, और एक अंधे शख़्स के लिए जमाअत में जाना ज़रूरी नहीं है।

वो शख़्स जो नमाज़ अदा कराता है उसे **इमाम** कहते हैं।जमाअत का इमाम बनने के लिए शर्ते हैं।

इमाम बनने की शराइत

इमाम बनने के लिए छः शराइत हैं।अगर ये पता चल जाए के एक इमाम इन शर्तो में से कोई एक नहीं रखता, तो जमाअत की नमाज़ कुबूल नहीं होगी।

1- एक मुसलमान होना।वो जो इस अमर से बेयकीनी करे के अबू बकर सिददीक और उमर फ़ारूक खलीफ़ा थे "रज़िअल्लाहु अन्हुमा," या जो मेराज पर या कब्र के अज़ाब में यकीन न रखे वो एक इमाम नहीं है।

2- सने बलूग़ की उमर को पहुँच गया हो।

3- बाशअर होना।एक शराबी या सटियाया हुआ बूढ़ा शख़्स एक इमाम नहीं बन सकता।

4- एक आदमी का होना।एक औरत आदमियों के लिए इमाम नहीं हो सकती।

5- कम से कम फ़ातिहा-ए शरीफ़ा और एक और आयत सही तरीके पढ़ने के काबिल होना।एक शख़्स जो एक आयत याद नहीं कर सकता, या जो तजवीद के साथ याद की हुई आयत को पढ़ न सके, या जो आयतों को गा कर पढ़ें, वो इमाम नहीं बन सकते।

6- बग़ैर उज़र के होना। एक शख़्स जो उज़र के साथ हो वो उन लोगों का इमाम नहीं बन सकता जिन्हें कोई उज़र न हो।

एक शख़्स जिसकी किरअत (क़ुरआन की किरअत) ख़ुबसूरत हो, यानी, जो क़ुरआन अल करीम की हुरूफ़ को जानता हो और जो क़ुरआन अल-करीम तजवीद के साथ पढ़ना जानता हो, वो इमाम बन सकता है। एक शख़्स नमाज़ अदा नहीं कर सकता उस इमाम की तकलीद में जो नमाज़ की शर्तो को अहमियत न दें। ये हदीस "**एक फ़ाजिर यहाँ तक के एक पाक मुसलमान के पीछे नमाज़ अदा करो!**" इसका मतलब मस्जिदों के इमामों से नहीं है, बल्कि अमीरों और गर्वनरों से है जो जुमे की नमाज़ों की इमामत कराते हैं, ताकि उनकी तकलीद की जाए और उनकी फरमाबरदारी की जाए।

एक शख़्स जो सुन्नत जानता हो [यानी, मज़हबी इल्म] उसे दूसरों पर फ़ौकियत हासिल है इमाम बनने के मामले में। इसके बाद वो जो क़ुरआन अल करीम को तजवीद के साथ पढ़ते हैं उन्हें फ़ौकियत मिलती है। इसके बाद जिन्हें ज़्यादा तक़वा हो मुंतख़िब किए जाते हैं। [तक़वे का मतलब है अल्लाह तआला के डर की वजह से अपने आपको हराम से परे रखना।] इसके बाद, जो बूढ़ा हो उसे फ़ौकियत मिलती है।

जो ग़ुलाम हैं, खानाबदोश हैं, फ़ासिक के लिए, यानी, उनके लिए जो (आदतन) बड़े गुनाह करते हैं,- शराब पीते हैं, ज़िना करते हैं, सूद लेते हैं, अपनी बीवियों और लड़कियों को बग़ैर अपने आपको ढके हुए बाहर जाने देना-, अंधे लोगों के लिए और उनके लिए जो जन्म से नाजाईज़ हों, उनके लिए इमाम बनना मकरूह है। इमाम नमाज़ को इस तरीके से नहीं बढ़ा सकते के जमाअत थक जाए या बोर हो जाए।

एक औरत के लिए इमाम बनना तहरीमी मकरूह है औरतों से बनी हुई जमाअत में नमाज़ अदा कराने के लिए।

अगर जमाअत में सिर्फ़ एक शख़्स हो, उसे इमाम के सीधे हाथ की तरफ़ खड़ा होना चाहिए।जब वहाँ पर दो या ज़्यादा लोग हों उन्हें इमाम के पीछे खड़े होना चाहिए।आदमियों को इस बात की इजाज़त नहीं है के एक औरत या बच्चे इमाम की तकलीद करें।

इमाम के पीछे, आदमी सफ़ें बांधे, उनके पीछे बच्चे, और बच्चों के पीछे औरतें सफ़ें बाँधे।

जब इमाम औरतों के लिए भी इमाम होने की नीयत करे, तो अगर एक औरत एक आदमी के साथ उसी सफ़ में खड़ी हो जाए जिसमें वो नमाज़ अदा कर रहा है तो उस आदमी की नमाज़ टूट जाएगी।अगर ये इमाम, औरतों का इमाम बनने की नीयत न करे, तो उस आदमी की नमाज़ को कोई नुकसान नहीं होगा।अगरचे, इस मामले में, उस और की नमाज़ क़ुबूल नहीं होगी।वो जो खड़े होकर नमाज़ अदा कर रहे हों, वो उस इमाम की तकलीद कर सकते हैं जो कअदे की हालत में नमाज़ अदा करेंगे।मुकीम (कायम) शख़्स एक सफ़री इमाम की तकलीद में नमाज़ अदा कर सकता है।वो जो एक फर्ज़ नमाज़ अदा कर रहे हों वो उस इमाम की तकलीद नहीं कर सकते जो एक नफ़ली नमाज़ अदा कर रहा हो।वो जो नफ़ली नमाज़ अदा कर रहे हों वो एक इमाम की तकलीद कर सकते हैं जो एक फर्ज़ नमाज़ अदा कर रहा हो।अगर एक शख़्स पहचान ले के इमाम का वुज़ू नहीं है तो अपनी नमाज़ उस इमाम की तकलीद में अदा करने के बाद, उसे अपनी नमाज़ दोबारा पढ़ी होगी।

रग़ाएब, बरात और कदर रातों की नमाज़ों को जमाअत में पढ़ना मकरूह है।

चाहे अगर जमाअत राज़ी भी हो, ये मकरूह तहरीमी है इमाम के लिए के सुन्नत से ज़्यादा किरअत या तसबीह पढ़ना।

एक शख़्स जो रूकू (एक रकाअत की) में शामिल नहीं हुआ वो इमाम के साथ उस रकाअत को अदा नहीं कर सकता। एक शख़्स उस वक्त आया जब इमाम रूकू में हैं, अपनी नीयत उसने करी, खड़े होकर तकबीर कही, नमाज़ में शामिल हुआ, और फौरन रूकू में झूकते हुए इमाम की तकलीद शुरू कर दी। अगर इमाम ने आने वाले के रूकू में झुकने से पहले रूकू से सीधा खड़ा हो जाता है, तो उसने रूकू नहीं पकड़ा।

रूकू के झुकना, सज्दे के लिए नीचे होना, या सज्दे से खड़े होना इमाम के करने से पहले तो ये तहरीमी मकरूह है। फर्ज नमाज़ के बाद सफ़ों को फैलाना मुस्तहब है।

अगर एक मोमिन अपनी रोज़ाना की पाँच नमाज़ें मुसलसल जमाअत में अदा कर रहा है, तो उसे इतना सवाब मिलेगा जैसे के उसने सब पैग़म्बरों "अलैहिमुस्सलाम" के साथ जमाअत में नमाज़ अदा की।

जमाअत में अदा की गई नमाज़ की अफ़ज़लियत इस शर्त पर मुनहसिर है के उस इमाम की नमाज़ कुबूल हो।

अगर एक शख़्स बग़ैर वाज़ेह उज़र के जमाअत को छोड़ दे तो वो जन्नत की खुशबू नहीं पहचान पाएगा। वो जो बग़ैर वाज़ेह उज़र के जमाअत को छोड़े, तो उन्हें चारों आसमानी किताबों में लानत दी गई है।

हमें कोशिश करनी चाहिए के रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ों को जमाअत में अदा करें। फैसले वाले दिन, अगर अल्लाह तआला सातों ज़मीनों, सातों आसमानों, अर्श, कुर्सी और सारी तखलीक को तराज़ू के एक तरफ़ रख

दें, और जमाअत से अदा की गई नमाज़ के सवाबों को, इन शर्तों को देखते हुए, दूसरी तरफ़, जमाअत में अदा की गई नमाज़ के इनाम भारी हैं।

सही तरीके से इमाम की तकलीद करने के लिए दस शर्तो का पूरा होना चाहिएः

1- जब नमाज़ शुरू करो, तो तुम्हें नीयत (इरादा) करना चाहिए इमाम की तकलीद करने के लिए तकबीर कहने से पहले। ये ज़रूरी है दिल से कहना, "जो इमाम हाज़िर है मैं उसकी तकलीद करता हूँ।"

2- इमाम को औरतों का इमाम बनने के लिए नीयत करनी चाहिए (अगर उसे औरतों के लिए जमाअत करनी है)। उसे आदमियों का इमाम बनने के लिए नीयत नहीं करनी होती। बहरहाल, अगर वो अपनी नीयत नमाज़ अदा कराने के लिए करे, तो उसे इमाम बनने की रहमत भी मिलेगी, और रहमतें मुकतलीफ़ हो सकती हैं जमाअत में लोगों के शुमार के मुताबिक।

3- लोगों की ऐड़ियाँ जो जमाअत बना रहे हों, वो इमाम की ऐड़ी के पीछे हो।

4- इमाम और जमाअत दोनो एक ही फर्ज़ नमाज़ अदा कर रहे हों।

5- इमाम और जमाअत के बीच में औरतों की कोई सफ़ नहीं होनी चाहिए।

6- इमाम और जमाअत के बीच में कोई सड़क या दरिया नहीं होना चाहिए जहाँ से एक बैलगाड़ी या एक नाव पार हो सके।

7- इमाम और जमाअत के बीच में कोई दीवार नहीं होनी चाहिए जिसमें कोई खिड़की न हो जिससे इमाम को देखना या सुनना आसान हो।

8- इमाम को किसी जानवर पर नहीं होना चाहिए जबकि जमाअत फर्श पर या इसी तरह किसी और पर हो।

9- इमाम और जमाअत को दो मुख्तलीफ़ पानी के जहाज़ों पर सवार नहीं होना चाहिए जो एक दूसरे से मिले हुए न हों।

10- वहाँ पर नमाज़ के सही होने के लिए दो खबरें हैं, उस हालत में जबकि जमाअत और इमाम मुख्तलीफ मसलकों में होंः पहली खबर के मुताबिक, जमाअत जो एक इमाम की तकलीद कर रही है जोकि दूसरे मसलक में है वो ये नहीं जानते के जो चीज़ उनके मसलक के मुताबिक नमाज़ को बेअसर करती है तो इमाम में मौजूद है। दूसरी खबर के मुताबिक, मुख्तलीफ़ मसलक की जमाअत एक इमाम की तकलीद कर सकते हैं अगर बाद वाली मसलक में इस इमाम की नमाज़ सही है। इस तरह, इस बात की इजाज़त है के जिस इमाम के मुलमअ या भरे हुए दाँत हैं उसकी तकलीद की जा सकती है।

अगर जमाअत सिर्फ़ एक शख़्स की हो, तो इमाम के सीधे हाथ की तरफ़ खड़े होना चाहिए। उसके उलटी तरफ़ खड़े होना मकरूह है। उसके पीछे खड़े होना भी मकरूह है। उसकी ऐड़ी इमाम की ऐड़ी से आगे नहीं होनी चाहिए, उसकी नमाज़ सही होने के लिए। जब वहाँ दो या ज़्यादा लोग हों तो उन्हें इमाम के पीछे खड़ा होन चाहिए।

उसे इमाम के साथ इसे एक साथ पढ़ना चाहिए जैसे के वो इसे मुंफरिद तौर पर अदा कर रहा हो। लेकिन, जब खड़े हों तो उसे कोई दुआ नहीं पढ़नी चाहिए, इस बात से लापरवाह के आया इमाम न सुनाई दिए जाने वाली खामोशी या तेज़ आवाज़ से सूरतें कहे। [शाफ़ई मसलक में, जमाअत सूरह

फातिहा करीबन न सुनाई दिए जाने वाली हलकी आवाज़ में इमाम के साथ कह सकते हैं।] सिर्फ़ पहली रकाअत में वो **सुब्हानाका** कहेगा। जब इमाम फातिहा तेज़ आवाज़ से कहना बंद कर देंगे, वो कहेगा "**आमीन**" बिल्कुल खामूशी से। उसे इसे तेज़ आवाज़ से नहीं कहना। जब इमाम कहे, "**समि अल्लाहु लिमन हमिदा,**" रूकू से सीधे होते वक्त, वो (यानी जमाअत) कहेगा, "**रब्बना लकल हमद।**" फिर, वो सज्दे में इमाम के साथ झुकेगा, ये कहते हुए, "**अल्लाहु अकबर**" (न सुनाई दी जाने वाली आवाज़ में) ऐसा करते हुए। रूकू में, सज्दे में, और बैठे हुए, वो दुआएँ पड़ेगा जैसे के वो नमाज़ अकेले अदा कर रहा हो।

वितर की नमाज़ रमज़ान में जमाअत से पढ़ी जाएगी। बाकी सारे वक्तों में इसे मुंफरिद पढ़ा जाता है।

मस्बूक की नमाज़

चार तरह के लोग हैं जो एक इमाम की तकलीद करते हैं। वो हैं (मुदूरिक), (मुकतदी), मस्बूक और लाहिक।

एक शख़्स जो इमाम के साथ जमाअत में तकबीर-ए इफतिताह कहे उसे **मुदूरिक** कहते हैं।

एक शख़्स जिसकी जमाअत में इमाम के साथ तकबीर-ए इफतिताह कहने से छूट गई हो उसे **मुकतदी** कहते हैं।

एक शख़्स जिसे जमाअत में इमाम के साथ पहली रकाअत न मिली हो उसे **मस्बूक** कहते हैं।

लाहिक वो शख़्स से जिसने इमाम के साथ तकबीर-ए इफतिताह कही, ताहम, क्योंकि किसी वजह से उसका वुज़ू टूट गया, तो उसे दोबारा वुज़ू करना होगा और इमाम की तकलीद करते हुए दोबारा शुरू करनी होगी। ये शख़्स अपनी नमाज़ बग़ैर कुरआन अल करीम की किरअत करते हुए अदा करेगा, रूकू और सज्दे में सिर्फ़ तस्बीह पढ़ते हुए। अगर उसने कोई दुनियावी बात नहीं कही है, तो वो ऐसा होगा जैसे के जमाअत में उसने इमाम की तकलीद की। बहरहाल, उसे वहीं मस्जिद के आसपास वुज़ू करना होगा जो वो छोड़ गया है। क्योंकि कुछ आलिमों ने कहा है के अगर वो लम्बे फासले पर जाएगा, तो उसकी नमाज़ टूट जाएगी।

एक मस्बूक, यानी एक शख़्स जो इमाम के साथ पहली रकाअत में शामिल नहीं हो पाया, उसे इमाम के दोनों तरफ़ सलाम फ़ैरने के बाद खड़े हो जाना चाहिए, और जो रकाअतें उससे छुटी हैं उसकी कज़ा अदा करनी चाहिए।

वो इस तरह किरअत करे के जैसे के वो पहली रकाअत अदा कर रहा हो, फिर दूसरी और तीसरी रकाअत। लेकिन उसे कअदा की हालतें तबदील करके करनी होगी, जैसे के वो, चौथी, तीसरी, और दूसरी रकाअतें अदा कर रहा हो, यानी, जैसे वो आखरी रकाअत से शुरू कर रहा हो, और इसी तरह उलटा करके। मिसाल के तौर पर, एक शख़्स जो रात की नमाज़ की आखरी रकाअत के दौरान आया वो इमाम के सलाम फैरने के बाद खड़ा हो जाए पहली और दूसरी रकाअतों में उसे फ़ातिहा और दूसरी सूरत पढ़नी चाहिए। वो पहली रकाअत में बैठ सकता है, लेकिन दूसरी रकाअत में नहीं बैठ सकता।

अगर इमाम पाँच चीज़ें नहीं करेगा, तो जमाअत भी उन्हें नहीं करेगीः

1- अगर इमाम कुनूत की दुआ नहीं पड़ेगा, तो जमाअत भी उनमें से कोई भी नहीं पढ़ेगी।

2- अगर इमाम ईद की तकबीर नहीं कहेगा, तो जमाअत भी उसे नहीं कहेगी।

3- अगर इमाम एक नमाज़ की दूसरी रकाअत में नहीं बैठता जिसमें चार रकाअतें हैं, तो जमाअत भी नहीं बैठेगी।

4- अगर इमाम सज्द-ए तिलावत नहीं करेगा, अगरचे उसने सज्दे की आयत पढ़ी हो, तो जमाअत भी सज्दा-ए तिलावत नहीं करेगी।

5- अगर इमाम सज्दा-ए सहव नहीं करेगा, तो जमाअत भी ऐसा नहीं करेगी।

अगर इमाम चार चीज़ें करे, तो जमाअत उन्हें नहीं करेगीः

1- अगर इमाम दो सज्दों से ज़्यादा करले, तो जमाअत को ऐसा नहीं करना।

2- अगर इमाम ईद की तकबीर तीन बार से ज़्यादा कहले एक रकाअत में, तो जमाअत ऐसा नहीं कर सकती।

3- अगर इमाम जनाज़े की नमाज़ में चार तकबीरों से ज़्यादा बोल दे, तो जमाअत को ऐसा नहीं करना है।

4- अगर इमाम पाँचवी रकाअत के लिए खड़ा हो जाए, तो जमाअत ऐसा नहीं कर सकती। बल्कि, (वो इमाम का इंतज़ार करेंगे, और) वो एक साथ सलाम करेंगे।

वहाँ पर दस चीज़ें हैं जिन्हें जमाअत ने करना है चाहे अगर इमाम उन्हें करे या न करेः

1- तकबीर-ए इफ़तिताह के लिए हाथों को उठाना (नमाज़ की शुरूआत में)।

2- सुब्हानाका कहना।

3- जब रूकू के लिए झूकें तो तकबीर कहें।

4- रूकू में तस्बीह कहें।

5- जब सज्दे में जाएँ और जब सज्दे से उठें तो तकबीर कहना।

6- सज्दे में तस्बीह कहना।

7- चाहे अगर वो "समि अल्लाहु" न कहे, लेकिन जमाअत को "रब्बानालकलहमद" कहना चाहिए।

8- आखिर में अत्तहीयात कहना।

9- नमाज़ के आखिर में सलाम कहना।

10- कुरबानी की ईद के दौरान, सलाम करने के फौरन बाद तकबीर कहना, तेईस फर्ज़ दुआओं की हर एक की तकलीद करते हुए। इन तेईस तकबीरों को तकबीर-ए तश्रीक कहते है।

इफ़तिताह की तकबीर के फज़ाइल

जब एक शख़्स इमाम के साथ तकबीर-ए इफ़तिताह पढ़ता है रस्मी इबादत में जो वो अदा कर रहे हैं, उसके गुनाह पेड़ के पत्तों की तरह गिर जाते हैं जिस तरह पतझड़ में हवा चलती है।

एक दिन, जबकि रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' सुबह के वक्त की फर्ज़ नमाज़ अदा कर रहे थे, एक शख़्स तकबीर-ए इफ़तिताह में साथ नहीं था। उसने एक गुलाम को रिहाई दी। फिर, वो आया और रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछाः "या रसूलुल्लाह! मैं आज तकबीर-ए इफ़तिताह में शामिल नहीं हुआ। मैने एक गुलाम को रिहाई दिलाई। क्या मैं तकबीर-ए इफ़तिताह का सवाब हासिल कर सकता हूँ?" रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने अबू बकर-ए सिददीक रज़ी-अल्लाहु अनह से पूछाः **(तुम इस तकबीर-ए इफ़तिताह के बारे में क्या कहते हो?)** अबू बकर-ए सिददीक रज़ी अल्लाहु अनह ने कहाः (या रसूलुल्लाह! अगर मेरे पास चालीस ऊँट होते, अगर उन चालीस में खज़ाना भरा हो, अगर मैं वो सारे गरीब को खैरात में दे दूँ, तब भी मैं इमाम के साथ तकबीर-ए इफ़तिताह पढ़ने का सवाब हासिल नहीं कर सकता)।

उनके बाद, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(ए उमर! तुम इस तकबीर-ए इफ़तिताह के बारे में क्या कहते हो?)** हज़रत उमर ने कहाः (या रसूलुल्लाह! अगर मक्का और मदीने के बीच की सारी ज़मीन पर मेरे पास ऊँट होते, अगर वो सब खज़ाने से लदे होते, अगर मैं सारे गरीब को खैरात के तौर पर भी दे देता, तब भी मैं इमाम के साथ तकबीर-ए इफ़तिताह में शामिल होने का सवाब हासिल नहीं कर सकता)।

उनके वाद, रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने फरमायाः **(ए उसमान! तुम इस तकबीर-ए इफ़तिताह के बारे में क्या कहते हो?)** हज़रत उसमान ज़िन नूरएन रज़ी-अल्लाहु अनह ने कहाः (या रसूलुल्लाह अगर मैं रात में दो रकाअत रस्मी नमाज़ अदा करूँ, अगर मैं हर रकाअत में पूरा कुरआन अज़ीम उस शान पढ़ूँ, तव भी मैं इमाम के साथ तकवीर-ए इफ़तिताह पढ़ने का सवाव हासिल नहीं कर सकता)।

उनके वाद, रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने फरमायाः **(ए अली! तुम इस तकबीर-ए इफ़तिताह के बारे में क्या कहते हो?)** हज़रत अली करमअल्लाह वजहा ने कहाः (या रसूलुल्लाह! अगर मग़रिव और मश्रिक के बीच की ज़मीनें मुश्रिकों से भरीं हों, अगर मेरा रव मुझे ताकत दे, अगर मैं उन सब से लड़ने जाऊँ, तव भी मैं इमाम के साथ तकवीर-ए इफ़तिताह पढ़ने का सवाव हासिल नहीं कर सकता)।

उनके वाद, रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने फरमायाः **(ए मेरी कौम और मेरे साथियों! अगर ज़मीन की सात परतें और आसमान की सात परतें काग़ज़ होतीं, अगर समुंद्र सिहाही होते, अगर सारे पेड़ कलम होते, और अगर सारे फरिश्तें कातिब होते और कयामत तक लिखते रहते, तब भी वो इमाम के साथ तकबीर-ए इफ़तिताह पढ़ने का सवाब हासिल नहीं लिख सकते)**।

कहानीः महल में मस्जिद का बनना

इमाम-ए अवू यूसुफ, इमाम-ए आज़म अवू हानिफ़ा, “रहमतुल्लाहि अलैहि” के एक शार्गिद, हारून रशीद के हुकूमत के दौरान एक काज़ी (इस्लामी जज) थे।एक दिन, जव वो हारून रशीद की हाज़िरी में थे, तो किसी ने दूसरे

शख़्स पर मुकदमा कर दिया। हारून रशीद के वज़ीर ने कहा के वो खुद गवाह हैं। इमाम-ए अबू युसूफ़ ने वज़ीर की गवाही कुबूल नहीं की। खलिफ़ा ने पूछा के तुम एक वज़ीर की गवाही क्यों नहीं मान रहे। इमाम ने कहाः "एक दिन, आपने इसे कुछ करने का हुकूम दिया था। इसने आपसे कहा था के वो आपके गुलामों में से एक है। अगर ये सच कह रहा है, तो एक गुलाम की गवाही कुबूल नहीं होती। अगर वो झूठ बोल रहा है, तो एक झूठे की गवाही कुबूल नहीं हो सकती।" खलिफ़ा ने पूछा, "अगर मैं गवाही दूँ तो क्या तुम कुबूल करोगे?" उन्होने कहाः "नहीं, मैं नहीं।" खलिफ़ा ने पूछाः "क्यों?" इमाम ने कहाः "आप रस्मी/फ़र्ज़ नमाज़ें जमाअत में नहीं पढ़ते। खलीफ़ा ने कहाः मैं मुसलमानों के कारोबार को देखता हूँ।" इमाम ने कहा जब खालिक की फरमाबरदारी शुमार पर हो, तो मखलूक फरमाबरदारी नहीं करते। खलिफ़ा ने कहा आप सच कह रहे हैं। उन्होने हुकूम दिया के महल में एक मस्जिद बनाई जाए। एक मोअज़िन और एक इमाम रखे गए। उसके बाद, वो हमेशा जमाअत में फ़र्ज़ी नमाज़ें अदा करते थे।

जुमे की नमाज़

अल्लाह तआला ने मुसलमानों को जुमा मुकर्रर किया। ये उसका हुकूम है मुसलमानों के लिए जुमे में दोपहर की नमाज़ के वक्त जुमे की नमाज़ अदा की जाए।

जुमा की सूरह के आखिर में उसने ये वाज़ेह किया, जिसका मतलब हैः **(ए मेरे बंदों तुम्हें ईमान की इज़्ज़त बख्शी गई! जब जुमे के दिन तुम ज़ोहर की अज़ान सुनो, तो खुत्बा सुनने के लिए और जुमे की नमाज़ अदा करने के लिए मस्जिद की तरफ़ भागो। खरीदना और बेचना छोड़ो! जुमे की नमाज़ और खुत्बा तुम्हारे दूसरे कारोबारों से ज़्यादा तुम्हारे लिए फ़ाएदेमंद है। जुमे की**

नमाज़ अदा करने के बाद, तुम मस्जिद से जा सकते हो और मुंतशिर हो सकते हो ताकि तुम अपने दुनियावी लेन देन शुरू कर सको। तुम काम करो, और अल्लाह तआला से अपनी रोज़ी की उम्मीद रखो। अल्लाह तआला को बहुत ज़्यादा याद करो ताकि तुम बच सको!)

नमाज़ के बाद जो काम करना चाहते हैं वो बाहर जा सकते हैं, और जो अपना वक्त कुरआन अल-करीम की तिलावत और इबादत में गुज़ारना चाहते हैं वो मस्जिद में रह सकते हैं। जुमे की नमाज़ के वक्त के दौरान खरीदो फरोख्त करना गुनाह है।

रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने वाज़ेह कियाः **(अगर एक मुसलमान ने गुस्ल किया और मस्जिद गया जुमे की नमाज़ के लिए, तो जो गुनाह उसने उस वक्त के दौरान किए होगें वो माफ़ कर दिए जाएंगे और उसके हर कदम के लिए उसपर रहमत होगी।)**

(अल्लाह तआला उनके दिलों पर मुहर लगा देता है जो जुमे की नमाज़ अदा नहीं करते। वो भूल भूलैयाँ/भूलावे में डूब जाते हैं।)

(सब दिनों में सबसे कीमती जुमा है। जुमा ईद के दिनों और अशूरा के दिन (मौहर्रम की दसवीं दिन) से भी ज़्यादा कीमती है। जुमा ईमान वालों का दावत का दिन है इस दुनिया में और जन्नत में भी)।

(अगर एक शख़्स तीन जुमे की नमाज़ें अदा नहीं करता, अगरचे वहाँ कोई रूकावट नहीं है, अल्लाह तआला उसका दिल सी देता है। यानी, वो कभी कुछ अच्छा नहीं करेगा)।

(जुमे में एक लम्हा ऐसा है के जब ईमान वाला कोई दुआ भेजता है तो उसे मना नहीं किया जाता)।

(अगर एक शख़्स जुमे की नमाज़ के बाद सूरह इखलास और सूरह मुआज़तीन सात बार पढ़ता है तो अल्लाह तआला एक हफ़्ते के लिए उसे हादसों, परेशानियों और बुरे कामों से बचाता है)।

(जैसे के हफ़्ता दिया गया यहूदियों को और इतवार दिया गया ई साइयों को, जुमा मुसलमानों को दिया गया।इस दिन वहाँ पर फाएदे, बरकत और अच्छाई है मुसलमानों के लिए)।

जुमे में की गई इबादतें कम से कम दूसरे दिनों में की गई इबादतों से दुगनी बरकतें अता करती हैं।और जुमे में किए गए गुनाह दो गुना दर्ज किए जाते हैं।

जुमे में रूहें एक सात आती हैं और एक दूसरे से मिलती हैं।कब्रों पर जाया जाता है।इस दिन कब्र का अज़ाब मुल्तवी कर दिया जाता है।कुछ आलिमों के मुताबिक, ईमान वालों का अज़ाब दोबारा शुरू नहीं होता।लेकिन काफ़िरों का अज़ाब कयामत तक जारी रहेगा जुमे और रमज़ान में छोड़कर।वो ईमान वाले जो उस दिन मरे या उस रात के दौरान मरे तो उन्हें कभी कब्रों में अज़ाब नहीं मिलेगा।जुमे में दोज़ख इतनी गर्म नहीं होती।हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को जुमे में तखलीक किया गया।उन्हें जन्नत से जुमे में बाहर किया गया।लोग जो जन्नत में होंगे वो जुमों में अल्लाह तआला को देखेंगे।

जुमे की नमाज़ के फराइज़

जुमे की नमाज़ में सौलह रकाअतें होती हैं।ये हर आदमी के लिए फ़ज़-ए एन है के इसकी दो रकाअत पढ़े।ये ज़ुहर की फर्ज़ नमाज़ से ज़्यादा ताकीद की गई है।जुमे की नमाज़ दो गुपों की शर्तो पर मुनहसिर है फर्ज़ होने के लिएः

1- अदा की शर्तें/हालतें।

2- वुजूब की शर्तें/हालतें।

अगर अदा की हालतों में से कोई एक भी मौजूद नहीं है, तो नमाज़ कुबूल नहीं होगी। अगर वुजूब की हालतें मौजूद नहीं हैं, तो नमाज़ फिर भी कुबूल हो सकती है।

वहाँ पर अदा की सात शर्तें/हालतें हैं, यानी जुमे की नमाज़ का सही (जाईज़) होनाः

1- नमाज़ एक शहर में अदा करना। शहर एक जगह है जिसकी जमाअत एक बड़ी मस्जिद में रह न पाए।

2- रियास्त के सदर या गर्वनर की इजाज़त से इसे अदा किया जाए। उनके ज़रिए रखा गया खतीब किसी और को अपना नायब रख सकता है।

3- जुहर की नमाज़ के वक्त के दौरान इसे अदा किया जाए।

4- ज़ुहर की नमाज़ के वक्त के अंदर खुतबा पढ़ना। [हमारे आलिमों का कहना है के खुतबा "**अल्लाहु अकबर**" कहने की तरह है जब नमाज़ शुरू की जाए। यानी, दोनो को अरबी में कहना चाहिए। खतीब पहले खामोशी से "आऊज़ु" कहे, फिर "हमद-ओ-सना" और कलिमा-ए-शहादत कहे, और सलात-ओ सलाम ऊँची आवाज़ में। उसके बाद वो तबलीग़ करे, यानी, उन चीज़ों के बारे में आगाह करे जो ईमान और अज़ाब लाती हैं, और फिर आयत-ए करीमा पढ़ें। वो खड़ा हो जाए और फिर दोबारा खड़ा हो जाए। दूसरा खुत्बा कहने के बाद, वो ईमान वालों को बजाए तबलीग़ करने के सलामती की दुआ करने के लिए बुलाता है। ये उसके लिए ज़रूरी (मुस्तहब) है के चारों

खलीफाओं (हज़रत अबू बकर, हज़रत उमर, हज़रत उस्मान, हज़रत अली) के नाम का ज़िकर करे। दुनियावी तकरीर खुत्बे में शामिल करना हराम है। खुत्बा एक तकरीर, एक इजलास में तबदील नहीं करना चाहिए। छोटा खुत्बा कहना सुन्नत है, ओर लम्बा कहना मकरूह है।]

5- नमाज़ से पहले खुत्बा पढ़ना।

6- जुमे की नमाज़ जमाअत से पढ़ना।

7- मस्जिद का लोगों के लिए खुला होना।

वहाँ पर जुमे की नमाज़ के लिए वुजूब की नौ शर्ते हैं। यानी इसका एक शख़्स के लिए फर्ज़ होने के लिए नौ शर्ते मौजूद होना ज़रूरी है जिन्हें तकलीद किया जाएः

1- एक शहर में या कस्बे में रहना। ये मुसाफ़िरों (घूमने वालों के लिए) के लिए फर्ज़ नहीं है।

2- सेहतमंद होना। कमज़ोर शख़्स के लिए ये एक शख़्स जो कमज़ोर की देखभाल कर रहा हो जिसे वो अकेले छोड़कर नहीं जा सकता, या बहुत बूढ़े शख़्स के लिए ये फर्ज़ नहीं है।

3- आज़ाद होना।

4- एक आदमी होना। जुमे की नमाज़ औरतों के लिए फर्ज़ नहीं है।

5- समझदार होना और बालिग़ उमर का होना। यानी **(मुकल्लफ़)** होना।

6- अंधा न होना। एक अंधे शख़्स पे ये फर्ज़ नहीं हे चाहे अगर उसकी रहनुमाई करने के लिए कोई हो।

7- चलने के लायक होना। चाहे अगर वहाँ पर गाड़ियाँ हों, एक माज़ूर या बग़ैर पैरों वाले शख़्स के लिए ये फर्ज़ नहीं है।

8- कैद में न होना, किसी दुश्मन का हुकूमत का, या बुरे लोगों का डर न होना।

9- वहाँ पर बहुत ज़्यादा बारिश, बर्फ, या मिट्टी न होना। मौसम बहुत ज़्यादा ठंडा नहीं होना चाहिए।

जुमे की नमाज़ कैसे अदा की जाए?

जुमों में, जब जुहर की आज़ान पढ़ी जाए, तो जुमे की नमाज़ सौलह रकाअत के तौर पर अदा की जाए। वो इस तरह मंदरजाज़ेल हैंः

1- पहले, जुमे की नमाज़ की पहली सुन्नत, जिसमें चार रकाअत अदा की जाती हैं। ये जल्दी दोपहर। जुहर की **पहली सुन्नत** की तरह अदा की जाती हैं। इसकी नीयत इस तरह की जाती है "मैं नीयत करता हूँ जुमे की नमाज़ की पहली सुन्नत की वास्ते अल्लाह तआला के, मैं किब्ले की तरफ़ मूँह करता हूँ।"

2- दूसरा, दूसरी अज़ान और खुत्बा मस्जिद के अंदर अदा किए जाते हैं।

3- खुत्बे के बाद, इकामत कही जाती है और दो रकाअत (जुमे की नमाज़ के फर्ज़) जमाअत में अदा की जाती हैं।

4- जुमे की नमाज़ के फर्ज़ के बाद, चार रकाअतें (आखिरी सुन्नत) अदा की जाती हैं।

5- फिर जुहर-ए आखिर इस नीयत के साथ अदा की जाती है, "आखिरी जुहर की नमाज़ जोकि मुझ पर फर्ज़ थी अदा कर रहा हूँ लेकिन जो मेने अदा नहीं की।" इस नमाज़ में चार रकाअतें होती हैं। इन्हें जुहर के फर्ज़ की तरह अदा किया जाएगा।

6- आखिर में, दो रकाअतें (वक्त की सुन्नत) अदा की जाती हैं। इन्हें सुबह की सुन्नत की तरह अदा किया जाता है।

7- आगे आयतलकुर्सी और तसबीह कही जाएगी, और फिर दुआ [अलतमास] की जाएगी।

जुमे के अदाब और सुन्नतें

1- जुमे का वक्त जुम्मेरात की दोपहर के बाद शुरू होता है।

2- जुमे में गुस्ल वुज़ू करना।

3- बाल कटवाना। दाढ़ी के हिस्सों को कटवाना जो एक मुट्ठी से बड़े हों। नाखूनों को काटना। साफ कपड़े पहनना।

4- जुमे की नमाज़ के लिए जितनी जल्दी हो सके मस्जिद में पहुँचना।

5- एक शख़्स आगे वाली सफ़ों में पहुँचने के लिए जमाअत के कंधों के ऊपर से नहीं जाना चाहिए।

6- एक शख़्स को मस्जिद में नमाज़ अदा करते हुए शख़्स के सामने से नहीं गुज़रना चाहिए।

7- खतीब के मिंबर पर चढ़ने के बाद, एक शख़्स को कुछ कहना नहीं चाहिए, न ही किसी को जवाब देना चाहिए (चाहे इशारे के साथ), न ही अज़ान दोहरानी चाहिए।

8- जुमे की नमाज़ के बाद, सूरह फातिहा, काफ़िरून, इख्लास, फलाक़ और नास, हर एक सात बार पढ़ना चाहिए।

9- मस्जिद में रहना और देर दोपहर बाद/असर की नमाज़ तक इबादत करना।

10- आलिमों की तबलीग़ और तकरीरों में शामिल होना जो अहल-अस सुन्नत के आलिमों की किताबों में बयान करते हैं।

11- सारा जुमा इबादत करते हुए गुज़ारना।

12- सलवात-ए-शरीफ़ा [अल्लाहुम्मा सल्लि अल्ला सय्यैदना मौहम्मदिन व अला आलि सय्यैदन मुहम्मद] जुमे में पढ़ना।

13- मुबारक कुरआन पढ़ना। खासतौर से सूरह **कहफ**।

14- खैरात देना।

15- अपने वालदेन या उनकी कबरों पर जाना।

16- घर के लिए ज़्यादा और ज़ाऐकेदार खाना पकाना।

17- बहुत सारी फ़र्ज़ी नमाज़ें पढ़ना। वो जिन्होने नमाज़ें छोड़ी हों अपनी कज़ा अदा करना।

ईद की नमाज़ें

शव्वाल के महीने का पहला दिन ईद उल फ़ितर का पहला दिन है और ज़िलहिज्ज की दसवीं तारीख कुरबानी की ईद का पहला दिन है। ये दो दिन आदमियों पर वाजिब हैं के इशराक के वक्त ईद की नमाज़ की दो रकाअतें अदा करना यानी, कराहत का वक्त गुज़रने के बाद सूरज के उगने के बाद।

ईद की नमाज़ की शराइत जुमे की नमाज़ की शर्तो की तरह हैं। लेकिन ईद में, खुत्बा सुन्नत है और इसे नमाज़ के बाद पढ़ा जाता है।

ईदुल फितर में कुछ मीठा [खजूरें या मीठाई] खाना मुस्तहब है, गुस्ल करना, मिस्वाक का इस्तेमाल करना, सबसे अच्छा लिबास पहनना, फितरा अदा करना नमाज़ से पहले, और रास्ते में धीरे से तकबीर कहता हुआ जाए।

ईदुल अज़हा/कुरबानी की ईद में नमाज़ से पहले कुछ नहीं खाना, नमाज़ के बाद सबसे पहले कुरबानी का गोश्त खाना, ज़ोर से तकबीर-ए तशरीक पढ़ना, लेकिन जिन्हें कोई उज़र हो वो आहिस्ता पढ़ सकते हैं, जब नमाज़ के लिए जा रहे हों।

ईद की नमाज़ में दो रकाअत हैं। इसे जमाअत में अदा किया जाता है। इसे अकेले नहीं पढ़ सकते।

ईद की नमाज़/इबादत कैसे अदा करें?

1- सबसे पहले, तुम नीयत करते हुए नमाज़ अदा करो, "मैं नीयत करता हूँ ईद की नमाज़ की जोकि वाजिब है, इस इमाम के पीछे पढ़ता हूँ/मैं इस मौजूदा इमाम की तकलीद करता हूँ।" फिर, तुम **सुब्हानका** पढ़ो।

2- सुब्हानका के बाद, हाथों को कानों तक उठाएँ तीन बार; पहली और दूसरी बार में, उन्हें दोनो तरफ़ लटकता हुआ छोड़ दें, और तीसरी बार के बाद उन्हें नाफ़ के नीचे बांध लें। इमाम के फ़ातिहा और दूसरी कोई सूरत कहने के बाद तेज़ आवाज़ में, वो (इमाम और जमाअत) रूकू के लिए झूक जाएँ।

3- दूसरी रकाअत में इमाम पहले फातिहा और दूसरी सूरह पढ़ें, दोबारा, तीन बार हाथों को कानों तक उठाएँ, और हर बार वो दोनो तरफ़ लटके रहेंगे। चौथी रकाअत में तुम्हें अपने हाथों को कानों तक उठाने की ज़रूरत नहीं बल्कि इसके बजाए रूकू के लिए झूक जाओ। भूल में न पढ़ जाने की वजह से के उन नौ तकबीरों के बाद तुमने अपने हाथों को कहा रखना है, तुम मंदरजाज़ेल तरीके से इसको याद रख सकते होः "**दो बार उन्हें लटकाओ और एक बार बांधों। तीन बार उन्हें लटकाओ फिर झुक जाओ।**"

तकबीर-ए तशरीक़/तक्बीराते तशरीक

अरफ़े के दिन सुबह/फज्र की नमाज़ से, यानी, कुरबानी की ईद से पहले वाले दिन से, चौथे दिन की अस्र तक, जोकि कुल मिलाकर तेईस नमाज़ों पर मुश्तमिल है; ये हर किसी के लिए वाजिब है, मर्द और औरत एक तरह से, हाजियों के लिए और उनके लिए जिन्होने हज अदा नहीं किया, उनके लिए जो जमाअत में नमाज़ अदा करते हों और उनके लिए जो इसे अकेले अदा करें **तकबीर-ए तशरीक** किसी भी नमाज़ के सलाम के बाद जोकि फ़र्ज़ है (या जब किसी भी फ़र्ज़ नमाज़ की क़ज़ा अदा करनी हो इन ईद के दिनों की) एक बार फ़ौरन कहना चाहिए।

जनाज़े की नमाज़ के बाद इसे नहीं कहते। ये ज़रूरी नहीं है के मस्जिद को छोड़ने के बाद इसे कहें या अगर (नमाज़ के बाद) तुम बोलो)।

अगर इमाम तकबीर भूल जाए, तो जमाअत को इसे नहीं छोड़ना चाहिए। आदमियों को इसे तेज़ आवाज़ में कहना चाहिए। औरतों को इसे हल्की आवाज़ से कहना है।

तक्बीर तशरीक यह हैः

"अल्लाहु अकबर अल्लाहु अकबर ला इला ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर अल्लाहु अकबर व लिल्लाहिल हम्द।"

मौत के लिए त्यारी

मौत को याद रखना सबसे अफ़ज़ल मश्वरा है। हर ईमान वाले के लिए मौत को अक्सर याद करना सुन्नत है। ये एहकाम को मानने का सबब

बनती है और गुनाहों से बचाती है। ये एक शख़्स की मुमानियत चीज़ों की करने की हिम्मत को कम करती है। हमारे पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने बयान कियाः "**मौत को अकसर याद करो; ये मज़ों को रोंदती है और मनोरंजन को खत्म करती है!**" तसव्वूफ़ के कुछ आदमियों ने दिन में एक बार मौत को याद करना अपनी आदत बना लिया था। मुहम्मद बहाउददीन-ए बुखारी (कुदसिा सिरोह) अपने आपको मरा हुआ समझते थे और रोज़ाना पच्चीस बार दफ़न होते थे।

दुनियावी इच्छाएँ एक शख़्स को लम्बी ज़िंदगी जीने की चाह होने का सबब बनती है। इस्लाम की खिदमत करने के लिए और इबादतें अदा करने की वजह से लम्बी ज़िंदगी को चाहना, दुनियावी इच्छाएँ रखना नहीं माना जाएगा। वो जो दुनियावी इच्छाएँ रखते हैं वो अपनी इबादतें उनके बताए गए वक्त में नहीं पढ़ते। वो तौबा नहीं करते। (तौबा करने का मतलब है अपने गुनाहों के लिए पछताना, एहद करना के दोबारा गुनाह नहीं करेंगे, और अल्लाह तआला से माफ़ी की इल्तिजा करना)। उनके दिल बेहिस हो गए। उन्हें मौत याद नहीं। तबलीग़ और सलाह उन पर कोई असर नहीं डालेगा।

एक शख़्स जिसे दुनियावी इच्छाएँ (तूल-ए अमल) हैं वो हमेशा सोचेगा के किस तरह दुनियावी मिलकियत और मरतबें हासिल करे और अपनी ज़िंदगी इनको हासिल करने में लगा देगा। वो दूसरी दुनिया के बारे में भूल गया और अपने आपको खुशमस्तियों और ऐश में मुलविस कर लिया।

मंदरजाज़ेल हदीस-ए शरीफ़ से वाज़ेह हैः

(मरने से पहले तुम मर जाओ। तुम अपने आपको अमल में ले लो, इससे पहले के तुम्हारा खाता खुले)

(अगर जानवर वो जान जाएँ जो तुम जानते हो मौत के बाद की ज़िंदगी के हालात के बारे में, तो तुम्हें कोई अच्छा ख़ाया हुआ जानवर नहीं मिलेगा।)

(कोई भी जो लगातार मौत को, दिन और रात, याद करता है, वो जमा किए जाने वाले दिन 'कयामत' में शहीदों के साथ होंगे।)

दुनियावी इच्छाओं का सबब दुनियावी ऐश व आराम से प्यार और उनसियत और मौत के खयाल को छोड़ देना और जवानी और सेहत में थोड़े अरसे का भरोसा है। एक शख़्स को दुनियावी इच्छाओं से छुटकारा पाने के लिए इन असबाब को खत्म करना होगा। मौत किसी भी लम्हे आ सकती है। एक शख़्स को दुनियावी इच्छाओं को रखने के पामाल असरात को जानना होगा और मौत को याद रखने के फाएदे भी। एक हदीस-ए शरीफ़ में ये दोबारा बयान हैः

(मौत को हमेशा याद रखो! मौत की याद तुम्हें गुनाह करने से पीछे रखेगी और ऐसे काम करने से भी पीछे रखेगी जो मौत के बाद की ज़िंदगी के लिए भी नुकसानदह हैं।)

मौत क्या है?

मरने का मतलब ये नहीं है के बाहर निकलने से रोकना। मौत का मतलब है जिस्म से रूह की वाबस्तगी का खात्मा होना। ये रूह का जिस्म को छोड़ने का काम है। मौत एक आदमी का एक हालत से दूसरी हालत में तबदील होने का मामला है। ये है के एक घर से दूसरे को हिजरत करना। उमर बिन अबदुल अज़ीज़ (रहमतुल्लाही अलैह) ने कहा, "तुम्हें सिर्फ अबद के लिए, कभी न खत्म होने के लिए तखलीक किया गया। सिर्फ़, तुम एक घर से दूसरे

घर में जाते हो!" मौत एक ईमान वाले के लिए एक रहमत, एक तौहफ़ा है। गुनहागार के लिए ये एक तबाही है। आदमी कभी मौत नहीं चाहता। ताहम, असल में, मौत बदी से ज़्यादा फाएदेमंद है। आदमी ज़िंदा रहना चाहता है। ताहम, दरहकीकत, मौत उसके लिए अच्छी है। मौत के साथ, सच्चे ईमान वाले इस दुनिया के अज़ाब और जदोजहद से जुदा हो जाते हैं। ज़ालिम की मौत के साथ, मुल्क और लोगों को राहत हासिल होती है। एक नज़्म का पुराना शैर है जो एक ज़ालिम शख़्स की मौत से तहरीक पाया थाः

न तो वो सुकून से था, न ही लोगों ने उसके साथ अमन देखा। आखिरकार वो नीचे गिर गया; सबर, ओ तुम, उसके साथ कौन होगा!

एक ईमान वाले की रूह अपने जिस्म को इस तरह छोड़ती है जैसे कैदी की जेल से रिहाई। एक बार मर जाए तो, ईमान वाला इस दुनिया में वापिस नहीं आना चाहता। शहीद इस दुनिया में वापिस आना चाहते हैं ताकि वो एक बार फिर शहीद हो जाएँ। मौत, इसलिए, अब हर मुसलमान के लिए एक तौहफ़ा है। एक शख़्स का यकीन सिर्फ़ उसकी कब्र के ज़रिए बच सकता है। कब्र की ज़िंदगी, या तो जन्नत के बाग़ में या दोज़ख के गढढे में होने की तरह है।

मौत से फरार नहीं

क्या मौत से फरार मुमकिन है? बेशक नहीं। अपने आप, कोई भी नहीं जी सकता, चाहे एक सैकंड के दौरान ही क्यों न हो। जो काई भी पहले से किस्मत में मौत (अजल) का जो वक्त लिखा है उसतक पहुँचता है तो मर जाता है। ये एक लम्हा है जो पलक झपकने में चूकता है। कुरआन-अल करीम की

आयत-ए करीमा में, इसका मतलब हैः **(जब उनका अजल आ जाता है, वो एक घंटा पहले या बाद में कुछ नहीं कर सकते।)** जहाँ कहीं भी अल्लाह तआला एक शख़्स की मौत लिख देते हैं, वो शख़्स अपना सामान, जाएदाद, बच्चे छोड़कर वहाँ से गुज़र जाता है। अल्लाह तआला जानता है के एक दिन में हम कितनी साँसे लेते हैं। वहाँ पर ऐसा कुछ नहीं है जो वो न जानता हो। अगर हमारी ज़िंदगी ईमान रखते हुए और इबादत करते हुए गुज़री है, तो इसका खात्मा खुशी से भरा होगा। अल्लाह तआला ने इज़्राईल अलैहिस्सलाम को हुकूम दियाः **(मेरे दोस्तों की रूहें आराम से निकालो, मेरे दुश्मनों की रूहें तकलीफ़ से निकालो!)** ईमान वालों के लिए, ये कितनी बड़ी खुशी की खबर है। कितनी बड़ी आफत है, उनके लिए जो अपने आपको ईमान से परे कर चुके हैं।

जनाज़े की नमाज़

जो आदमी ये सुनने (ईमान वाले की मौत के बारे में) उनके लिए जनाज़े की सलात/नमाज़ फर्ज़-ए किफ़ाया है। और अगर वहाँ कोई आदमी नहीं है तो औरतों के लिए ये फर्ज़े-ए किफ़ाया है। नमाज़ ए जनाज़ा अल्लाह तआला की रज़ा के लिए पढ़ी जाती है और मरने वाले के लिए दुआ करने के लिए। एक शख़्स जो (जनाज़े की सलात) को छोटा समझे वो एक काफ़िर (न मानने वाला) बन जाता है।

वहाँ पर जनाज़े की सलात के कुबूल होने के लिए छः शराइत का होना ज़रूरी हैः

1- मरने वाला शख़्स एक मुसलमान हो।

2- मैयत को नहलाया जाए। अगर इसे बग़ैर नहलाए दफ़ना दिया लेकिन अभी मिट्टी से नहीं ढका है तो हनूज़, इसे निकाल लिया जाए और

नहलाया जाए और फिर सलात अदा की जाए। जिस जगह पर मैयत और इमाम हो वो पाक/साफ़ हो।

3- मैयत या आधी मैयत उसका सिर या आधी से ज़्यादा बग़ैर उसके सिर के इमाम के आगे होने चाहिए।

4- मैयत फर्श पर या फर्श के नज़दीद हाथों से पकड़ी हुई या एक पत्थर (बैंच) पर होनी चाहिए। मैयत का सिर इमाम के सीधी तरफ़ और उसके पेर उलटी तरफ़ होने चाहिए। इसको दूसरी तरफ़ घूमाकर रखना गुनाह है।

5- मैयत तैय्यर होनी चाहिए और इमाम के सामने होनी चाहिए।

6- मैयत और इमाम के अवरत हिस्से ढके हुए होने चाहिए।

नमाज़े जनाज़ा के फराइज़

1- तकबीर (अल्लाहु अकबर कहना) चार बार कहना।

2- खड़े होकर इसे अदा करना।

जनाज़े की नमाज़ की सुन्नतें

1- सुब्हानाका पढ़ना।

2- सलवात पढ़ना।

3- एक बार वो सारी दुआएँ पढ़ना जो (अल्लाह से मिन्नत करने के लिए हैं) अपने लिए, मरने वाले के लिए, और सारे मुसलमानों के लिए रहम और माफ़ी के लिए है।

मैयत को मस्जिद के अंदर रखना और वहाँ पर जनाज़े की सलात पढ़ना हराम है। एक बच्चा जो पैदा होने के बाद मरे उसे नहलाएँ, उसकी सलात पढ़े, और उसका नाम रखे। जब मैयत ले जाई जाती है, तो ताबूत के

चारों पाए पकड़े जाते हैं। मैयत को उठाने के लिए, तुम्हें पहले सामने, सीधे हाथ की तरफ़ से ताबूत को सीधे कंधे पर रखना चाहिए और दस कदम चलना चाहिए। फिर मैयत का पिछला हिस्सा उठाओ, जहाँ (मरने वाले की) सीधी टाँग हो, तुम्हें उसे दस कदम और लेकर चलना है। फिर, मैयत के उलटे हाथ की तरफ़ तबदील करो, जोकि मैयत की सीधे हाथ की साईड होगी जब तुम अकब से देखोगे, तुम इसे अपने उलटे कंधे पर ले लो, दस कदम आगे और दस कदम मैयत के पीछे से। जब तुम कब्रिस्तान पहुँचो तो जब तक नहीं बैठना जब तक मैयत तुम्हारे कंधे से उतार कर नीचे न रख दी जाए। जब मैयत को दफ़नाया जाए, वो जिनका दफ़नाने में कोई काम न हो वो बैठ जाएँ।

नमाज़े जनाज़ा कैसे पढ़े

जनाज़े की सलात की चारों तकबीर में से हर एक रकाअत की तरह है। हाथ सिर्फ़ कानों तक उठाए जाएँ पहली रकाअत में। बाकी की तीन तकबीरों के साथ हाथ ऊपर नहीं उठाए जाएँ।

1- पहली तकबीर कहने के बाद, उलटा हाथ कलाई से सीधे हाथ से बांधा जाए, और **सुब्हानका** पढ़ा जाए, और **वजल-ल सनाउ-क** इस किरअत में शामिल कर लिया जाए। सूरत-अल फातिहा इसमें नहीं पढ़ी जाएगी।

2- दूसरी तकबीर के बाद सलवात बिल्कुल उसी तरह पढ़ी जाए जैसे (रोज़ाना की नमाज़ों/सलात के कअदा में) तशहहुद के दौरान कहते हैं, यानी **(अल्लाहुम सल्लि)** और **(बारिक)** की दुआएँ पढ़ना।

3- तीसरी तकबीर के बाद जनाज़े की दुआ पढ़ी जाती है। [जनाज़े की दुआ के अलावा, "**रब्बना आतिना...**" या सिर्फ़ "**अल्लाहुमग़फ़िरलिह**" कहने की इजाज़त है या **सुरह फ़ातिहा** भी पढ़ सकते हैं।]

4- चौथी तकबीर के फौरन बाद, पहले दांई/सीधी और फिर बांई /उलटी तरफ़ (सिर घुमाकर) सलाम फेरे। जब सलाम अदा किया जाए तो ये नीयत करली जाए के सलाम मैयत और जमाअत के लिए किया जा रहा है।

इमाम चारों तकबीरों और दो सलामों को ज़ोर से कहे, वो बाकी सारी चीज़ें करिबन चुपके से पढ़े।

जनाज़े की सलात होने के बाद इस बात की इजाज़त नहीं है के मैयत के सिरहाने इबादत की जाए। ये मकरूह है।

तरावीह की नमाज़

तरावीह की नमाज़ मर्दो और औरतों दोनो के लिए अदा करना सुन्नत मुअक्किदा है। ये रमज़ाने मुबारक की हर रात में अदा की जाती है। जमाअत से तरावीह अदा करना सुन्नत-ए किफ़ाया है। तरावीह इशा की नमाज़ की आखरी सुन्नत के बाद और वितर के बाद से पहले अदा की जाती है इसे वितर के बाद भी अदा किया जा सकता है। मिसाल के तौर पर, अगर एक शख़्स (जिसने चार रकाअत फर्ज़ की पूरी करलीं) जमाअत में पहुँचा जबकि वो तरावीह की नमाज़ अदा कर रहे हो और वो इमाम के साथ वितर की नमाज़ में शामिल हो जाए, तो वो वितर के बाद वो रकाअतें पूरी कर सकता है जो उसने तरावीह की नमाज़ में अदा नहीं करीं।

तुम तरावीह की नमाज़ की कज़ा अदा नहीं कर सकते जो तुमने उसके मुकर्रर वक्त में अदा न की हो। अगर तुम उसकी कज़ा करते हो, तो ये नफ़ली नमाज़ होगी। ये तरावीह नहीं होगी।

तरावीह की नमाज़ में बीस रकाअतें होती हैं।

तरावीह किस तरह पढ़ें

वितर की नमाज़ रमज़ान में जमाअत से अदा की जाती है। तरावीह की नमाज़ में हर दो रकाअत के आखिर में हर चार रकाअत के आखिर में सलाम अदा करना मुस्तहब है। लोग जिनकी कज़ा नमाज़ों का कर्ज़ हो उन्हें रोज़ाना की पाँच नमाज़ों की सुन्नतों और तरावीह की जगह कज़ा नमाज़ें अदा करनी चाहिए। इस तरह, वो अपने कर्ज़ो को पूरा करें, फिर वो ऊपर बताई गई नमाज़ें अदा करें।

जब मस्जिद में इसे जमाअत से अदा किया जाए, दूसरे इसे अपने घरों में अकेले पढ़ सकते हैं, जोकि गुनाह नहीं है। ताहम इस मामले में उन्हें मस्जिद में जमाअत की रहमतें नहीं मिलेगी। अगर वो अपने घरों में एक या ज़्यादा लोगों के साथ जमाअत में नमाज़ अदा करते हैं, तो सताईस बार रहमतें ज़्यादा हासिल करेंगे अगर वो अकेले इसे अदा करेंगे। नीयत (इरादा) कर लेना बहतर है हर तकबीर-ए इफतिताह (शुरूआत) करने से पहले लोग जो इशा की नमाज़ जमाअत से अदा नहीं करते वो एक साथ नहीं आ सकते और तरावीह की नमाज़ जमाअत में अदा नहीं कर सकते। एक शख़्स जो इशा की नमाज़ जमाअत से अदा नहीं करता वो फर्ज़ अकेले पढ़ सकता है और फिर जमाअत में शामिल हो सकता है जो तरावीह अदा कर रही हो।

पाँचवा हिस्सा

लम्बे सफ़र के दौरान नमाज़

अगर एक हनफ़ी शख़्स एक जगह जाता है जोकि एक सौ चार किलोमिटर या और दूर हो, पन्द्रह दिनों से कम वहाँ रहने के इरादे से, तो वो एक मुसाफ़िर बन जाता है।

सफ़री या मुसाफिर का मतलब है (एक शख़्स) एक लम्बे रास्ते का सफ़र करने वाला। वो उन फर्ज़ नमाज़ों की दो रकाअतें अदा कर सकता है जिसमें चार रकाअतें हों। अगर वो एक मुकीम (कायम, सफ़री नहीं) इमाम की तकलीद कर रहा है, तो उन्हें चार रकाअतों की तरह अदा करे। एक मुकीम शख़्स जो एक ऐसे शख़्स की तकलीद कर रहा है जो मुसाफिर है, वो खड़ा हो जाए जब इमाम दूसरी रकाअत के बाद सलाम करे, और दो अलग रकाअतें अदा करें।

तीन दिन और तीन रातों के लिए, एक सफ़री शख़्स अपने मेस्ट पर मसह कर सकता है। वो अपना रोज़ा (उसके वक्त से पहले) तोड़ सकता है। अगर एक मुसाफिर आराम से हो, तो उसे अपना रोज़ा नहीं तोड़ना चाहिए। ये उसके लिए वाजिब नहीं है के कुरबानी अदा करे। जुमे की नमाज़ सफ़री पर फर्ज़ नहीं है।

वो जो एक खास नमाज़ के वक्त के खात्में पर सफर पर निकला, वो उस नमाज़ को दो रकाअत से पढ़ेगा अगर वो इसे अदा नहीं करता (बाहर निकलने से पहले)। वो जो अपने घर एक नमाज़ के खात्मे की तरफ़ पहुँचा तो

उसे चार रकाअतें अदा करनी चाहिए, अगर उसने उसे (सफ़र के दौरान) अदा नहीं किया।

ये इस किताब **(नएमत-ए इस्लाम)** में बयान हैः नफ़ली नमाज़ों को बैठी हुई हालत में पढ़ने की इजाज़त है चाहे बग़ैर उज़्र के ही क्यों न हो।जब ऐसा करो, तो तुम रूकू के लिए झुको और अपना सिर फर्श पर रख दो सज्दे के लिए।बहरहाल, अगर तुम नफ़ली नमाज़ें बैठ कर अदा करो, बग़ैर उज़्र के, तो तुम्हें सिर्फ आधा सवाब मिलेगा।सुन्नतें जो रोज़ाना की पाँच फर्ज़ नमाज़ों के पहले और बाद में हैं और तरावीह की नमाज़ें नफ़ली हैं।कोई भी, चाहे मुकीम या सफ़री, चाहे उज़्र के साथ या नहीं, नफली नमाज़ एक जानवर की पीठ पर बैठ कर जबकि वो चल रहा हो या चाहे जब वो साकेत खड़ा हो, जितना लम्बा चाहे एक शहर या गाँव से बाहर रहे हों तो अदा कर रहा हो।ये ज़रूरी नहीं हैं के जब नमाज़ शुरू की जाए या अदा की जाए तो किबले की तरफ मुँह किया जाए, रूकू या सज्दा करना भी ज़रूरी नहीं है।वो इशारों से नमाज़ अदा कर सकता है।यानी वो रूकू के लिए झूके और सज्दे के लिए कुछ ज़्यादा झुक जाए।चाहे अगर जानवर पर बहुत ज़्यादा नजासत लगी हो, नमाज़ कुबूल हो जाएगी।कोई भी जो नफली नमाज़ अदा करते हुए थक गया हो वो इसे चलने वाली घड़ी पर झुकते हुए, किसी दूसरे इंसान या दीवार का सहारा लेते हुए अदा कर सकता है।जबकि वो खुद चल रहा हो तो उसकी नमाज़ अदा करना कुबूल नहीं होगा, चलना नमाज़ को बेअसर करता है।

इस बात की इजाज़त नहीं है के फर्ज़ या वाजिब नमाज़ को एक जानवर पर अदा किया जाए, जब तक के वहाँ ज़रूरत न हो।वो उसे सिर्फ उसी वक्त अदा कर सकते हैं अगर वहाँ कोई अच्छा उज़्र हो।ज़रूरत की मिसालें ये हैं जो माकूल उज़्र बनाती हैंः एक शख़्स की मिलकियत, ज़िंदगी, या जानवर खतरे में हों, इमकान हो सकता है के एक शख़्स का जानवर या एक शख़्स की मिलकियत जो उसने एक जानवर पर या खुद पर लादी हुई है वो

जानवर से नीचे उतरने पर चोरी हो जाए, खतरा हो सकता है जैसे के जंगली जानवरों या दुश्मन का हमला करने का, ज़ेहमतें जैसे के ज़मीन पर मिट्टी और तेज़ बारिश, जानवर पर से उतरने और चड़ने की वजह से बीमारी ज़्यादा खराब या बड़ जाए जिस्मानी थकान की वजह से, एक आशकारा हालत जहाँ पर एक शख़्स का साथी उसे छोड़ जाए उस हालत में के वो उसका इंतेज़ार न कर सके, और नाकाबिलियत की वजह से फिकर करना के अगर उसे जानवर से उतरना पड़ा तो वो बग़ैर मदद के उस पर कैसे चड़ेगा। जब एक फर्ज़ या वाजिब नमाज़ अदा की जाए तो ये ज़रूरी है के जानवर का मूँह किबले की तरफ़ कराया जाए। अगर वो इसे काबू में न रख पाए, तो कम से कम अपना सबसे अच्छा करके दिखाए। एक जानवर पर मौजूद दो चैस्ट जिसे महमिल (कूड़ा) बोलते हैं उस पर नमाज़ अदा करना ऐसा ही है जैसे जानवर पर अदा कर लेना। अगर महमिल की टाँगे ज़मीन की तरफ़ नीचे हों, तो ये एक दिवान की तरह काम करता है। इस हालत में उसके लिए ये जाईज़ हो जाता है के वो उस पर खड़े होकर फर्ज़ अदा कर सके। उसे किबले की तरफ़ मूँह करके इसे अदा करना चाहिए। एक शख़्स जो उतरने के काबिल हो, वो एक महमिल पर फर्ज़ नमाज़ अदा नहीं कर सकता है।

रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम ने हज़रत जाफर तय्यार को पानी के जहाज़ पर नमाज़ अदा करना सिखाया, उनके अबिससिनिमा जाने से पहले। यानीः पानी के जहाज़ पर, एक शख़्स फर्ज़ या वाजिब नमाज़ अदा कर सकते हैं चाहे अगर उनको कोई उज़्र न हो। नाव में जमाअत के साथ नमाज़ अदा की जा सकती है। पानी के जहाज़ पर निशानों के साथ नमाज़ अदा करने की इजाज़त नहीं है। उसे रूकू और सज्दा करना होगा। उसे किबले की तरफ होना होगा। जब वो नमाज़ शुरू करेगा तो उसे किबले की तरफ़ रहना चाहिए। नाव/किश्ती के अपनी सिम्त को बदलने के साथ, उसे भी किबले की तरफ़ घूमना होगा। ये ज़रूरी है के अपने आपको उन चीज़ों से साफ/पाक करलें

जिन्हें इस्लाम ने गंदा बताया, उस शख़्स के लिए भी जो किश्ती में हो। इमाम-ए आज़म के मुताबिक एक चलते हुए जहाज़ पर, फर्ज़ नमाज़ को बग़ैर किसी सही उज़्र के बैठ कर अदा करने की इजाज़त है। समुद्र के किनारे लंगर जहाज़, अगर लहरों से बुरी तरह डगमगाए तो ये चलते हुए जहाज़ की तरह है। अगर वो हल्के से डगमगाए, तो वो ऐसे ही है जैसे किनारे खड़ा हुआ है, तो बैठकर फर्ज़ नमाज़ अदा करने की इजाज़त नहीं है। अगर जहाज़ खड़ा हुआ है, तो हमेशा इस बात की इजाज़त है के नमाज़ खड़े होकर पढ़ी जाए। अगर जहाज़ साहिल पर नहीं है, और ये मुमकिन है के वो कभी भी चलदे, तो फर्ज़ नमाज़ उसपर अदा करने की इजाज़त नहीं है। अगर उसकी ज़िंदगी या उसकी मिलकियत खतरे में है, या जहाज़ चल पढ़े और उसे ज़मीन पर छोड़ जाए, तो इस बात की इजाज़त है के वो जहाज़ में अपनी नमाज़ खड़े होकर पढ़ सकता है।

इबन अबिदीन ने कहाः (क्योंकि एक दो पहिया गाड़ी ज़मीन पर एक सतह पर नहीं रह सकती जब तक के वो एक जानवर से बंधी न हो, ये एक जानवर की तरह है दोनो जब चल रहे हों ओर जब खड़े हों। कोई भी गाड़ी चार पहियों के साथ, जोकि एक लेवल पर हों वो दिवान की तरह हैं, अगर वो हरकत में नहीं हैं। अगर गाड़ी हरकत में है, ऊपर बताए गए अच्छे उज़रों की हालतों के साथ, तो इस पर फर्ज़ अदा करने की इजाज़त है। एक शख़्स को इसे रोक लेना चाहिए और किबले की तरफ रूख कर के खड़े होकर नमाज़ अदा करें। अगर तुम इसे नहीं रोक सकते तो तुम इस तरह नमाज़ अदा करो जैसे के तुम चलते हुए जहाज़ पर हो)। वो जो किबला रूख नहीं हो सकता सफर के दौरान तो उसे शाफि-ई मसलक की नकल करनी चाहिए जब तक के वो सफर में हो, और देर दोपहर नमाज़ जल्दी दोपहर नमाज़ के साथ और रात की नमाज़ शाम की नमाज़ के साथ, एक के बाद दूसरी फौरन अदा करनी चाहिए। अगर ऐसा भी नामुमकिन हो, तो उसे किबले की तरफ रूख नहीं करना

चाहिए। किसी के लिए भी इस बात की इजाज़त नहीं है के वो इशारों के ज़रिए नमाज़ अदा करे, जबकि दिवान या कुर्सी पर बैठे हुए अपनी टाँगे नीचे लटकाए हुए। एक बस में या हवाई जहाज़ में नमाज़ अदा करना ऐसा ही है जैसे तुम एक गाड़ी में नमाज़ अदा कर रहे हो।

एक शख़्स को फर्ज़ या वाजिब नमाज़ एक जानवर पर अदा नहीं करनी चाहिए जब तक वहाँ इसकी ज़रूरत न हो। तुम्हें गाड़ियों को रोक देना चाहिए और किबला की तरफ़ खड़े होकर नमाज़ अदा करनी चाहिए। इस वजह से, एक शख़्स उस गाड़ी पर सवार होने से पहले ज़रूरी इक़दामात कर लेने चाहिए।

एक मुसाफिर जो जहाज़ या रेलगाड़ी पर सफर कर रहा हो उसे खड़े होकर किबले की तरफ़ रूख करके फर्ज़ नमाज़ शुरू करनी चाहिए और जहाँ वो सज्दा करे उस जगह अपने पास वो कुतुबनुमा/कम्पास रखे। उसे किबले की तरफ़ अपना रूख करना चाहिए जैसे जहाज़ या रेलगाड़ी सिम्त तबदील करे। अगर सीना किबले की तरफ़ से हट जाता है, तो नमाज़ बेअसर हो जाती है। इसलिए उनकी फर्ज़ नमाज़ जो बसों पर, रेलगाड़ियों में, जहाज़ों में जब समुद्र नहमवार हो जो किब्ले की तरफ़ रूख न कर पाए हों तो कुबूल नहीं की जाती, वो जब तक सफ़र में हो मालिकि या शाफ़ि-ई मसलक की तकलीद कर सकते हैं, और अपनी नमाज़ों को मिला सकते हैं जल्दी दोपहर की नमाज़/जुहर की नमाज़ अदा करने के फौरन बाद असर की नमाज़ अदा करना (उन दो नमाज़ों के वक्त में से किसी भी वक्त के दौरान), और मग़रिब की नमाज़ इशा की नमाज़ एक साथ अदा करना (उन दो नमाज़ों के किसी भी वक्त के दौरान)। मालिकि और शाफ़ि-ई मसलक के मुताबिक, सफ़र (लम्बे रास्ते का सफ़र) जिसका फासला अस्सी किलोमिटर से ज़्यादा है, तकदीम, जिसका मतलब है असर की नमाज़ फौरन जुहर की नमाज़ उसके वक्त में अदा कर ली जाए या इशा की नमाज़ फौरन मग़रिब की नमाज़ के बाद उसके वक्त में अदा

करली जाएँ, और ताखीर, जिसका मतलब है के जुहर की नमाज़ असर के वक्त तक टाली जाए और उन्हें एक साथ अदा किया जाए या मग़रिब और इशा की नमाज़ें इसी तरह अदा की जाएं, इस बात की इजाज़त है। इसी तरह, अगर हनफ़ी मसलक का एक शख़्स सफ़र शुरू करने के बाद रास्ते में किब्ले की तरफ़ मुँह न कर पाए, तो वो जुहर की नमाज़ अदा करने के बाद फौरन असर की नमाज़ अदा करे जुहर की नमाज़ के वक्त पर, जब वो दिन के कुछ वक्त के लिए कहीं पर रूकें, और मग़रिब और इशा की नमाज़ एक साथ अदा करें इशा के वक्त पर जब वो रात में कहीं पर रूकें, और जब वो उन चारों में से एक शुरू करे तो शुरू करने की नीयत से करे, उसे नीयत करनी चाहिए, यानी अपने दिल से ये सोचे और बोलेः “**मैं ये अदा कर रहा हूँ मालिकि या शाफिई मसलक की तकलीद करते हुए।**” एक शख़्स दो वक्त की नमाज़ आसपास के वक्त की लम्बे फासले के सफ़र से पहले या बाद में अदा नहीं कर सकता।

बीमारी के दौरान नमाज़

अगर कोई चीज़ लगातार बाहर आती रहे जिस्म से जिससे वुज़ू टूट जाए, तो ये एक **उज़र** (माफी) होता है। एक उज़र होने के लिए ज़रूरी है के कोई चीज़ जो वुज़ू को लगातार तोड़े। मिसाल के तौर पर, अगर एक वुज़ू की वजह जो वुज़ू को तोड़ने के लिए लगातार मौजूद हो, जैसे पैशाव की रतूवत, हवा का बार बार निकलना, दस्त, नाक से खून निकलना, ज़ख्म से खून और पस का जारी होना, दर्द की वजह से आँखों से आंसू निकलना, इसतिहाज़ा (माहवारी) का खून, अगर ये किसी नमाज़ के मुकर्रर वक्त के शुरू से आखिर तक रहे, तो वो उज़र के साथ वाला शख़्स बन जाता है। एक शख़्स को इन्हें रोकना चाहिए नली में कुछ रख कर, दवाई लेकर, बैठ कर या इशारों के ज़रिए नमाज़ अदा करके। वो आदमी जिन्हें इसतिबरा (पैशाव का रतूबत) की परेशानी हो उन्हें अपनी पैशाव के छेद में जौके बीज के बराबर एक प्लास्टीक वाली

सूती बत्ती रखनी चाहिए। अगर वो सिर्फ़ छोटा सा है, तो कॉटन पैशाब को बाहर निकलने से सुखा देगा, जोकि वुज़ू को टूटने से बचाएगा। जब पैशाब करोगे तो, ये कॉटन अपने आप बाहर आ जाएगा। अगर पैशाब बहुत ज़्यादा बाहर निकले, ज़्यादातर उसमें से कॉटन की बत्ती से निकले, इस मामले में, वुज़ू टूट जाएगा। टपकता हुआ पैशाब अंदर का जांगिया न गंदा करे। हर औरत को अपने आगे हमेशा करसफ़ (कुछ कॉटन या कपड़ा) रखना चाहिए। अगर वो ये टपकना/बहना न रोक पाएँ तो उन्हे हर नमाज़ के मुकर्रर वक्त में वुज़ू अदा करना होगा और नमाज़ पढ़नी होगी। इस वुज़ू के साथ, वो चाहे जितनी फर्ज़, कज़ा और नफली नमाज़ की इबादतें अदा कर सकता है जितनी उसे पसंद हो। वो कुरआन अल करीम को पकड़ सकते हैं जब नमाज़ का मुकर्रर वक्त खत्म हो जाएगा तो उनका वुज़ू अपने आप खत्म हो जाएगा। एक शख़्स का लगातार उज़र मुकर्रर वक्त के अंदर उसका वुज़ू नहीं तोड़ता अगरचे, वो किसी और वजह से टूट सकता है। मिसाल के तौर पर, एक शख़्स ने वुज़ू किया जबकि उसके नथनों में से एक में खून निकल आया हो। फिर उसके दूसरे नथने में से भी खून आने लगा। इस मामले में, उसका वुज़ू खारिज हो जाएगा। उज़र होने के लिए ज़रूरी है के कोई चीज़ नमाज़ के वक्त पर लगातार वुज़ू तोड़ रही है। अगर वो इस वक्फ़े के दौरान रूक जाता है, इतना काफ़ी हो के एक वुज़ू अदा कर के और नमाज़ पढ़ी जा सके तो वो शख़्स उज़र के साथ नहीं है। दूसरी खबर के मुताबिक मालिकि मसलक में, एक उज़र [माफ़ी] होने के लिए, ये काफ़ी है अगर बेइरादा इखराज हो, जोकि एक किसी बीमारी का नतीजा हो और जो वुज़ू को तोड़ दे, वो सिर्फ़ एक बार होता है। अगर एक शख़्स जो एक उज़र के साथ हो उसका उज़र एक बार ही बहे और वो भी थोड़े वक्त के लिए नमाज़ की इबादत के वक्त के दौरान, तो उसका उज़र जारी माना जाएगा। अगर वो कभी किसी नमाज़ के वक्त में न बहे, यानी, अगर नमाज़ का कोई भी वक्त बग़ैर किसी उज़र के शुरू से लेकर आखिर तक, एक शख़्स अब उज़र की हालत में नहीं रहता। अग ये माना जाए के एक

दरहम खूना या कुछ और उसी तरह का, जब धोया जाए, तो वो दोबारा फैल जाएगा जब तक कि नमाज़ अदा की जाए, तो उस पर वाजिब है के उसे धोए।

अगर एक मुसलमान को पता हो, अपने ज़ाती तजुर्बो या एक माहिर मुस्लिम डॉक्टर की सलाह से जो खुल कर और सब के सामने गुनाह नहीं करता हो, के गुस्ल करने से तुम्हारी बीमारी बढ़ जाएगी या खराब हो जाएगी, फिर उसे तय्यमुम करने की इजाज़त है। ये डर या तो उसके अपने ज़ाती तजुर्बे से होता है या फिर एक सच्चे मुसलमान के ज़रिए तहकीक किया जाता है। अगर माहिरे तिब फिस्क (इस्लाम से बाहर) के लिए नहीं जाना जाता, या गुनाह करता है, तो उसके लफज़ कुबूल किए जाएगें अगर ठंड हो और रहने की जगह ढूंढने में नाकाम हो, या कुछ भी जो पानी को गरम करे, या पैसा न हो नहाने के लिए और नतिजे के तौर पर बीमार पड़ सकता है, तब इजाज़त है के वो तय्यमुम करले। हन्फ़ी मसलक में, एक शख़्स जितनी चाहे नमाज़ें अदा कर सकता है एक तय्यमुम के साथ। अरगचे, शाफि ई और मालिकि मसलक के मुताबिक, उसे हर फर्ज़ नमाज़ के लिए एक नया तय्यमुम करना पड़ेगा।

अगर उसके आधे से ज़्यादा वुज़ू के अज़ा या चारों उसके वुज़ू के अज़ा ज़ख्मी हों, तो उसे तय्यमुम करना होगा। अगर आधे से ज़्यादा उसके वुज़ू के अज़ा या चार अज़ा में से दो सेहतमंद हैं, तो वो वुज़ू कर सकता है और ज़ख्मी हिस्सों या अज़ा पर मसह कर सकता है। अगर जुनूब शख़्स की जिस्म का आधे से ज़्यादा सतह बीमार हों, जैसे के ज़ख्म हों, चेचक हो या खतरनाक बुखार हो, तो वो तय्यमुम कर सकता है। अगर उसके जिस्म का ज़्यादातर हिस्सा सेहतमंद हो और अगर मुमकिन हो अपने आपको धोने की तो बग़ैर बीमार हिस्सों को भिगोए हुए वो पानी के साथ गुस्ल कर सकता है। और खराब हिस्सों पर मसह कर सकता है। अगर बराहेरास्त मसह नुकसानदह हो, तो वो पट्टियों पर (जो उसने ज़ख्मों पर बाँधी हों) मसह कर सकता है। अगर ये भी

नुकसानदह हो, तो वो मसह भी छोड़ दे। अगर उसके सिर का मसह वुज़ू या गुस्ल में नुकसानदह हो तो उसे सिर का मसह नहीं करना चाहिए। "अगर एक शख़्स की खाल कट रही हो, एक्ज़ीमा हो या कोई और ज़ख्म उसके एक या दोनो हाथों पर जिसकी वजह से उनको गीला करना नुकसानदह हो, तो वो अपने हाथों को और चहरे को किसी मिट्टी [कच्ची मिट्टी या पत्थर] पर रगड़कर तय्यमुम कर सकते हैं। अगर उसके चेहरे पर कोई ज़ख्म हो तो, वो बग़ैर वुज़ू के नमाज़ अदा कर सकता ताकि उसकी नमाज़ न छुटे। कोई भी जो अपने आप वुज़ू करने के काबिल न हो और उसे कोई मददगार भी नहीं मिल पा रहा वुज़ू कराने के लिए, तो उसे तय्यमुम कर लेना चाहिए। एक शख़्स के बच्चे, गुलाम या नौकर जो दिहाड़ी पर काम करते हैं, मदद कर सकते हैं। वो दूसरों से भी मदद के लिए कह सकता है। हालांकि, वो उसकी मदद नहीं कर सकते। इसी तरह, एक बीवी या मियाँ भी, दूसरों को वुज़ू करने में मदद नहीं करने को नही कहना।

अगर कोई शख़्स बेंडिड [रूई, रेश्मी कपड़ा, प्लास्टर, मरहम] पे या ज़ख्म, हडडी के फेक्चर पे, या फोड़े की त्वचा पे जोंक लगाए हुई हालत में, खून वग़ैरा का गिरना। अगर वो उन प्रभावित हिस्सों को ठंडे या गर्म पानी से धो न पाए और न हीः उनपे मसह कर पाए, ये काबिले कुबूल है के उसके आधे से ज़्यादा पे मसह कर सकते है वुज़ू और गुस्ल में। अगर बेंडिड पे करना नुकसानदायक हो और इसके करीबी सेहतमंद हिस्से धुले नहीं। सेहतमंद हिस्सों पे जो बेंडिड में दिखें उनपे मसह किया जाएगा। ये ज़रूरी नहीं है के जब कोई शख़्स वुज़ू से है बेंडिड लगाए। अगर मसह के बाद बेंडिड बदल दिया जाता है या उसपे नया बेंडिड लगा दिया गया, ये ज़रूरी नहीं होगा के नए वाले पे मसह किया जाए।

इसी तरह, अगर एक बीमार शख़्स जो सीधा नहीं खड़ा हो पा रहा हो या जिसे सख़्त महसूस हो के खड़े होने से उसकी सेहतयाबी में देरी हो सकती

है, तो वो बैठकर नमाज़ अदा कर सकता है। वो सीधा बैठ जाए, वो अपने जिस्म को रूकू के लिए थोड़ा झुकाए, फिर दोबारा सीधा बैठ जाए, वो अपने जिस्म को थोड़ा और झुकाए दो सज्दे करने के लिए। ऐसे लोगों को फर्श पर इस तरह बैठना चाहिए जो आसानी से आ जाए; घुटने टिक सकें, टाँगे बंध सकें, या घुटने उठ सकें हाथों को बाँधकर टाँगों के चारों तरफ़ या इसी तरह। सिर में, घुटने, या आँख में दर्द बीमार में शुमार होता है। दुश्मन के ज़रिए देख लिए जाने का डर भी एक 'उज़र' होता है। वो जिसका रोज़ा खड़े होने से खारिज हो जाए, वो बैठ कर नमाज़ अदा कर सकता है। एक कमज़ोर शख़्स सिर्फ किसी चीज़ का सहारा लेकर खड़ा हो सकता है नमाज़ इस तरह खड़ा हो कर पढ़ सकता है। अगर एक शख़्स ज़्यादा देर खड़ा नहीं हो सकता, उसे खड़े होकर तकबीर ए इफ़तिताह करनी चाहिए, और जब शुरू हो जाए, तो अपनी नमाज़ बैठकर जारी रख सकता है।

वो जो फर्श पर सज्दा नहीं कर सकता जितनी कुरआन अल करीम की तिलावत खड़े होकर ज़रूरत है वो कर सकता है, फिर वो बैठ जाए और रूकू और सज्दे के लिए इशारे करे। दूसरे लफ़्ज़ों में, नमाज़ बैठकर पढ़ना, वो सज्दे के लिए झुके और सज्दे के लिए ज़्यादा झुके। वो जो अपना जिस्म ज़्यादा नहीं मोड़ सकता इसके बजाए वो सिर झुका सकता है। उसके लिए ये ज़रूरी नहीं है के किसी चीज़ पर सज्दा करे। अगर वो खुद या कोई और कोई चीज़ ऊपर पकड़ सकता है, और वो उस पर सज्दा करे तो उसकी नमाज़ सही होगी, लेकिन ये तहरीमी मकरूह है। दर हकीकत, अगर वो चीज़ उसकी रूकू से झुकने से नीचे न हो, तो उसकी नमाज़ सही नहीं होगी। इस बात की इजाज़त नहीं है के लेट जाए और इशारे कर के नमाज़ पढ़े, अगर एक शख़्स बैठने के काबिल है चाहे किसी चीज़ पर सहारा ही क्यों न हो। एक दिन रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' एक कमज़ोर शख़्स के पास गए। जब आपने देखा के उस शख़्स ने एक तकिया उठाया और उस पर सज्दा कर दिया, आपने

तकिया हटा दिया। इस बार कमज़ोर शख़्स ने एक लकड़ी का टुकड़ा उठाया और उस पर सज्दा कर दिया। रसूलुल्लाह ने लकड़ी का टुकड़ा भी हटा दिया, और फरमायाः **(फर्श पर सज्दा करो अगर तुम कर सकते हो! अगर तुम झुक नहीं सकते फर्श पर तो अपने चेहरे पर कोई चीज़ मत उठाओ उस पर सज्दा करने के लिए! नमाज़ को इशारे से अदा करो और सज्दा करने के लिए अपने आपको रूकू में झुकने से ज़्यादा झुकाओ!)** **(बहरूर-राईक)** किताब में लिखी एक खबर के मुताबिक, सूरह आल-ए इमरान की एक सौ इकयानवें आयत-ए करीमा में, जिसका मतलब हैः **(वो जो काबिल है, नमाज़ खड़े होकर पढ़े वो जो इतना बीमार हो खड़े होने में, वो बैठकर नमाज़ अदा कर सकता है। वो जो ऐसा करने के काबिल नहीं है, इसे लेटकर अदा करे।)** जब इमरान बिन हुसैन बीमार हो गए, रसूलुल्लाह अलैहि सलाम ने उनसे फरमाया **(अपनी नमाज़ खड़े होकर पढ़ो! अगर तुम ऐसा करने के काबिल नहीं हो, तो इसे बैठकर अदा करो! अगर तुम ऐसा करने के भी काबिल नहीं हो, तो अपनी नमाज़ अपनी तरफ या पीठ पर लेटकर अदा करो!)** ताहम, एक कमज़ोर शख़्स जो खड़ा नहीं हो सकता अपनी नमाज़ बैठकर अदा कर सकता है। वो जो बैठ नहीं सकता लेटकर नमाज़ अदा कर सकता है। कुर्सी पर या सीट पर बैठकर नमाज़ अदा करने की इजाज़त नहीं है। ये इस्लाम के मुताबिक नहीं है, एक बीमार शख़्स के लिए या एक मुसाफिर के लिए बस में या जहाज़ में नमाज़ अदा करना कुर्सी या सीट पर बैठकर। वो जो जमाअत में खड़े होकर नमाज़ अदा नहीं कर सकते, इसके बजाए वो घर में खड़े होकर अपनी नमाज़ अदा करें। वहाँ पर बीस काबिले कुबूल उज़र हैं मस्जिद में ना जाकर जमाअत से नमाज़ अदा करने के।

मस्जिद में पैदल चलते हुए जाना और वापिस आना ज़्यादा अच्छा है इस बात के तुम गाड़ी पर सवार होकर जाओ। मस्जिद में कुर्सी पर या सीट पर बैठकर इशारे कर के नमाज़ अदा करने की इजाज़त नहीं है। ये **(बिदअत)** है

के इस तरीके से इबादत करना जो इस्लाम के ज़रिए नहीं बताया गया। ये फिकह की किताबों में लिखा है के बिदअत करना एक बहुत बड़ा गुनाह है।

एक कमज़ोर शख़्स जो बैठ नहीं सकता, चाहे किसी चीज़ पर सहारा करके भी, वो अपनी नमाज़ कमर के बल लेटकर अपने सिर (हिलाकर घुमाकर वग़ैरह अपनी सिर के ज़रिए) के साथ नमाज़ अदा कर सकता है, या अगर ये मुमकिन न हो तो अपनी सीधी तरफ़ लेटकर अदा कर सकता है। अगर वो किबले की तरफ़ नहीं घूम सकता, तो वो जो सिम्त उसके लिए आसान हो उस तरफ़ घूमकर अदा कर सकता है। एक तकिया उसके सिर के नीचे रख देना चाहिए ताकि उसका चेहरा किबले की तरफ़ हो सके। ये उसके लिए अच्छा होगा अगर वो अपने घुटने सीधे ऊपर करले। अगर एक बीमार शख़्स अपने सिर के इशारे के साथ भी नमाज़ अदा नहीं कर पाए, तो उसे इजाज़त है के उसे कज़ा के लिए छोड़ दे। अगर एक शख़्स नमाज़ में बीमार हो जाए और जिस तरीके पर बताई गई है उस तरह अदा न कर पाए, तो उसे जितना बेहतर हो सके जारी करना होगा। अगर एक मरीज़ जो बैठकर नमाज़ अदा कर रहा है सेहतमंद हो जाता है, उसे अपनी नमाज़ खड़े होकर जारी कर देनी चाहिए। वो जो बेहोश हो जाते हैं नमाज़ अदा नहीं करें। अगर वो पाँच नमाज़ का वक्त गुज़रने से पहले ठीक हो जाए, तो उसे उनकी कज़ा अदा करनी चाहिए। अगर वो छः या ज़्यादा वक्त की नमाज़ गुज़रने के बाद ठीक होता है, तो उसे उसकी कज़ा नहीं करनी होगी।

ये फर्ज़ है के अदा नहीं की गई नमाज़ की फौरन कज़ा अदा की जाए, चाहे अगर इशारे से ही क्यों न हो। अगर वो अपने बिस्तरे मर्ग/मरने वाला है बग़ैर अपनी छोड़ी हुई नमाज़ों की कज़ा अदा किए बग़ैर, ये उसके लिए वाजिब है के अपनी वसीयत में ताकीद करे के जो पैसा वो अपने पीछे छोड़कर जा रहा है उसमें से उनकी इस्कात का फिदया अदा किया जाए। अगर वो ऐसा अपनी वसीयत में नहीं कहता, तो कुछ आलिमों का कहना है के उसके

वारिसों के लिए या एक अनजान (वारिसों की जगह कोई और) के लिए अपनी जायदाद में से इस्कात करने की इजाज़त है।

क़ज़ा नमाज़ें

एक इबादत-ए बदनय्या (जिस्मानी इबादत) होने की वजह से, नमाज़ किसी और के बदले नहीं पढ़ी जा सकती। हर किसी को इसे अपने आप अदा करना है। किसी भी नमाज़ को उसके मुक़र्रर वक्त में पढ़ने को **अदा** कहते हैं। किसी नमाज़ को दूसरी बार पढ़ना **इआदा** है। मिसाल के तौर पर, एक नमाज़ मकरूह के तौर पर पढ़ी गई उसे उसका वक्त निकलने से पहले दोबारा अदा किया जाए। अगर ऐसा मुमकिन न हो तो, इसे दूसरे वक्त में दोबारा अदा किया जाए। ये वाजिब है। अगर एक फ़र्ज़ या वाजिब नमाज़ उसके वक्त में न पढ़ी जाए, उसके मुक़र्रर वक्त के गुज़र जाने के बाद अदा की जाए तो ये **क़ज़ा** है।

जब पाँच रोज़ाना की नमाज़ों के फ़र्ज़ हिस्से और वितर की नमाज़ अदा की जाए और जब उनकी क़ज़ा अदा की जाए, तो ये फ़र्ज़ है के तरतीब का ख्याल रखा जाए। यानी, जब नमाज़ अदा की जाए तो ये ज़रूरी है के उनकी हसबे मामुल उनकी तरतीब के मुताबिक अदा किया जाए। **तरतीब रखने** का मतलब है के पाँच क़ज़ा नमाज़ों से ज़्यादा कोई क़र्ज़ न हो। इसी तरह जुमे की नमाज़ के फ़र्ज़ भी ज़ुहर की नमाज़ के वक्त अदा कर दिए जाएँ। एक शख़्स जो सुबह की नमाज़ के लिए नहीं उठता उसे जितनी जल्दी याद आ जाए उसकी क़ज़ा अदा कर देनी चाहिए, चाहे अगर उसे ख़ुत्बा (जुमे की नमाज़ का) के दौरान वो याद आए। जब तक एक शख़्स एक नमाज़ अदा करता है या उसकी क़ज़ा अदा करता है, तो उसे इस बात की इजाज़त नहीं है के उसके बाद आने वाली पाँच नमाज़ों को वो अदा कर सके। एक हदीस-ए शरीफ़ का

बयान हैः **(अगर एक शख़्स जो देर तक सोया रहा या एक नमाज़ भूल गया, तो जमाअत में नमाज़ पढ़ते हुए याद आया, तो उसे अपनी नमाज़ इमाम के साथ पूरी करनी होगी और फिर अपनी पिछली नमाज़ की कज़ा अदा करनी होगी! फिर उसे वो नमाज़ दोबारा अदा करनी होगी जो वो इमाम के साथ अदा कर रहा था!)**

एक फर्ज़ की कज़ा अदा करना फर्ज़ है। ये वाजिब है के एक वाजिब की कज़ा अदा की जाए। हमें सुन्नत नमाज़ की कज़ा अदा करने के लिए नहीं हुकूम हुआ जो हम उसके सही वक्त में अदा नहीं कर पाए। जैसा के हन्फ़ी मसलक के आलिमों ने एक राए से वाज़ेह किया, "जो सुन्नत के ज़मरे में नमाज़ें आती है वो अपने ही बताए गए वक्त में बंधी हुई हैं फर्ज़ हैं के उसी वक्त अदा की जाएँ। वो सुन्नत नमाज़ जो अपने मुकर्रर वक्त में अदा नहीं की जाती वो कर्ज़ नहीं हैं जो अदा की जाएँ। इसलिए, हमें उनकी कज़ा अदा करने का हुकूम नहीं हुआ है। बहरहाल, चूँकि सुबह की नमाज़ की सुन्नत वाजिब की तरह है, तो जब इन्हें वक्त पर अदा नहीं किया जाए, तो इन्हें फर्ज़ के साथ उसी दिन दोपहर से पहले अदा कर लिया जाए। सुबह की नमाज़ की सुन्नत की कज़ा दोपहर के बाद अदा नहीं की जाएगी, और दूसरी नमाज़ों की सुन्नतों की भी कज़ा अदा नहीं की जाती। अगर तुम इसकी कज़ा अदा करते हो तो तुम्हें रहमतें नहीं मिलेंगी (जोकि तुम्हें मिलती) जो एक सुन्नत अदा करने पर मिलती है, बल्कि तुम्हें नफ़ली नमाज़ की रहमतें मिल जाएँगी। **इबन आबदिन** और किताब **तरग़ीब-उस-सलात** के **162**वें सफ़ेह में कहा हैः (इस बात की इजाज़त है के सुन्नत नमाज़ें बैठकर भी अदा की जा सकती हैं चाहे अगर वहाँ कोई उज़र न हो। इनको अदा न करना गुनाह है। इस बात की इजाज़त है के फर्ज़ नमाज़ों को बैठकर अदा कर लिया जाए अगर तुम्हारे पास कोई सही उज़र हो।)

जानबुझकर और बग़ैर सही उज़र के एक फर्ज़ नमाज़ को छोड़ना ये बहुत बड़ा गुनाह है। एक शख़्स को उन नमाज़ों की क़ज़ा अदा करनी चाहिए जो वो उनके मुकर्रर वक्त में अदा करने से नाकाम रहा। वहाँ पर दो जाईज़ वजूहात हैं एक नमाज़ को जानबुझकर छोड़कर क़ज़ा करनी की जोकि फर्ज़ या वाजिब हो। पहला उस हालत में नाफ़िज़ होता है जब बराहेरास्त दुश्मन से आमना सामना हो। दूसरा एक सफ़र करने वाले शख़्स पर फ़ाइज़ होता है- एक शख़्स जो सफ़र में हो, चाहे अगर उसकी नीयत तीन दिन की मसाफ़त की न हो, जिसे चोर का डर हो, एक जंगली जानवर, सैलाब, या एक तूफ़ान का डर हो। जब ऐसे लोग इशारों के साथ भी नमाज़ अदा न कर पाएँ, बैठकर, एक सिम्त की तरफ़ रूख करके या एक जानवर पर, तो उन्हें क़ज़ा के लिए छोड़ देनी चाहिए। इन दो वजूहात में से किसी एक के लिए फर्ज़ों को क़ज़ा के लिए छोड़ देना कोई गुनाह नहीं है, गहरी नींद या भूल जाने की वजह से उन्हें मिस कर देना भी गुनाह नहीं है।

एस्बाह की तंकीद में लिखा हैः "इस बात की इजाज़त है के मुकर्रर वक्त के बाद नमाज़ अदा करना अगर तुमने ऐसा किसी को बचाने के लिए किया है जोकि डूबने वाला हो या दूसरे की ज़िंदगी खतरे वाली हालत में हो।" लेकिन जैसे ही उज़र ज़ाहिर होना बंद हो जाए वैसे ही उसकी क़ज़ा अदा करना फर्ज़ है। इस बात की इजाज़त है के अपने घरबार के लिए रोज़ी कमाने के लिए नमाज़ों की क़ज़ा को लम्बा मुल्तवी कर दो और अपनी लाज़मी ज़रूरयात को मोहय्या करने के लिए; अगरचे, तुम्हें क़ज़ा नमाज़ें अपने नज़दीकी खाली वक्त में अदा कर लेनी चाहिए, वरना वो खाली वक्त उन तीन वक्तों में से किसी एक के साथ मिल सकता है जिसके दौरान नमाज़ को अदा करना हराम है। तुम गुनहगार हो जाओगे अगर तुम उन्हें ज़्यादा देरी करोगे। दरअसल, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने चार नमाज़ें, जो वो खंदक (गढ़ा/खाई) की जंग की सख्ती की वजह से अदा करने में नाकाम रहे थे, उसी रात जमाअत में अदा

की जबकि सहाबा रज़ी अल्लाहु अन्हुम ज़ख्मी और थके हुए थे। हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने बयान किया: **(ये बहुत बड़ा गुनाह है के फर्ज़ नमाज़ की दो इबादतों को मिलाना।)** यानी, ये बड़ा गुनाह है के फर्ज़ नमाज़ को इसके मुकर्रर वक्त में अदा न करना और उसे बाद में अदा करना दूसरी हदीस-ए शरीफ़ से वाज़ेह है: **(अल्लाह तआला एक शख़्स को दोज़ख में अस्सी हुकबस के लिए रखता है जो एक नमाज़ को उसके मुकर्रर वक्त के पूरा होने के बाद पढ़ता है।)** एक हुकबा कयामत के अस्सी साल हैं, और दूसरी दुनिया में एक दिन इतना लम्बा है जितना हज़ार दुनियावी साल। ये सज़ा है एक नमाज़ को उसके मुकर्रर वक्त के बाद अदा करने की। हमें उस सज़ा का ख्याल करने की कोशिश करनी चाहिए जो कभी नमाज़ न अदा करने पर मिलेगी।"

हमारे पैग़म्बर 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया: **(नमाज़ यकीन का महराबदार पत्थर है। वो जो नमाज़ अदा करता है अपना यकीन तामीर करता है। वो जो नमाज़ अदा नहीं करता वो अपना यकीन मिसमार कर देता है।)** आपने एक हदीस-ए शरीफ़ में फरमाया: **(इंसाफ वाले दिन, ईमान के बाद पहला सवाल नमाज़ के ऊपर होगा।)** अल्लाह तआला ने वाज़ेह किया: **(ए मेरे बंदे, अगर तू नमाज़ के ऊपर अपना खाता दे रहा है, तो तेरी हिफ़ाज़त है। मैं तेरे दूसरे खाते आसान कर दूँगा!)** दर हकीकत, कुरआन अल-करीम की सुरत-उल-अंकबूत की पैंतालिसवीं आयत से वाज़ेह है: **(एक नमाज़ की इबादत मुकम्मल तौर पर अदा की गई आदमी को पक्के तरीके से फहशा** (गंदा) **और मुंकर** (नाज़िबा हरकात) **करने से बचाती हैं।** हमारे पैग़म्बर (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया: "**एक वक्त जब आदमी अल्लाह से करीब होता है वो वक्त है जब वो नमाज़ अदा कर रहा हो।**"

वहाँ पर दो तरह के मुसलमान हैं जो नमाज़ के मुकर्रर वक्त में उसे अदा नहीं करते: **1-** उसका उसे किसी उज़र की वजह से न अदा कर

पाना। **2-** अपनी सुस्ती की वजह से नमाज़ छोड़ना, अगरचे उसे मालूम है के नमाज़ उसका फर्ज़ है और उसे सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला है।

जो नमाज़ फर्ज़ है उसे छोड़ना एक बड़ा गुनाह है। ये गुनाह माफ़ नहीं होता जब एक शख़्स इसकी कज़ा अदा करता है। जब वो कज़ा अदा करता है, तो नमाज़ छोड़ने का गुनाह माफ़ कर दिया जाता है। वो शख़्स सिर्फ पछतावे के साथ माफ़ नहीं किया जाता, जब तक के वो छोड़ी हुई नमाज़ों की कज़ा अदा न करले। ये उम्मीद और आस की जाती है के उसे माफ़ कर दिया जाएगा अगर वो कज़ा अदा करने के बाद नदामत महसूस करले। उसे उन नमाज़ों की कज़ा अदा करनी चाहिए जो उसने अदा नहीं की हैं जब की पछता रहा हो अगर एक शख़्स कज़ा नहीं करता जबकि वो ऐसा करने के काबिल हो, तो वो एक और बड़ा गुनाह करता है। ये बड़ा गुनाह बुराई में दो गुना बढ़ जाता है, वक्त के हर लम्हे जो आराम में बीता जिसमें एक शख़्स ने कज़ा अदा की, जिसमें करिबन छः मिनट लगे। इस वजह से, खाली वक्त में फौरन कज़ा नमाज़ अदा करना फर्ज़ है। वो जो छोड़ी हुई नमाज़ों की कज़ा अदा करने को अहमियत नहीं देते वो हमेशा के लिए दोज़ख की आग में जलेंगे। **उमदत-उल-इस्लाम** और **जामि-उलफ़त्तावा** किताबों में लिखा हैः "दुश्मन से बराहेरास्त आमना सामना वाले हालात में, एक नमाज़ को छोड़ना जबकि उसे अदा करना मुमकिन हो, वो ऐसा ही है जैसे सात सौ बड़े गुनाह करना।"

कज़ा को टालने का गुनाह उस गुनाह से ज़्यादा है जो नमाज़ को उसके मुकर्रर वक्त में अदा करने से होता है। एक बार एक शख़्स कज़ा अदा करले पिछली नमाज़ की जो छोड़ी हुई थीं, तो सारे गुनाह जो कज़ा को मुल्तवी करने से सज़ा के तौर पर मिले (वो पिछली नमाज़ की इबादत जो छोड़ी गई) उतने लम्बे वक्त के लिए (यानी सही वक्त से पहले इसे अदा कर लिया जाता), तो सब माफ़ कर दिए जाते हैं।

वज़ाहतः (क्या सुन्नत की जगह कज़ा नमाज़ों को अदा करने की इजाज़त है?)

हज़रत अब्दुलकादिर-ए जीलानी ने अपनी किताब (**फुतूह-उल**-गैएब) में कहाः एक ईमान वाला पहले फर्ज़ करता है। जब फर्ज़ पूरे हो जाते है तो सुन्नतों को पूरा करना चाहिए। उसके बाद वो नफ़िल पर जाए। ये बेवकूफी है के सुन्नत अदा करना जबकि एक शख़्स पर फर्ज़ का कर्ज़ हो। उस शख़्स की सुन्नतें कुबूल नहीं की जातीं जिस पर फर्ज़ का कर्ज़ हो। अली इबनि अबी तालिब रज़ी अल्लाहु अन्ह ने खबर दीः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(अगर एक शख़्स अपनी फर्ज़ नमाज़ें छोड़ता है और कज़ा का कर्ज़ है, तो उसकी नफिल नमाज़ें अदा करना बेकार है। जबतक के वो कज़ा अदा न करे। अल्लाह तआला उसकी नफिल नमाज़ें कुबूल नहीं करेगा।)** हन्फ़ी मसलक के आलिमों में से एक अब्दुलहक-ए दहलवी ने इस हदीस को समझाया जो अब्दुलकादिर-ए जीलानी के ज़रिए मंदरजाज़ेल बताई गईः (ये जानकारी ये बताती है के उनकी सुन्नतें और नफ़ली नमाज़ें कुबूल नहीं होतीं जिन पर फर्ज़ो की कज़ा बाकी हो। ये हम जानते हैं के सुन्नतें फर्ज़ को तसलीम करती हैं। इसका मतलब है के फर्ज़ अदा करते वक्त, अगर कोई चीज़ छूट जाए जो के असल में फर्ज़ को कमाल पर पहुँचाती है, फिर सुन्नतें फर्ज़ को जोकि अदा की गई उनको कमाल पर पहुँचाने का सबब बनती है। एक शख़्स की नामंज़ूर सुन्नतें जिस पर फर्ज़ का कर्ज़ हो वो किसी लायक नहीं है।)

मुहम्मद सादिक एफ़ंदि, जो (तब) जरूसलेम के काज़ी थे, उन्होने रसमी नमाज़ों की फाइता की कज़ा के बारे में जानकारी देते हुए कहाः "बड़े आलिम इबनि नुजैम से पूछा गयाः (अगर एक शख़्स अपनी कुछ इबादतों की नमाज़ें कज़ा के लिए छोड़ दे और अगर वो सुबह की, जुहर की, असर की,

मग़रिब और इशा नमाज़ों की सुन्नतें अदा करता है इस नीयत के साथ के वो उनकी क़ज़ा अदा करेगा, तो क्या वो सुन्नतें छोड़ दे?) उनका जवाब थाः (उसे सुन्नत नहीं छोड़नी। रोज़ाना की पाँच वक्त की नमाज़ों की सुन्नतों को अदा करने के मकसद में हर नमाज़ के वक्त के फर्ज़ के अलावा नमाज़ अदा करनी होगी। शैतान तुम्हें हमेशा नमाज़ अदा करने से रोकता है। फर्ज़ नमाज़ के अलावा एक और नमाज़ अदा करने से तुम शैतान का मुकाबला कर सकते हो, बेइज़्ज़ती कर सकते हो। सुन्नत अदा करने के बजाए क़ज़ा अदा करने से, तुम सुन्नतें भी अदा कर सकते हो। सुन्नत पूरी करने के लिए, हर नमाज़ की वक्त के फर्ज़ के अलावा एक और नमाज़ अदा करनी चाहिए, जिनकी क़ज़ा के कर्ज़ बचे हों उन्हें क़ज़ा अदा करनी चाहिए। बहुत सारे लोग बजाए क़ज़ा के सुन्नतें अदा करते हैं। वो दोज़ख में जाएगें। लेकिन एक शख़्स जो बजाए सुन्नतों के क़ज़ा अदा करता है वो दोज़ख से बच जाता है।)

क़ज़ा नमाज़ें कैसे पढ़ें?

एक शख़्स को अपनी छोड़ी हुई नमाज़ों की क़ज़ा अदा करनी चाहिए और इस बड़ी सज़ा से बचने के लिए तौबा करनी चाहिए। इस वजह से, एक शख़्स को रोज़ाना की पाँच वक्त की सुन्नतें अदा करनी चाहिए क़ज़ा नमाज़ों को अदा करने की नीयत के साथ। वो जो अपने आलसी पने की वजह से नमाज़ अदा नहीं करते, और वो जिन पर सालों की नमाज़ों का कर्ज़ है, जब वो अपनी रोज़ाना की पाँच वक्त की नमाज़ को पढ़ना शुरू करते हैं, तो रोज़ाना की पाँच नमाज़ की इबादतों की सुन्नत के साथ मुतफ़िक होते हैं, तो अपनी पिछली (छोड़ी हुई या खोई हुई) रोज़ाना की फर्ज़ की क़ज़ा की नीयत (इरादा) करें उस वक्त की नमाज़ के वक्त के साथ तअल्लुक रखते हुए जिस में वो अदा कर रहे हों। सारे चारों मसलक इस बात पर एक राए हैं के वो अपनी सुन्नतें क़ज़ा नमाज़ की नीयत करते हुए अदा कर सकते हैं। हन्फ़ी

मसलक में ये बहुत बड़ा गुनाह है के एक नमाज़ (जोकि फर्ज़ है) को कज़ा (यानी उसे छोड़ना) अदा करने के तौर पर छोड़ना बग़ैर उज़र के। ये बड़ा गुनाह दुगना हो जाता है हर खाली वक्त के गुज़रने के साथ जोकि ज़्यादा लम्बा हो जाए नमाज़ अदा करने के लिए। इस लिए अपने खाली वक्त में जितना जल्दी मुमकिन हो सके नमाज़ की कज़ा अदा कर दी जाए ये फर्ज़ भी है। इस खौफ़नाक गुनाह से पीछा छुड़ाने के लिए, जोकि न तो गिना या नापा जा सकता है, और इसके अज़ाब से बचने के लिए, ये ज़रूरी है के ज़ुहर को नमाज़ की पहली सुन्नत को अदा किया जाए, जिसमें चार रकाअत हैं, ये नीयत करते हुए भी के पिछली ज़ुहर की नमाज़ की फर्ज़ की कज़ा भी अदा कर रहे हो जो तुमने अदा नहीं की थी। जब तुम अस्र की नमाज़ की सुन्नत अदा कर रहे हो तो तुम इस नीयत के साथ के अस्र की पिछली फर्ज़ नमाज़ों की कज़ा भी अदा कर रहे हो। जब तुम मग़रिब की नमाज़ की सुन्नत अदा कर रहे हो तुम पिछली मग़रिब की नमाज़ की तीन रकाअत फर्ज़ की कज़ा अदा करने की भी नीयत करलो। जब इशा की नमाज़ की पहली सुन्नत अदा करो, तुम इसकी भी नीयत करलो के तुम इशा की पिछली फर्ज़ की कज़ा की भी अदाएगी कर रहे हो, और जब इशा की नमाज़ की आखिरी सुन्नत अदा करो तो तुम पिछली छोड़ी हुई वितर की नमाज़ की कज़ा अदा करने की भी नीयत करलो और तीन रकाअतें अदा करो। इस तरह हर दिन तुम एक दिन की कज़ा का कर्ज़ अदा करोगे। इसी तरह, जब तरावीह की नमाज़ अदा कर रहे हो तो तुम्हें कज़ा अदा करनी चाहिए ये नीयत करते हुए के तुम्हारी पिछली फर्ज़ नमाज़ का जो कर्ज़ है वो तुम अदा कर रहे हो। तुम ऐसा इतने सालों तक करते रहो जैसे के जितने साल तुमने अपनी नमाज़ें कज़ा के लिए छोड़ीं। कज़ा की नमाज़ें अदा करने के बाद तुम मामुल के मुताबिक सिर्फ़ अपनी सुन्नतें पढ़नी शुरू कर सकते हो। अगर एक शख़्स के पास खाली वक्त है, तो उसे हर मौके पर अपनी कज़ा नमाज़ें अदा करनी चाहिए, और छोड़ी हुई नमाज़ों का कर्ज़ अदा करना चाहिए। अदा न की गई कज़ा नमाज़ों का गुनाह हर दिन एक गुना बढ़ता है।

छठा हिस्सा

वो जो नमाज़ नहीं पढ़ते

हज़रत अबू बकर-ए सिददीक रज़ी-अल्लाहु अन्ह ने कहा, के जब रोज़ाना की नमाज़ की इबादत का वक्त आता है, फरिश्तें कहते हैं, “ए आदम के बेटे, खड़े हो जा! नमाज़ अदा करके, आग को बुझाओ जो इंसानी मखलूक को जलाने के लिए बनाई गई है।” एक हदीस-ए शरीफ़ में ये बयान थाः **(ईमान वाले और काफ़िर के बीच में जो फर्क है वो है नमाज़,)** यानी, एक ईमान वाला नमाज़ अदा करता है, और काफ़िर नहीं।मुनाफ़िक, हालांकि, कभी इसे अदा करता है और कभी नहीं।मुनाफ़िक दोज़ख में सख़्त अज़ाब में मुबतला होंगे।अब्दुलाह इबन अब्बास रज़ी-अल्लाहु अन्ह, मुफ़स्सीरों के उस्ताद, ने कहा के उन्होने सुना के रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने फरमाया, **(वो जो नमाज़ अदा नहीं करते जमा किए जाने वाले दिन अल्लाह तआला को गुस्से में पाएंगे।)**

हदीस के इमामों ने एक राए से बयान दियाः (एक शख़्स जो एक नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त में जानबुझकर अदा न करें; यानी, अगर वो एक नमाज़ अदा न करने के लिए माफ़ी न मांगे जबकि उसका मुकर्रर वक्त खत्म हो गया हो, वो एक काफ़िर बन जाता है और अपनी मौत के दौरान एक काफ़िर बन जाता है।) उनका क्या होता है जो नमाज़ याद नहीं रखते या नमाज़ को एक फर्ज़ की तरह नहीं देखते? अहल अस सुन्नत के आलिमों ने एक इतफ़ाक राए से कहा, “इबादत (इबादतें) ईमान का हिस्सा नहीं हैं।” लेकिन नमाज़ के मामले में वहाँ एक इतफ़ाक राए नहीं है।फिकह के इमामों **इमाम अहम इबन हंबल, इस्हाक़ इबन राहवेह, ‘अब्दुल्लाह इबन मुबारक, इब्राहिम नेहाई, हकीम**

इबन हुतेबा, अय्यूब सहतियानी, दाऊद ताई, अबू बकर इबन शएबा और ज़ुबेर इबन हर्ब और कई दूसरे बड़े आलिमों ने कहा के एक मुसलमान जो जानबुझकर नमाज़ छोड़ता है एक काफ़िर (बे-ईमान वाला) बन जाता है। फिर, ऐ मुसलमान भाई, कोई नमाज़ मत खोओ और ग़ाफ़िल मत रहो; प्यार से इसे अदा करो! अगर अल्लाह तआला सज़ा देगा इन आलिमों के इजतिहाद के मुताबिक इंसाफ़ वाले दिन, तुम क्या करोगे?

हंबली मसलक में एक मुसलमान जो बग़ैर किसी उज़र के नमाज़ अदा नहीं करता वो मुरतदद की तरह मरेगा, और उसका जनाज़ा न ही धोया जाएगा या कफ़नाया जाएगा, न ही उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़ाई जाएगी। उसे मुसलमानों के कब्रिस्तान में नहीं दफ़नाया जाएगा, और उसकी कब्र को शनाख्ती नहीं बनाया जाएगा। उसे एक पहाड़ पर एक खोखल में डाला जाएगा।

शाफ़िई मसलक में, एक शख़्स जो नमाज़ अदा न करने पर कायम रहता है वो एक मुरतदद नहीं बन जाता, बल्कि उसकी सज़ा मौत है। मालिकि मसलक इस मामले में शाफिई की तरह है।

हन्फ़ी मसलक में, उसे कैद कर दिया जाएगा जब तक के वो नमाज़ पढ़नी शुरू न करदे या खून निकलने तक मारा जाएगा।

वो जो पाँच चीज़ों को नहीं करता उसे पाँच चीज़ों से महरूम रखा जाएगाः

1- वो जो अपने माल में से ज़कात नहीं देगा उसे उसके माल में से कोई फाएदा नहीं मिलेगा।

2- एक शख़्स की ज़मीन और कमाई में से जो उसका अश्र नहीं देता, तो वहाँ कुछ ज़्यादा नहीं बचता।

3- एक शख़्स के जिस्म से सेहत ग़ायब हो जाती है जो ख़ैरात नहीं देता।

4- वो जो दुआ नहीं करता उसकी इच्छा उसे हासिल नहीं होती।

5- वो जो एक नमाज़ अदा नहीं करना चाहता जब उसका वक्त आता है तो अपनी आखिरी सांस में वो कलिमा-ए शहादत कहने में नाकाम रहता है।

एक हदीस-ए शरीफ़ में ये वाज़ेह हैः **(अगर एक शख़्स नमाज़ अदा नहीं करेगा अगरचे उसके पास कोई ठोस उज़र नहीं होगा, अल्लाह तआला उसे पन्द्रह किस्म के ताऊन देगा। उनमें से छः इस दुनिया में आएंगे, तीन मौत के वक्त, आएंगी, तीन कब्र में आएंगी, और तीन आएंगी जब कब्र से उठेंगे।**

दुनिया में छः ताऊन ये हैंः

1- वो जो नमाज़ अदा नहीं करेगा वो अपनी पूरी ज़िंदगी बरकत नहीं पाएगा।

2- उसके पास खुबसूरती नहीं होगी, नरमाई उनके पास होगी जिन्हें अल्लाह तआला चाहेगा।

3- उसे उसके किसी भी किए गए अच्छे काम का सवाब नहीं मिलेगा।

4- उसकी दुआएँ कुबूल नहीं होंगी।

5- उसे कोई पसंद नहीं करेगा।

6- दुआएँ जो (दूसरे) मुसलमान उसे देंगे वो उसके लिए कुछ अच्छा नहीं करेंगी।

अज़ाब की किस्में जो वो मरते वक्त झेलेगाः

1- वो नफ़रत, बदनुमा मुखालिफ़ तरीके से खत्म होगा।

2- वो भूखा मरेगा।

3- उसके पास ज़्यादा पानी होगा, वो दर्द भरी शिददत की प्यास से मरेगा।

अज़ाब की किस्में जो वो कब्र में सहेगाः

1- कब्र उसे दबाएगी।उसकी हडडियाँ आपस में घुस जाएंगी।

2- उसकी कब्र आग से भर जाएगी, जो उसे दिन और रात जलाएगी।

3- अल्लाह तआला एक बड़ा साँप उसकी कब्र में भेजेगा।वो दुनियावी साँपों की तरह नहीं होगा।वो उसे हर नमाज़ के वक्त रोज़ाना डसेगा।वो उसे किसी भी पल अकेला नहीं छोड़ेगा।

अज़ाब की किस्में जो वो उठाए जाने पर सहेंगेः

1- अज़ाब के फरिश्तें जो उसे दोज़ख में ले जाएंगे, उसे कभी अकेला नहीं छोड़ेंगे।

2- अल्लाह तआला गुस्से के साथ उससे मिलेगा।

3- उसका हिसाब बहुत सख़्त तरीके से हिसाब किया जाएगा, और उसे दोज़ख में फ़ैंक दिया जाएगा।

जो नमाज़ अदा करते हैं उनके फ़ज़ाइल

यहाँ पर बहुत सारी हदीस-ए शरीफ़ हैं जो नमाज़ अदा करने के फ़ज़ाइल और उनके इनामात के बारे में बताती हैं जो उन्हें दी जाते हैं जो नमाज़ अदा करते हैं। अबदुलहक़ बिन सेफ़उददीन दहेलवी के ज़रिए (इशाअत-उल-लेमआत) किताब में, उस हिस्से में जिसमें कुछ हदीस-ए शरीफ़ हैं जो नमाज़ की अहमियत के बारे में नशरोइशाअत हैं, उसका बयान हैः

1- अबू हुरेरा "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने वाज़ेह कियाः रसूलुल्लाह "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने फरमायाः **(पाँच रोज़ाना की नमाज़ें और जुमे की नमाज़ अगले जुमे तक गुनाहों के लिए कफ़्फ़ारा हैं और रमज़ान के रोज़ें अगले रमज़ान तक गुनाहों के लिए कफ़्फ़ारा हैं। वो उनके संगीन गुनाहों के लिए जो बड़े गुनाह करने से परहेज़ करते हैं माफ़ी की वजह बनते हैं।** वो उन संगीन गुनाहों को- इस दौरान अदा किए गए- जो अल्लाह तआला के बंदों के हुकूक को शामिल नहीं करते उन्हें खत्म करते हैं। उनके लिए जिनके संगीन गुनाह माफ़ किए गए और खत्म किए गए, नमाज़ पँचगाना और नमाज़ें जुमा बड़े गुनाहों की सज़ा को हल्का करने का सबब बनती हैं। ये ज़रूरी है के बड़े गुनाहों को माफ किए जाने के लिए तौबा की जाए। अगर किसी के कोई संगीन गुनाह नहीं है, तो वो उसे ऊँचे दरजे/मरतबे पर पहुँचा सकती है। ये हदीस-ए शरीफ़ (मुस्लिम) किताब में लिखी हुई है। जुमे की नमाज़ें एक शख़्स को जिसे पँचगाना नमाज़ें अदा करने की कमियाँ हो उसे माफ़ी दिला सकती हैं। अगर उसकी जुमे की नमाज़ों में भी कमियाँ हों तो, उसके रमज़ान के रोज़ें उसकी माफ़ी की वजह बनते हैं।

2- अबू हुरेरा "रज़ी अल्लाहु अन्ह" ने दोबारा वाज़ेह कियाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **"अगर एक शख़्स के घर**

के सामने एक दरिया हो और अगर वो रोज़ाना पाँच वक्त अपने आपको इसमें धोए, तो क्या कोई गंदगी उसपर रहेगी?" असहाब-ए किराम ने जवाब दियाः "नहीं, या रसूलुल्लाह, वहाँ पर कुछ भी नहीं होगा।" आपने फरमायाः "**पँचगाना नमाज़ें इसी तरह हैं। अल्लाह तआला उनके काबिले माफ़ी गुनाह खत्म कर देता है जो रोज़ाना पाँच नमाज़ें अदा करते हैं।**" ये हदीस-ए शरीफ़ [**बुखारी** और **मुस्लिम**] किताबों में लिखी हुई है।

3- अबदुल्लाह इबन मसूद "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने कहा के एक आदमी ने एक ना-महरम औरत को चूमा। यानी, जबकि एक शख़्स अनसार में से खजूरें बेच रहा था, एक औरत कुछ खरीदने आई, उस शख़्स की जन्सी जज़बा जाग गया। उसने उससे कहाः "इससे अच्छी घर पर हैं। मेरे साथ आओ ताकि मैं तुम्हें वो खजूरें दे दूँ।" जब वो घर पर आ गए, उसने औरत को गले लगाया और चूमा। औरत ने कहाः "तुम क्या कर रहे हो? अल्लाह तआला का खौफ़ करो!" उसे नदामत हुई। वो रसूलुल्लाह के पास आया और आपको बताया के उसने क्या किया। रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने उसे कोई जवाब नहीं दिया। आप अल्लाह तआला की तरफ़ से वही [पैग़ाम] का इंतज़ार कर रहे थे। फिर, उस शख़्स ने रस्मी नमाज़ पढ़ी। अल्लाह तआला ने सूरह हूद की एक सौ पन्द्रहवीं आयत भेजी जिसका मतलब हैः "**दिन के दो तरफ़ नमाज़ अदा करो और जब सूरज ढल जाए। बेशक, अच्छे काम बुरे कामों को खत्म कर देते हैं।**" दिन के दो तरफ़ से पहले और दोपहर के बाद है। यानी, सुबह, दोपहर और देर दोपहर की नमाज़ें। नमाज़ें जो दिन की रोशनी के नज़दीक है वो मग़रिब और इशा की रस्मी नमाज़ें हैं। इस आयत-ए करीमा में, ये बताया गया है के पँचगाना नमाज़ें जो रोज़ाना अदा की जाए जो गुनाहों की माफ़ी की वजह बनते हैं। उस शख़्स ने पूछाः "या रसूलुल्लाह! क्या ये खुशी की खबर सिर्फ मेरे लिए है, या, सारी उम्मत [कौम] के लिए है? आपने

फरमायाः “**ये मेरी सारी उम्मत के लिए है।**” ये हदीस-ए शरीफ़ दो किताबों जिन्हें सहीहेन [बुखारी और मुसलिम] कहते हैं में लिखी हुई है।

4- अनस बिन मालिक “रज़ी अल्लाहु अन्ह” ने कहाः “एक शख़्स रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम” के पास आया और कहाः (मेने एक गुनाह कर दिया है जो हद्द की सज़ा से सज़ा पाएगा।मुझे हद्द सज़ा दिजिए!) रसूलुल्लाह ने उस शख़्स से नहीं पूछा के उसने क्या गुनाह किया है।नमाज़ का वक्त आ गया।हमने एक साथ नमाज़ अदा की।जब रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने रस्मी नमाज़ पूरी कर चुके, वो शख़्स खड़ा हुआ और बोलाः (या रसूलुल्लाह ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’! मेने एक गुनाह किया है जिसकी सज़ा हद्द की सज़ा से मिलनी चाहिए।मुझे सज़ा दिजिए ये अल्लाह तआला की किताब में हुकूम है! आपने पूछाः “**क्या तुमने हमारे साथ नमाज़ अदा नहीं की**?” उसने कहाः “हाँ, मेने की है।” आपने कहाः “**उदास मत हो! अल्लाह तआला ने तुम्हारा गुनाह माफ़ कर दिया!**” ये हदीस-ए शरीफ़ इस्लाम की दो बुनियादी किताबों सहीहेन [बुखारी और मुसलिम] में लिखी हुई है।उस शख़्स ने सोचा मेने बड़ा गुनाह किया था जिसमें हद्द की सज़ा की ज़रूरत थी।हकीकत ये है के जब उसने नमाज़ अदा की तो उसे माफ़ कर दिया गया ये इस बात की तरफ़ इशारा करता है के वो असल में काबिले माफ़ी गुनाह था।या, उसका मतलब होगा **(ताज़ीर)** की सज़ा बजाए “हद्द” लफ़ज़ को इस्तेमाल करने के।दर हकीकत उसने हद्द की सज़ा पर ज़ोर नहीं दिया ये इस बात की तरफ़ इशारा करता है।[हद्द एक सज़ा है जिसका दर्जा इस्लाम में ज़ोर दे कर वाज़ेह किया गया है।ताज़ीर की बहुत सारी सज़ाएँ हैं; ये उतनी ही नाफ़िज़ की जाती हैं जितनी के इस्लामी जज ने हुकूम दिया हो।ताज़ीर का मतलब है के किसी को अच्छे चाल चलन का बनाना।इस्लाम में, इससे सज़ा देना हद्द से हल्की सज़ा देना है।]

5- अबदुल्लाह इबन मसूद "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने कहाः "मेने रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा वो कौन सा काम है जो अल्लाह तआला सबसे ज़्यादा पसंद करते हैं। आपने कहाः "**रस्मी/फर्ज़ नमाज़ जो उसके मुकर्रर वक्त के अंदर ही पढ़ ली जाए।**" दूसरी कुछ हदीस-ए शरीफ़ में ये इस तरह बयान थाः "**वो उस फर्ज़ नमाज़ को ज़्यादा पसंद करता है जो उसके मुकर्रर वक्त के शुरू में ही पढ़ ली जाए।**" मैंने कहा "उसके बाद, कौन सी उसे सबसे ज़्यादा पसंद है?" आपने फरमायाः "**अपने वालदेन पर महरबानी करना।**" मैंने कहा "इसके बाद, कौन सा काम उसे सबसे ज़्यादा पसंद है?" आपने फरमायाः "**अल्लाह की राह में जिहाद करना।**" ये हदीस-ए शरीफ़ दो सहीह [(बुखारी) और (मुसलिम)] किताबों में, ये हवाला दिया गया हैः "**सब कामों से अच्छा है किसी को खाना देना।**" एक दूसरी हदीस-ए शरीफ़ में, इस तरह बयान हैः "**सलामों के साथ अदब को फैलाओ।**" एक दूसरी हदीस-ए शरीफ़ में, इस तरह बयान हैः "**रात में नमाज़ अदा करना जबकि सब सो रहे हों।**" एक दूसरी हदीस-ए शरीफ़ में, ये इस तरह बयान हैः "**सबसे कीमती काम वो है के कोई तुम्हारे हाथ और/जुबान से ज़ख्मी न हो।**" एक हदीस-ए शरीफ़ में, ये बयान हैः "**सबसे कीमती काम जिहाद है।**" एक हदीस-ए शरीफ़ में, ये बयान हैः "**सबसे कीमती काम हज-ए मबरूर है।**" यानी; एक हज अदा करना बग़ैर कोई गुनाह किए हुए। ये भी हदीस-ए शरीफ़ है के, "**ये है के अल्लाह तआला को याद करो**" **और** "**ये है लगातार पाक काम करते रहो।**" बहुत सारे जवाबात दिए गए हैं जिन्होने पूछा उनकी हालतों को देखते हुए। या, वक्त के हिसाब से जवाब दिया गया। मिसाल के तौर पर, इस्लाम के शुरू में, सबसे आला और कीमती काम जिहाद था। [हमारे वक्त में, सबसे कामों में अफ़ज़ल काफ़िरों और लामज़हबी लोगों की नशरों इशाअत का जवाब देना है अहल-ए सुन्नत के उसूलों को फैलाकर। वो जो माली तौर पर या अपने माल के ज़रिए इस तरह मदद करते हैं, उनकी जो जिहाद कर रहे हैं, तो वो भी उनके ज़रिए कमाए गए सवाब में हिस्सेदार होंगे। आयत-ए करीमा, हदीस-ए

शरीफ़ ये बताती हैं के नमाज़ ज़कात और खैरात से ज़्यादा अहम है। अगरचे, एक मरते हुए शख़्स को कुछ देना और इस तरह उसको बचाना नमाज़ अदा करने से ज़्यादा कीमती है। इस तरह, मुख्तलिफ़ हालतों और वाक्यात में, मुखतलिफ़ चीज़ें ज़्यादा कीमती बन जाती हैं।]

6- ज़ाबिर बिन अबदुल्लाह ने बतायाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(आदमी और कुफ्र के बीच में हद नमाज़ को छोड़ देना है।)** इस लिए, नमाज़ एक परदा है जो आदमी को काफ़िर बनने से रोकता है। अगर ये परदा हट जाए, तो आदमी कुफ्र में फिसल जाता है। ये हदीस-ए शरीफ़ **(मुसलिम)** किताब में लिखी हुई है। ये हदीस-ए शरीफ़ दिखाती है के नमाज़ को अदा करना छोड़ना बहुत गलत है। बहुत सारे असहाब-ए किराम का कहना है के वो जो बग़ैर उज़र के नमाज़ छोड़ता है एक काफ़िर बन जाता है। शाफिई और मालिकी मसलकों में, वो एक काफ़िर नहीं बनता, अगरचे, ये वाजिब है के उसे कत्ल कर दिया जाए। हन्फ़ी मसलक में, उसे मारा जाए और कैद कर लिया जाए जब तक के वो नमाज़ शुरू न करदे।

7- उबएद बिन सामित "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने कहाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः "**अल्लाह तआला ने नमाज़ अदा करने का अहकाम दिया है। अगर एक शख़्स बग़ैर नुकस के वुज़ू करता है और उनके मुकर्रर वक्त में अदा करता है, और अगर वो अपने रूकू और खुशुअ पूरे करता है, अल्लाह तआला वादा करता है के वो उस शख़्स को माफ कर देगा। वो ये वादा उनसे नहीं करता जो ये चीज़ें नहीं करता। अगर वो चाहे तो वो उसे माफ कर सकता है। अगर वो चाहे तो उसे वो अज़ाब दे सकता है।**" इमाम-ए अहमद, अबू दाऊद और नेसाई ने इस हदीस-ए शरीफ़ को बताया। ऐसा देखा गया है, ये ज़रूरी है के नमाज़ के रूकू और सज्दों की हालतों को देखा जाए। अल्लाह तआला अपने वादे से मुंकर नहीं होते। वो बेशक उन्हें माफ़ कर देगा जो अपनी फर्ज़ नमाज़ें सही अदा करते हैं।

8- हज़रत अबू इमाम-ए बाहिली "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने बताया: "**रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: "अपनी पँचगाना नमाज़ें अदा करो! अपने एक महीने में रोज़े रखो! अपने माल की ज़कात दो! अपने हुक्काम की फरमाबरदारी करो। अपने रब की जन्नत में दाखिल हो जाओ।**" ऐसा देखा गया है, एक मुसलमान जो रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ें अदा करता है और जो रमज़ान के महीने में रोज़ें रखता है और जो अपनी जाएदाद में से ज़कात देता है और जो हुक्काम के ज़रिए दिए गए हुकूम को जो इस्लाम के मुताबिक हों उन्हें माने जो ज़मीन पर अल्लाह तआला के खलीफ़ा हैं वो जन्नत में दाखिल होगा। ये हदीस-ए शरीफ़ इमाम-ए अहमद और तिरमज़ी से वाज़ेह हुई है।

9- बुरेदा-ए इस्लामी "रज़ी-अल्लाहु अन्ह", असहाब-ए किराम में एक जाने माने लोग ने कहा: रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमाया: "**तुम्हारे और हमारे बीच में जो वादा है वो रस्मी/फर्ज़ नमाज़। वो जो फर्ज़ नमाज़ छोड़ता है वो काफ़िर बन जाता है।**" ऐसा देखा गया है, ये समझ वाली बात है के एक शख़्स जो फर्ज़ नमाज़ अदा करता है वो एक मुसलमान है। वो जो रस्मी/फर्ज़ नमाज़ को कोई अहमियत नहीं देता, वो जो इसे अदा नहीं करता क्योंकि वो इसे पहले फर्ज़ के तौर पर कुबूल नहीं करता तो वो एक काफ़िर बन जाता है। इमाम-ए अहमद और तिरमज़ी और नेसाई और इबन माजे ने ये हदीस-ए शरीफ़ बताई।

10- अबू ज़र-ए गिफ़ारी ने कहा: "पतझड़ के एक दिन के दौरान, हम रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' के साथ बाहर जा रहे थे।" पत्तियाँ झड़ रही थी। आपने एक पेड़ की दो शाखे तोड़ लीं। उनकी पत्तियाँ फौरन गिर गई। आपने फरमाया: "**ए अबू ज़र! जब एक मुसलमान अल्लाह तआला की रज़ा हासिल/जितने करने के लिए फर्ज़ नमाज़ अदा करता है, तो**

उसके गुनाह इसी तरह झड़ जाते हैं जिस तरह इन शाखों की पत्तियाँ झड़ीं।" इमाम-ए अहमद ने इस हदीस-ए शरीफ़ की खबर दी।

11- ज़ैद बिन खालिद जुहेनी ने कहाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः "**जब एक मुसलमान अपनी फर्ज़ नमाज़ की दो रकाअत सही तरीके से अदा करता है, गहराई और आजिज़ अहतराम के साथ, तो उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।**" यानी, अल्लाह तआला उस शख़्स के सारे काबिले माफ़ी गुनाहों को माफ़ कर देता है।इमाम-ए अहमद ने इस हदीस-ए शरीफ़ की खबर दी।

12- अबदुल्लाह इबन अमर-इबनि आस ने कहाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः "**अगर एक शख़्स रस्मी/फर्ज़ नमाज़ अदा करता है, तो ये फर्ज़ नमाज़ उसके लिए हिसाब वाले दिन एक रौशनी बन जाएगी और ये उसे दोज़ख से बचाने का सबब बनेगी।अगर वो फर्ज़ नमाज़ अदा नहीं करता, तो ये एक रौशनी नहीं बनेगी और उसे निजात नहीं मिलेगी।वो कारून, फ़िरओन, हामान और उबेए बिन हलफ़ के साथ रहेगा**" ऐसा देखा गया है, अगर एक शख़्स रस्मी/फर्ज़ नमाज़ को उसके फ़राइज़ वाजिबात, सुन्नतें और अदाब को ध्यान में रखते हुए करता है, तो ये फर्ज़ नमाज़ उसे हिसाब वाले दिन रौशनी देने का वजह बनेगी।अगर वो इस तरह अपनी फर्ज़ नमाज़ को जारी नहीं रखता तो, वो ऊपर बताए गए काफ़िरों के साथ रहेगा।यानी, वो दोज़ख में सख़्त अज़ाब झेलेगा।उबेए बिन हलफ़ मक्का में खुंखवार काफ़िर था।जंगे ओहद में, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने इसे खुद कत्ल किया था।इमाम-ए अहमद और बएहकी और दारिमी ने इस हदीस-ए शरीफ़ को नशर किया।

13- अबदुल्लाह बिन शक़ीक, ताबिईन में से खास एक ने कहाः "असहाब-ए किराम "रज़ी-अल्लाहु अन्हुम" ने कहा के सब इबादतों में, सिर्फ़

फ़र्ज़ नमाज़ को छोड़ना कुफ़्र है।" तिरमज़ी ने इसकी खबर दी। अबदुल्लाह बिन शकीक 'उमर', 'अली', 'उस्मान' और 'आएशा' "रज़ी-अल्लाहु अन्हुम" की हदीस-ए शरीफ़ बयान करते थे। वो **108**ह में रहलत फरमा गए थे।

14- अबूदरजा "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने कहाः "एक शख़्स जिसे मैं बहुत चाहता था उसने मुझ से कहाः "**चाहे अगर तुम्हें छोटे हिस्सों में बाँट दिया जाए, चाहे अगर तुम आग में जल जाओ, किसी भी चीज़ को अल्लाह तआला का शरीक खुदा न बनाना! फ़र्ज़ रस्मी नमाज़ों को मत छोड़ना! वो जो फ़र्ज़ रस्मी नमाज़ें छोड़ता है वो जानबूझकर इस्लाम को तर्क करता है! शराब मत पीना! शराब सब बुराईयों की चाबी है।**" ऐसा देखा गया, वो जो फ़र्ज़ रस्मी नमाज़ें उनकी बेहुरमती करते हुए छोड़ते हैं वो एक काफ़िर बन जाता है। वो जो उन्हें काहली की वजह से छोड़े वो एक काफ़िर नहीं बनता। अगरचे, ये एक बड़ा गुनाह है। ये कोई गुनाह की बात नहीं है के फ़र्ज़ रस्मी नमाज़ों का मुकर्रर वक्त निकलने के बाद उन्हें अदा करना पाँच काबिले कुबूल उज़र की वजह से जो इस्लाम ने बताए हैं। शराब और सारी नशीली चीज़ें अकल को हटा देती हैं। वो बग़ैर अकल के कोई भी गुनाह कर सकते हैं।

15- अली "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने बतायाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(ए अली! तीन चीज़ों को करने में देरी मत करोः जब इसका वक्त आ जाए, तो रस्मी नमाज़ फौरन अदा करलो! जब मैय्यत तैयार हो जाए, उनकी (जनाज़ा) नमाज़ फौरन अदा करो! जब तुम एक लड़की का कुफ़्व ढूँढ लो तो फौरन उसकी शादी करदो।)** इमाम-ए तिरमज़ी रहिमा-हुल्लाहु तआला ने इस हदीस-ए शरीफ़ को बताया।

[ऐसा देखा गया है, ये ज़रूरी है के एक लड़की, या औरत की उसके कुफ़्व से शादी कर दो, यानी, उसका हमसफ़र। कुफ़्व का मतलब ये नहीं है के अमीर होना, बड़ी आमदनी होना। कुफ़्व का मतलब है आदमी के लिए सालिह

[नेक] मुसलमान होना, अहल-अस सुन्नत पर अकीदा होना, रस्मी नमाज़ अदा करना, नशीली चीज़ें न पीना, यानी, इस्लाम को मानना और एक कारोबार होना जिसके ज़रिए वो अपनी रोज़ी कमाता हो। वो जो सिर्फ़ दौलत जाएदाद चाहते हैं अपने दामादों से अपनी बेटियों को आफतों में डालते हैं। वो अपनी बेटियों को दोज़ख में फैंकते हैं। लड़की के लिए, वो रस्मी नमाज़ अदा करती हो, वो नंगे सिर, खुले बाज़ू बाहर नहीं जाती हो, और वो अकेली न छोड़ी जाए, चाहे उसका ना-मेहरम मर्द रिश्तेदार ही क्यों न हो।]

16- अबदुल्लाह बिन 'उमर "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने बतायाः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः **(अल्लाह तआला उन्हें मंज़ूरी देता है जो अपनी रस्मी नमाज़ें फौरन अदा करते है जब उनका मुकर्रर वक्त शुरू होता है। वो उन्हें माफ़ कर देता है जो उन्हें उसके मुकर्रर वक्त के खात्में पर अदा करें।)** तिरमज़ी "रहिमा-हुल्लाहु तआला" ने इस हदीस-ए शरीफ़ का हवाला दिया।

शाफ़ि-ई और हंबली मसलकों में, ये अच्छा है के हर रस्मी नमाज़ उसका मुकर्रर वक्त शुरू होते ही पढ़ ली जाती है। मालिकी मसलक में भी यही कानून है। अगरचे, ये एक शख़्स के लिए अच्छा है जो दोपहर की नमाज़ अकेले अदा कर रहा हो [यानी, एक शख़्स जो जमाअत में एक इमाम की तकलीद नहीं कर रहा] के उसे मुकर्रर वक्त के शुरू होने में अदा न करे अगर मौसम बहुत गर्म हो। हन्फ़ी मसलक में, ये अच्छा है के सुबह और रात की नमाज़ें मुकर्रर औकात के शुरू में अदा न की जाएँ और ये अच्छा है के असर की नमाज़ अदा करना जब गर्मी कम हो जाए, अगर मौसम गर्म हो। [बहरहाल, ये अहतियात है दोपहर की नमाज़ इसके मुकर्रर वक्त के अन्दर अदा करली जाए जैसे के इमामेन की खबर के ज़रिए बयान किया गया और अस्र की नमाज़ और इशा की नमाज़ जब उसका वक्त शुरू हो तो अदा करली जाए इमाम-ए

आज़म के मुताबिक। ये अच्छा है। वो जो तकवा रखते हैं अपने हर काम में अहतियात बरतते हैं।

17- उमम-ए फरवा "रज़ी-अल्लाहु अन्हा" से बयान हैः उन्होने रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' से पूछा सबसे अफ़ज़ल काम के बारे में। आपने फरमायाः "**सब कामों में सबसे अफ़ज़ल रस्मी नमाज़ है जोकि उसके मुकर्रर वक्त के शुरू में अदा करली जाए।**" इमाम-ए अहमद, तिरमज़ी और अबू दाऊद "रहिमा-हुमुल्लाह तआला ने इस हदीस-ए शरीफ़ की खबर दी। नमाज़ (रस्मी इबादत) सब इबादतों में सबसे अफ़ज़ल है। जब तक शख़्स इसे इसके वक्त में शुरू होने के बाद फौरन अदा करता है, तो ये ज़्यादा अफ़ज़ल हो जाती है।

18- आएशा "रज़ी अल्लाहु अन्ह" ने कहाः "मैंने दो बार रसूलुल्लाह को अपनी रस्मी नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त के आखिर में पढ़ते हुए नहीं देखा।"

19- हज़रत उमम-ए हबीबा "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने खबर दीः रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने फरमायाः "**अगर अल्लाह तआला का एक मुसलमान गुलाम बारह रकाअतें नमाज़ की ततव्वो से पढ़े, वो जो फर्ज़ नमाज़ों के अलावा हैं, तो अल्लाह तआला जन्नत में उसके लिए एक महल तामीर करेंगे।**" ये हदीस-ए शरीफ़ **(मुसलिम)** किताब में लिखी हुई है। ऐसा देखा गया, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' ने सुन्नत नमाज़ों को जो रोज़ाना की पाँच फर्ज़ नमाज़ों के साथ अदा की जाती हैं उन्हें ततव्वो बुलाया, यानी नाफिला [ज़ाइद] नमाज़।

20- अबदुल्लाह बिन शकीक, ताबिईन में खास एक ने कहाः मैंने ततव्वो, यानी नफिली, रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' की नमाज़ों के

बारे में हज़रत आएशा "रज़ी अल्लाहु अन्ह" से पूछा। उन्होने कहाः "आप चार रकाअत पहले और दो रकाअत बाद में ज़ुहर की नमाज़ के फर्ज़ के बाद, दो रकाअतें मग़रिब और इशा की हर फर्ज़ के बाद, दो रकाअतें सुबह की नमाज़ के फर्ज़ से पहले पढ़ते हैं।" मुसलिम और अबू दाऊद "रहिमा-हुमल्लाहु तआला" ने इसकी खबर दी।

21- आएशा "रज़ी-अल्लाहु अन्ह" ने कहाः "नफ़िली इबादतें जो रसूलुल्लाह 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' जारी रखते थे सबसे ज़्यादा करना वो थी सुबह की नमाज़ की जाइद रस्मी इबादत।" ये खबर **(बुखारी)** और **(मुसलिम)** दोनो में लिखी है। ऐसा देखा गया, आएशा "रज़ी अल्लाहु अन्ह" ने कहा सुन्नत नमाज़ों के लिए जो रोज़ाना की पाँच फर्ज़ नमाज़ों के साथ अदा की जाती हैं उनके लिए नफ़िली कहा। इमाम-ए रब्बानी, मुजददिद-ए अलफ़-ए सानी, अहमद बिन अबदुलअहद फ़ारूकी सरहंदी, एक बड़े इस्लामी आलिम, मज़हबी आदमियों के रहनुमा, इल्हादियों और ला-मज़हबियों के खिलाफ़ अहल-ए सुन्नत के मज़बूत मुहाफ़िज़, एक आला मुजाहिद, जिन्होने उस मज़हब को फैलाया जिसे अल्लाह तआला ने चुना, अपनी किताब **(मकतूबात)** की पहली जिल्द के उन्नतीसवें खत में लिखा जिसके बराबर इस्लाम में अभी तक नहीं लिखा गयाः

वो काम जो अल्लाह तआला ने मंज़ूरी दिए वो हैं फर्ज़ और नाफ़िलें (ज़ाइद इबादतें)। जब उन इबादतों से मुवाज़ना किया जाता है जो फर्ज़ हैं, तो नफ़िली इबादतों की कोई कीमत नहीं रह जाती। एक फर्ज़ को उसके मुकर्रर वक्त में कर लेना ज़्यादा कीमती है उन नफ़िली इबादतों को करने से जो बग़ैर रूके एक हज़ार सालों तक की गई हों। हर किस्म की नाफ़िला, मिसाल के तौर पर नमाज़, ज़कात, रोज़ा, ज़िकर, फ़िकर (सोचना/असबाब) सब इसी तरह है इसके अलावा, फर्ज़ अदा करते वक्त, उसकी सुन्नतें या अदाब का ध्यान रखना कई गुना ज़्यादा कीमती है दूसरी नाफ़िलें करने से। सुबह की नमाज़

जमाअत से अदा करने के बाद हज़रत उमर, अमीर-उल-मोमिनीन "रज़ी-अल्लाहु अन्ह," ने जमाअत को देखा और, देखा के एक रूकन उसमें से ग़ैर हाज़िर है, उन्होने पूछा वो कहा है। उसके साथियों ने कहा, "वो हर रात नाफ़िली इबादत करता है। हो सकता है वो सो गया हो और जमाअत में न आ सक हो।" अमीर-उल-मोमिनीन ने कहा, "अगर वो पूरी रात सोता और सुबह की नमाज़ जमाअत से पढ़ता तो ज़्यादा बेहतर होता।" ऐसा देखा गया, के एक अदब को करना और फर्ज़ को अदा करते वक्त मकरूह को नज़रअंदाज़ करना कई गुना ज़्यादा कीमती है ज़िकर, तफ़क्कुर और मुराकबा (वाकफ़ियत) के। हाँ, अगर ये सब एक साथ ही जाए पूरे अदाब के साथ और मकरूहात को छोड़ते हुए, तो ये सब बेशक बहुत कीमती हैं। अगरचे, उनके बग़ैर वो किसी फ़ाएदे के नहीं हैं। इस वजह से, एक सोने के सिक्के की ज़कात देना हज़ारों सोने के सिक्कों को नाफ़िली ख़ैरात में देने से बहतर है। उस ज़कात के सिक्के को देते वक्त, उसके अदब का ध्यान रखा, मिसाल के तौर पर, अपने किसी नज़दिकी रिश्तेदार को दिया ये ज़्यादा कीमती है बनिस्बत नाफ़िली ख़ैरात देने के। [इसलिए, ये समझ आया के वो जो आधी रात के बाद नाफ़िली नमाज़ें अदा करना चाहते हैं उन्हें कज़ा नमाज़ें अदा करनी चाहिए। अल्लाह तआला के अहकाम **(फर्ज़)** कहलाए जाते हैं, उसकी मुमानियतें **(हराम)** कहलाई जाती हैं। हमारे पैग़म्बर के अहकाम **(सुन्नत)** कहलाए जाते हैं और मुमानियतें **(मकरूह)** कहलाई जाती हैं। ये सब एक साथ **(अहकाम-ए इस्लामिया)** कहलाती है। अच्छे अखलाक रखना और लोगों पर महरबानी करना फर्ज़ है। वो जो यकीन नहीं रखता या जो किसी कानून को नापसंद करता है जो अहकाम-ए इस्लामिया से मुंसलिक है तो वो एक **(काफ़िर)** [यकीन न रखने वाला, मुश्रिक, काफ़िर], **(मुरतदद)** [बिदअती, मुंकरे दीन] बन जाता है। वो जो इन सब में यकीन रखता है वो **(मुसलिम)** कहलाता है। एक मुसलमान जो अपनी सुस्ती की वजह से इस्लाम की फरमाबरदारी नहीं करती वो **(फ़ासिक)** कहलाती है। एक फ़ासिक जो फर्ज़ अदा नहीं करता या जो एक हराम करता है वो दोज़ख में

जाता है। कोई काम उस शख़्स का, कोई सुन्नत उस शख़्स की क़ुबूल नहीं की जाती। उनके लिए उसे कोई ईनाम नहीं मिलता। एक शख़्स जो अपनी ज़कात नहीं देता, चाहे अगर वो एक सोने का सिक्का हो, तो कोई भी उसके अच्छे काम जो उसने लाखों खर्च करके किए क़ुबूल नहीं होंगे। कोई भी ईनाम उसे नहीं दिया जाएगा उसके मस्जिदें, स्कूल अस्पतालें बनवाने की वजह से या खैराती तंज़ीमों को मदद करने के लिए। एक शख़्स की नमाज़ें तरावीह क़ुबूल नहीं होगी अगर उसने इशा की नमाज़ अदा नहीं की है। वो काम इबादत के जो किए गए- फर्ज़ या वाजिब के अलावा दूसरे- वो **(नाफ़िला)** [ज़ाइद] कहलाते हैं। सुन्नतें नाफ़िला इबादत हैं [इबादत के काम]। इस तारिफ़ के मुताबिक, वो जो कज़ा नमाज़ें अदा करते हैं वो जो सुन्नतें हैं उन्हें भी उसी वक्त में अदा कर सकते हैं। फर्ज़ अदा करने का ईनाम या हराम करने से परे रहने का ईनाम लाखों नाफ़िली इबादत करने से ज़्यादा है। एक शख़्स जो एक फर्ज़ नहीं करता या जो एक हराम करता है वो दोज़ख में जलेगा। उसकी नाफ़िली काम उसे दोज़ख में जलने से नहीं बचा सकते। इबादात में जो तबदिलियाँ होती हैं वो **(बिदअत)** कहलाती हैं। एक बिदअत करना जबकि इबादत का काम कर रहे हो और ये इबादत को ख़ारिज करने की वजह बनता है। एक शख़्स को उस इमाम की तकलीद करते हुए नमाज़ अदा नहीं करनी चाहिए जो फ़ासिक हो, मिसाल के तौर पर जिसकी बेटियाँ या बीवी अपने आपको बुरके में न रखें, या एक बिदअत रखने वाला हो, मिसाल के तौर पर जो इबादात में लाऊड स्पीकर का इस्तेमाल करे। एक शख़्स को उस शख़्स के वाअज़ को नहीं सुनना चाहिए, उसकी मज़हब पर बनाई हुई तकरीरों को नहीं सुनना चाहिए। एक शख़्स को उसकी किताबों को नहीं पढ़ना चाहिए। एक शख़्स को लोगों को- चाहे वो दोस्त हो या दुश्मन- मुसकुराते हुए चेहरे और मीठे लफ़्ज़ों के साथ मिलना चाहिए। एक शख़्स को किसी के साथ बहस नहीं करनी चाहिए। एक हदीस-ए शरीफ़ में, ये बयान हैः **(एक बेवकूफ़ के साथ बहस न करो)**। इबादत के काम दिल की पाकी बढ़ाते हैं। गुनाह दिल का सियाह करते हैं, ये कोई फैज़ नहीं

उठा पाते। ये हर मुसलमान के लिए फर्ज़ है ईमान, फराईज़, हराम के ज़रूरयात को याद करना। ये कोई जाईज़ उज़र नहीं है उसके लिए के वो उन्हें नहीं जानता। यानी, ये जानने की तरह है लेकिन उसको यकीन न करना।] **(मकतूबात)** किताब फ़ारसी ज़ुबान में है। हज़रत इमाम-ए रब्बानी **1034**हि [**1624** ए.डी.] में सरहंद (इंडिया) में। उनकी तफ़सीली सवानेह हयात तुर्की किताबों **(हक सोज़ुन वेसीकलारि)**, **(सआदत-ए एबदिया)** और **(असहाब-ए किराम)** और फारसी किताब **(बरकात)** में लिखी है।

नमाज़ की हकीकी नोय्यत

हज़रत अबदुल्लाह दहलवी, एक आला इस्लामी आलिम, ने अपनी किताब **(मकातिब-ए शरीफ़ा)** के **85**वीं खत में लिखा थाः

हमें अल्लाह के पैग़म्बर ने जमाअत में नमाज़ अदा करने से और पूरी **तमानीनत** (अपने अज़ा को रूकू में, सज्दे में, क़ौमा में बेहरकत रखते हुए) और **जल्सा** में (दो सज्दों के बीच में थोड़ी देर बैठना) **क़ौमा** पूरा करने के लिए (रूकू के बाद सीधे और बेहरकत खड़े होना) रूकू के बाद (नमाज़ के दौरान झुकना) और दो सज्दों के दौरान जल्सा (फर्श पर झुकाना) के साथ अदा करने का हुकूम दिया। वहाँ पर आलिम भी हैं जिन्होने कहा, और जल्सा फर्ज़ हैं। कादिहान हन्फ़ी मसलक के मुफतियों में से एक ने बताया के ये दो वाजिब हैं, के सज्दा-ए सहव वाजिब है जब एक शख़्स दो में से कोई एक भूल जाए, वो जो उनको जानबूझकर छोड़े उसे नमाज़ दोबारा अदा करनी होगी। वो जो ये कहते हैं के ये सुन्नत-ए मुअक्किदा हैं वो ये भी कहते हैं के ये सुन्नतें हैं जो वाजिब के नज़दीक है। ये कुफ़्र है के सुन्नत को हल्का समझकर नज़रअंदाज़ करना, इसे ग़ैर अहम तजवीज़ करना है। मुख्तलिफ़ अलग किस्म की केफ़ियात (हालतें) और हाल (जोशिली हालत) कियाम के दौरान (खड़े होने की हालत),

रूकू, क़ौमा, जलसा, सजदे, और बैठने की हालतें नमाज़ में ख़ुशी हासिल होना। नमाज़ में हर तरह की इबादतें शामिल हो सकती हैं। क़ुरआन को पढ़ना, कहना सुब्हानल्लाह [जिसका मतलब है, "मैं अल्लाह को किसी भी नुक्स रसूलुल्लाह की रूह के लिए सलवात कहना, इस्तग़फ़ार की दुआ पढ़ना (अल्लाह से माफ़ी की भीख माँगना) अपने गुनाहों के लिए, और जो चाहिए वो सिर्फ अल्लाह तआला से माँगना और सिर्फ़ उसी की इबादत करना, सब चीज़ें नमाज़ में शामिल हैं। पेड़, पौधे सीधे खड़े होते हैं जिस तरह नमाज़ में खड़े होते हैं। जानवर रूकू की हालत बयान करते हैं, और बेजान, ज़मीन पर फैल जाते हैं, **कअदा**, बैठी हुई हालत को बयान करने के लिए नमाज़ में। वो जो नमाज़ अदा करता वो ये सारी इबादत करता है जो उनके ज़रिए की जाती है। मेराज की रात में नमाज़ अदा करना फर्ज़ किया गया। एक मुसलमान जो नमाज़ अदा करता है अल्लाह के प्यारे नबी की तकलीद की नीयत के साथ, उस रात मेराज के साथ ताज़ीम बख़्शी गई, वो बुलंद दर्जे पर पहुँच जाता है बुलंद किए गए पैग़म्बर की तरह।

वो जो संजीदगी के साथ नमाज़ अदा करते हैं, अल्लाह तआला की तरफ़ और उसके पैग़म्बर की तरफ़ अदब (इज़्ज़त) रखते हुए, वो समझते हैं के वो ख़ुद इन दर्ज़ो तक पहुँच गए। इस उम्मत पर रहम करते हुए, अल्लाह तआला और उसके पैग़म्बर ने आला रहमतें उन पर नाज़िल कीं, और उनके लिए ये फर्ज़ कर दिया के नमाज़ अदा करे। हम और शुक्रिया हमारे अल्लाह को इन सब चीज़ों के लिए! हम अपने सलवात, तहियात (ताअज़ीना) और दुआएँ उसके प्यारे पैग़म्बर को भेजते हैं!

जो आराम और संजीदगी जब नमाज़ अदा करते हैं हासिल करते हैं वो कोई चीज़ सबसे अफ़ज़ल है। मेरे मुर्शिद [हज़रत मज़हर-ए जानान] ने कहा, "अगरचे ये नामुमकिन है के नमाज़ अदा करते वक्त अल्लाह तआला को देखना, कुछ हाल (जोशिली हालत) ऐसा हो जाता है जैसे उसे देख लिया हो।]

तसव्वुफ़ के बड़ो ने एक राए से बताया के ये हाल रोनुमा होता है। इस्लाम के आग़ाज़ में नमाज़ को क़ुदस (जेरूसलेम) की तरफ़ रूख करके अदा किया जाता है।

जब मुसलमानों को हुकूम दिया गया इसे बैत-उल मुक़ददस की तरफ़ से तर्क करने का और हज़रत इब्राहिम के किब्ले की तरफ़ घूमने का, तो मदीना के यहूदी नाराज़ हो गए और मज़ाक उड़ाकर कहने लगे, "तुम्हारी उन नमाज़ों का क्या होगा जो तुमने बैत-उल-मुक़ददस की तरफ़ अदा की?" सूरह बक़रा की एक सौ तेंतालिसवीं आयत नाज़िल हुई ये बताने के लिए केः "**अल्लाह तआला तुम्हारा ईनाम ज़ाया नहीं करेगा!**" इसलिए इतलाह दी गई के नमाज़ बग़ैर ईनाम के नहीं छोड़ी जाएगी। नमाज़ को "ईमान" के लफ़ज़ के साथ वाज़ेह किया गया। इसका मतलब हुआ के नमाज़ को सुन्नत के साथ मौज़ूँ न अदा करना ईमान को खोना है। हमारे आका रसूलुल्लाह ने फरमायाः "**नमाज़ में मेरे आखों की रोशनी और ज़ाएका है।**" इस हदीस का मतलब है, अल्लाह तआला ज़ाहिर है और महसूस किया जाता है नमाज़ में। इसलिए, मेरी आँखें आराम महसूस करती हैं। दूसरी हदीस से बयान है; "**ए बिलाल! मुझे आराम पहुँचा!**" जिसका मतलब है, "ए बिलाल, मुझे आराम/चैन दे अज़ान देकर और नमाज़ की इक़ामत कहकर।" एक शख़्स जो नमाज़ के अलावा किसी और चीज़ में आराम ढूँढता है वो कोई अच्छा नहीं है। वो जो ज़ाया करता है, छोड़ देता है नमाज़ों को वो हमेशा के लिए दूसरे इस्लामी कामों को भी खो देता है।

नमाज़ की खुबियाँ/फ़ज़ाइल

इमाम-ए रब्बानी "रहमतुल्लाही अलैहि" ने अपनी किताब (**मकतूबात**) की पहली जिल्द के **261**वें खत में इस तरह बयान कियाः एक शख़्स को पूरी तरह जानना चाहिए के दीन की पाँच बुनियादों में से, नमाज़ इस्लाम के पाँच

सतूनों में से नमाज़ दूसरी है। ये अपने अंदर हर तरह की इबादतें रखती है। अगरचे ये इस्लाम का पाँच में से एक हिस्सा है, लेकिन ये अपने आप इस्लाम बन गई है। ये सब कामों में अव्वल हो गई है जो आदमी को अल्लाह तआला का प्यार हासिल करवाती है। रूयत की इज़्ज़त, जोकि दुनियाओं के मालिक, सारे नबियों अलैहि व अलैहिमुस्सलातो वस्सलाम से अफ़ज़ल, मेराज की रात जन्नत में, आपको बख्शी गई, दुनिया की हालत के मुताबिक, दुनिया में वापिस आने के बाद, वो सिर्फ नमाज़ नहीं थी। इसी वजह से आपने फरमायाः "**नमाज़ ईमान वालों की मेराज है।**" आपने एक दूसरी हदीस-ए शरीफ़ में फरमायाः "**ये नमाज़ में ही होता है के आदमी अल्लाह तआला के नज़दीक होता है।**" नमाज़ का एक बहुत बड़ा हिस्सा है जो वो रूयत की किस्मत से हासिल करती है जो उन आला लोगों को मिलती है जो अपने आपको उसके तरीके, उसके रास्ते पर चलाते हैं। हाँ, अल्लाह तआला को इस दुनिया में देखना नामुमकिन है। दुनिया इसके काबिल नहीं है। लेकिन वो आला लोग जो आपकी तकलीद करते हैं वो रूयत के एक हिस्से की खुशी हासिल करते हैं। अगर वो हमें नमाज़ अदा करने का हुकूम नहीं देता, तो कौन इस अंजाम के खुबसूरत चेहरे से परदा उठाता? किस तरह प्यार करने वाले अपने प्यारे से मिलते? नमाज़ सारी परेशान रूहों को मज़ा देने वाली है। नमाज़ सारे दुखों को मदावा है। नमाज़ रूह की ग़िज़ा है। नमाज़ दिल का इलाज है। ये हदीस, "**ए बिलाल, मुझे खुशी दो,**" जो अज़ान का हुकूम देती है, इस हकीकत को बताती है, और ये हदीस, "**नमाज़ मेरे दिल की खुशी, और मेरी आँख की पुतली है,**" इस इच्छा की तरफ़ निशानदही करती है।

अगर कोई भी ज़ोक़, वज्द, इल्म, मारिफ़ात, मकामात, नूर और रोशनियाँ, तलवीन और तमकीन दिल में, समझा जाने के लायक और नासमझे जाने के लायक तजलीस, काबिल और नाकाबिल ज़ुहूर नमाज़ के बाहर वाक्या हुआ और अगर नमाज़ की अंदरूरी खसलत से कुछ महसूस न हो, तो जो कुछ

भी वाक्ये होगा वो ग़ौर करने, रंगों से और दिखाई देने से ज़ाहिर होगा।शायद ये कुछ भी नहीं बल्कि एक वहम, एक धोका हो।

एक समझदार शख़्स जो नमाज़ के अंदरूनी वस्फ़ को महसूस करता है, इस किस्म का होता है के इस दुनिया से बाहर चला गया और आखिरत में पहुँच गया, इस तरह आखिरत की बरकतों से वो कुछ हासिल कर लेता है।

वो आग़ाज़ से ज़ाएका और एक हिस्से का मज़ा हासिल करता है बग़ैर किसी वहम, ग़ोर की मदाखलत के।क्योंकि, सारे कमालात और बरकतें दुनिया में ग़ौर और ज़ाहिरदारी से आते हैं।ये आखिरत के लिए अपनी मिसाल आप है उनके लिए बराहेरास्त इब्तिदा से जारी होने के लिए बग़ैर किसी सायों और ज़ाहिरदारियों की मदाखलत के।आग़ाज़ से हासिल होने के लिए, दुनिया में मेराज ज़रूरी है।ये मेराज ईमान वाले की नमाज़ है।ये रहमत सिर्फ़ इस उम्मत के लिए अनौखी है।वो अपने नबी की फरमाबरदारी करके इसे हासिल कर सकते हैं।क्योंकि, उनके नबी 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' इस दुनिया से बाहर गए और दूसरी दुनिया में दाखिल हुए मेराज की रात में [रजब के मुबारक महीने की सत्ताइसवीं रात में]

आप जन्नत में दाखिल हुए और रूयत (अल्लाह तआला को देखना) की किस्मत से नवाज़े गए।ए हमारे अल्लाह! उस आला नबी 'सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम' पर रहमत हो, हमारी तरफ़ से महरबानी जो आपकी बड़ाई के लायक हो!

इसलिए, अपनी महरबानी, अच्छाई उन सारे दूसरे पैग़म्बरों आला नबीय्यना व अलैहिमुस्सलावातु वतसलीमात पर भी कर, क्योंकि उन्होने लोगों को तुझे जानने की और तेरा प्यार हासिल करने की दावत दी, और उन्होने लोगों को उस रास्ते की तरफ़ रहनुमाई की जो तुझे पसंद है।

तसव्वुफ़ के ज़्यादातर मानने वाले अपनी बीमारियों के लिए दवाई ढूँढते हैं दूसरी जगहों पर क्योंकि उन्हें नमाज़ की अंदरूनी सिफ़त का नहीं पता, क्योंकि उन्हें नमाज़ की अनौखी फ़ज़ाईल के बारे में नहीं बताया गया।

वो अपने मकसद को हासिल करने के लिए दूसरी चीज़ों पर रोज़ा रखते हैं। उनमें से कुछ चाहे इस तरीके पर नमाज़ को अलैहदा समझते हैं, जैसे के मकसद के साथ इसको कुछ लेना देना नहीं। वो रोज़े को नमाज़ से अफ़ज़ल समझते हैं। दूसरे कुछ जो नमाज़ की अंदरूनी खसलत को नहीं समझते वो अपनी परेशानियों की तसल्ली के लिए और अपनी रूहों की तशफ़ी के लिए मौसिकी में सरमस्ती में, बेखुदी में आराम ढूँढते हैं। वो समझते हैं के प्यारे इन मौसीकि की तरंगों में छुपे हैं। इस वजह से, वो नाचते वकत रोज़ा रखते हैं। अगरचे उन्होने ये हदीस सुनी हुई है, "**अल्लाह तआला ने हराम में कोई शिफ़ा देने वाला असर नहीं डाला।**" हाँ, नोसखिया तैराक जो डूबने वाला हो वो एक तिनका पकड़ता है। किसी भी चीज़ का प्यार आशिक को अंधा, बहरा कर देता है। अगर उन्हें नमाज़ के फ़ज़ाइल का कुछ ज़ाएका मिल जाता, तो वो कभी मौसिकी के बारे में ज़िकर नहीं करते, ना ही वो सरमस्ती के बारे में सोचते।

ए मेरे भाई! नमाज़ से हासिल कमाल और मौसिकी की वजह से उदासी दोनो एक दूसरे से उतनी ही दूरी पर हैं जितना नमाज़ और मौसिकी के बीच का फ़ासला। वो जो ज़्यादा अकल वाला होगा वो इस जताने से नतीजा निकाल लेगा।

इबादत का मज़ा लेना और जब तुम इसे अदा कर रहे हो तो सुस्त महसूस न करो तो ये अल्लाह तआला की आला बरकतों में से एक है। खासतौर से, नमाज़ के ज़ाएके को चखना उनको हासिल नहीं होता जो खात्मे तक न पहुँचे हों। फ़र्ज़ नमाज़ों के ज़ाएके को महसूस करना उनके लिए

अपनी मिसाल आप है जिन्होने आखिर हासिल कर लिया हो।इस वजह से, उनके लिए जो खात्मे के नज़दीक हों वो नाफ़िल नमाज़ों का मज़ा महसूस करते हैं।बहरहाल, आखिर में सिर्फ़ फर्ज़ नमाज़ों का मज़ा महसूस किया जाता है।आखिर में, नफ़िल नमाज़ों का कोई मज़ा नहीं रहता, फर्ज़ नमाज़ें अदा करना बड़ी किस्मत की बात है।

[नफ़िल नमाज़ का मतलब है वो नमाज़ें जो न तो फर्ज़ है नही वाजिब।सुन्नतें जो रोज़ाना की पाँच वक्त की नमाज़ों के फर्ज़ नमाज़ के पहले और बाद में हैं और दूसरी ग़ैर-वाजिब नमाज़ें वो सब नफ़ली नमाज़ हैं।सारी सुन्नत नमाज़ें, चाहे मुअक्किद हों या ग़ैर-मुअक्किद वो सब नाफ़िला हैं]।

नमाज़ों से जो मज़ा महसूस होता है उसका नफ़स में कोई हिस्सा नहीं है।जबकि एक इंसानी मखलूक इस ज़ाएका का मज़ा लेती है, उनका नफ़स आहोज़ारी करता है और होता है।ए हमारे अल्लाह! कितना बड़ा दर्जा है ये! हमारे जैसे लोगों के लिए जिनकी रूहें बीमार हैं, ये एक बड़ी रहमत और एक सच्ची खुशी है इन लफ़्ज़ों को सुनकर।

ये अच्छी तरह जान लो, के दुनिया में नमाज़ का दर्जा उस ऊँची सन्द के बराबर है के आखिरत में अल्लाह तआला को देखना।इस दुनिया में, आदमी का अल्लाह तआला से कुरबत का वक्त वो है जब वो नमाज़ अदा करता है।आखिरत में, ये वक्त है जब वो अल्लाह तआला को देखता है।

इस दुनिया में सारी किस्म की इबादतें आदमी को उस हालत में मोड़ने के लिए है जिसमे वो नमाज़ अदा कर सकता है।असली मकसद नमाज़ अदा करना है।एक शख़्स लामहदूद खुशी और अबदी रहमतें सिर्फ़ नमाज़ अदा करके हासिल कर सकता है।

नमाज़ सारी दूसरी इबादतों और रोज़े से कीमती है। कुछ खास **नमाज़ें** टूटे दिलों को खुशी से भरती हैं। कुछ **नमाज़** गुनाहों को तबाह करती हैं, आदमी को बुराई से परे रखती हैं। एक हदीस-ए शरीफ़ से वाज़ेह हैः 'नमाज़ मेरे दिल की शादमानी है, ये खुशियों का ज़रिया है।' **नमाज़** परेशान रूहों को मज़ा देने वाली है। नमाज़ रूह की ग़िज़ा है। **नमाज़** दिलों का इलाज है। नमाज़ में कभी ऐसा वक्त आ जाता है के एक शख़्स की ज़बान एक पेड़ की तरह हो जाती है जो मूसा अलैहिस-सलाम से बातें करती है।

इमाम-ए रब्बानी "रहमतुल्लाही अलैह" ने अपनी किताब (मकतूबात) की पहली जिल्द के दो सौ सढ़सठ्ठ खत में लिखाः

बेशक ये ज़रूरी है के फिकह के उसूलों [यानी, काम या मुमानियतें जो हमारे मज़हब के ज़रिए हुकूम किए गए] को याद/सीखना चाहिए ईमान और एतिकाद को सही करके [अकीदे ईमान रखे जाएँ] एक शख़्स को, जितना ज़्यादा उसकी हालात की ज़रूरत हो, फराईज़, वाजिबात, हलाल और हराम, सुन्नतें और मकरूहात और मुश्तबह चीज़ों को सीखना चाहिए और उसे इस इल्म के मुताबिक काम करना चाहिए। ये हर एक मुसलमान के लिए ज़रूरी है के फ़िकह की किताबों में जो इल्म है उसे सीखें। [उनको जाने बग़ैर, एक शख़्स मुसलमान नहीं हो सकता।] एक शख़्स को अल्लाह तआला के अहकामात को करने की कोशिश करनी चाहिए और जो तरीका उसे खुश करे उसमें ज़िंदगी गुज़ारे। चीज़ें जो उसे सबसे ज़्यादा पसंद हैं और उसने सबसे ज़्यादा हुकूम दिया है वो है पाँच वक्त की रोज़ाना की नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त में अदा करना। नमाज़ मज़हब का सुतून है। मैं कुछ चीज़ें नमाज़ की अहमियत के बारे में बता रहा हूँ और किस तरह इसे अदा करते हैं। ग़ौर से सुनो! सबसे पहले, एक शख़्स को रस्मी वुज़ू करना है जोकि पूरे तौर पर सुन्नत के लायक/मुताबिक हो [यानी, जो फ़िकह की किताबों में लिखा है।] एक शख़्स अपने अज़ा को तीन बार धोने की तरफ़ खास ध्यान दे जेकि रस्मी वुज़ू करते वक्त धोना

चाहिए और उसके हर हिस्से को पूरे तरीके से धोना चाहिए। इस तरह, एक शख़्स को रसमी वुज़ू ऐसे अदा करना चाहिए जो सुन्नत के मुक़ाबले हो। जबकि एक शख़्स अपने सिर का मसह कर रहा हो, तो उसे अपने हाथों को पूरे सिर पर मलना चाहिए। एक शख़्स को अपने कानों और गले का मसह भी अच्छी तरह करना चाहिए। पंजों के बीच में तखलील की जाए, [यानी, पंजों के बीच के हिस्सों को साफ़ करते वक्त], तो एक शख़्स को अपने उल्टे हाथ की छोटी उंगली को पंजों के नीचे से फिराना चाहिए। एक शख़्स को इस बात को अहमियत देनी चाहिए, उसे इस बात को ये कहते हुए नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए के ये मुसतहब है। एक शख़्स को मुस्तहबात को हल्का नहीं समझना चाहिए। ये चीज़ें हैं जो अल्लाह तआला को बहुत पसंद है। अगर ये पता चल जाते के खास काम जो उसे प्यारे हैं वो पूरी दुनिया को कुरबान करके अदा किए जा सकते हैं, तो जो कोई भी ऐसा करता वो बहुत ज़्यादा मुनाफ़ा कमाता, इस तरह के एक कीमती हीरा हासिल करता टूटे हुए गुलदान के कुछ टुकड़ों के बदले में, या अपनी प्यारी मरी हुई जान को जिलाता मुट्ठी भर चिकने पत्थरों के देने के बदले में।

नमाज़ ईमान वाले की मेराज [चढ़ाई] है। यानी, नएमतें जो हमारे पैग़म्बर "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" को मेराज की रात में बख़्शी गई वो आपकी उम्मत [कौम] के ज़रिए इसी दुनिया में चख ली जाएंगी वो भी सिर्फ़ नमाज़ के ज़रिए। आदमियों को कोशिश करनी चाहिए के फ़र्ज़ रस्मी नमाज़ें जमाअत से अदा करें और उन्हें इमाम के साथ पहली तकबीर में शामिल होने का मौका भी नहीं छोड़ना चाहिए। [ये औरतों के लिए गुनाह से भरा है के मस्जिदों में आदमियों के साथ मिले जमाअत से नमाज़ अदा करने के लिए या उन लोगों को सुनने के लिए जो कुरआन अल-करीम की तिलावत करें या मक्लीद सुनने के लिए या खासतौर-जुमें की नमाज़ों में जाना सवाब कमाने के लिए।]

एक शख़्स के लिए ये ज़रूरी है के नमाज़ों को उनके मुकर्रर औकात में अदा करें [और ये जानना के वो उनके मुकर्रर वक्त में अदा हो गई।] [जबकि अकेले, एक शख़्स हर नमाज़ उसके मुकर्रर वक्त के शुरू में ही पढ़ले और एक शख़्स असर और इशा की नमाज़ें इमाम-ए आज़म की खबर के मुताबिक अदा करे। एक नमाज़ देर से अदा की गई, तो उसका ईनाम भी कम होगा। मुसतहब वक्त है नमाज़ को जमाअत में अदा करना, मस्जिद में जाने के लिए। अगर एक नमाज़ का मुकर्रर वक्त निकल जाए बग़ैर उसे अदा किए हुए, तो एक शख़्स इस तरह गुनहगार हो जाएगा जैसे अगर उसने एक आदमी का कत्ल कर दिया हो। ये गुनाह माफ़ नहीं किया जा सकता उस शख़्स के ज़रिए उस नमाज़ की कज़ा अदा करके भी। इस मामले में, सिर्फ उसका कर्ज़ा अदा होता है। इस गुनाह को माफ़ किए जाने के लिए, एक शख़्स को तौबा-ए न सूह या हज-ए मबरूर करना होगा। **(इबन-ए आबिदीन)**।]

नमाज़ में, एक शख़्स को इतना कुरआन अल-करीम पढ़ना चाहिए जितना के सुन्नत है। हर हालत के नीचे, एक शख़्स को रूकू और सज्दों में बेहरकत रहना है। क्योंकि, या तो ये फर्ज़ है या वाजिब। जब एक शख़्स रूकू से सीधा होता है, तो उसे इतना सीधा खड़ा होना चाहिए के उसकी सारी हडिडयाँ अपनी कुदरती जगह पर हों। ये कहा जाता है के इसके बाद, एक लम्हे के लिए ऐसा खड़ा होना फर्ज़, वाजिब या सुन्नत है। इसी तरह, दो सज्दों के बीच में बैठने का वकफ़ा है। एक शख़्स को हर हालत में इन चीज़ों पर बहुत ध्यान देना है। रूकू और सज्दों में कम अस कम तीन बार तसबीहात पढ़नी चाहिए। ज़्यादा से ज़्यादा उनका नम्बर सात या ग्यारह हो सकता है। इमाम के लिए, ये जमाअत की हालत पर मुनहसिर करता है। एक मज़बूत आदमी के लिए कितने शर्म की बात है, के जबकि वो किसी मुश्किल में न हो, तसबीहात को उसके कम से कम नम्बर पर पढ़ना, जबकि वो नमाज़ अकेले पढ़ रहा हो [जमाअत में इमाम के साथ शरीक न हो]। एक शख़्स को उसे कम से कम पाँच

बार कहना चाहिए। जबकि सज्दा कर रहे हो, तो एक शख़्स को पहले अपने वो अज़ा ज़मीन पर रखने चाहिए जो ज़मीन के नज़दीक हों। इसलिए, सबसे पहले घुटनों, फिर हाथों को, फिर नाक को और आखिर में माथे को ज़मीन पर रखना चाहिए। सज्दे से उठते वक्त, जो अज़ा ऊपरी सतह पर हों उन्हें पहले उठाना चाहिए। इसलिए, सबसे पहले माथे को उठाना चाहिए। जब एक शख़्स खड़ा हो, तो उसे अपने सज्दे की जगह पर देखना चाहिए, जब एक शख़्स रूकू में हों तो उसे अपने पैरों को देखना चाहिए, जब एक शख़्स सज्दे में हो उसे अपनी नाक की नौक को, देखना चाहिए, और जबकि वो बैठा हुआ हो तो उसे अपने हाथों या अपने पेट को देखना चाहिए। अगर एक शख़्स इन सब जगहों को देखता है जो मैंने बताई हैं और आँखे इधर उधर न घूमी हों, तो नमाज़ जमाअत के साथ अदा की गई। यानी, दिल भी दुनियावी सोचों से खाली हो। खुशूअ [गहरा और आजिज़ अदब] हासिल हुआ। दरहकीकत, हमारे पैग़म्बर "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने ऐसा फरमाया था। रूकू के वक्त उंगलियों को खोलना और सज्दों के वक्त उन्हें बंद कर लेना सुन्नत है। एक शख़्स इन दोनों की तरफ़ भी ध्यान देना चाहिए। उंगलियों को खोलना या बंद करना बग़ैर वजह के नहीं है, ना ही खाली चीज़ है। इस्लाम के मालिक [यानी, हमारे पैग़म्बर "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम"] उनके फ़ायदों को सोचते हुए ऐसा करते थे। हमारे लिए, इससे बड़ा फ़ाएदा कोई नहीं के इस्लाम के मालिक "अलैहिस्सलेवातु वसल्लाम" की तकलीद की जाए। ये चीज़ें जो मैं तुम्हें बता रहा हूँ आगे बढ़ाने के लिए, तुम से तकाज़ा कर रहा हूँ इन चीज़ों को करने के लिए जो फिकह की किताबों में बताई गई हैं। अल्लाह तआला हमें और तुम्हें इन पाक चीज़ों को हासिल करके करने के काबिल बनाए जो इस्लाम के मालिक के ज़रिए दिखाई गईं। सब से अफ़ज़ल, सब नबियों से बहतर "अलैहि व अलैहिम व अला आलि कुल्लिन मिनससलेवाति अफ़ज़ालुहू व मिनततसलीमाती अकमलुहू," वो मेरी इस दुआ को कुबूल फरमाए! आमीन।

इमाम-ए रब्बानी "रहमतुल्लाही अलैह" ने अपनी किताब (मकतूबात) की दूसरी जिल्द के उन्सठवें खत में लिखाः

"अल्लाह तआला पर हम्द हो! सलाम हो [अदाब] और उसके गुलामों पर आसानी हो जिन्हें वो चुने और वो चाहे प्यार करे! तुम्हारा खत पहुँच गया। ये समझ आ गया के हमारे दोस्तों ने सीधा रास्ता नहीं छोड़ा और हम खुश हैं। अल्लाह तआला तुम्हारे वस्फ़ को जो सही है और तुम्हारे सही रास्ते पर कयाम को और ज़्यादा बढ़ाए! "हम और हमारे दोस्त उस फर्ज़ को जारी रखे हुए हैं जो आपने हमें सोंपी थी। हम हर दिन पाँच वक्त की नमाज़ें पचास से साठ लोगों तक की जमाअत से अदा कर रहे हैं," आप बताइए। अल्लाह तआला पर सारी हमद-ओ सना इसके लिए! कितनी बड़ी नएमत है ये के दिल अल्लाह तआला के साथ है और जिस्म, एक साथ सारे अज़ा के साथ शरीअत [इस्लाम] के उसूलों को करना और खुबसूरत बनाता है। उन औकात में, ज़्यादातर लोग नमाज़ अदा करने में सुस्त हैं। इस वजह से, इस मामले में, मेरे प्यारों, मैं तुम्हें खबरदार कर रहा हूँ। ग़ौर से सुनो! हमारे पैग़म्बर "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने फरमायाः "**सबसे बुरा चोर वो है जो अपनी ही नमाज़ में से चोरी करे।**" उन्होने पूछा, "या रसूलुल्लाह! किस तरह एक शख़्स अपनी नमाज़ में से चुरा सकता है?" आपने कहा, "**नमाज़ का रूकू और सज्दा सही तरीके से अदा न करने पर।**" एक दूसरे वक्त में आपने वाज़ेह कियाः "**अल्लाह तआला उस शख़्स की नमाज़ कुबूल नहीं करता जो अपनी कमर उसकी सही हालत में नहीं लाता और रूकू और सज्दे में थोड़े वक्फ़े के लिए ऐसा नहीं रहता।**" एक बार, एक शख़्स को रूकू और सज्दा सही अदा न करते हुए देखकर जबकि नमाज़ अदा कर रहा था, हमारे पैग़म्बर ने फरमाया; "**क्या तुम्हें डर नहीं लगता के तुम किसी और मज़हब में मर जाओगे बजाए मौहम्मद** "अलैहिस्सलातु वस्सलाम" **के दीन [मज़हब] में क्योंकि तुम अपनी नमाज़ की इबादत इस तरह कर रहे हो?**" एक बार दोबारा, आपने कहा, "**जब नमाज़ अदा कर रहे हो,**

अगर तुम अपने जिस्म को पूरी तरह सीधा नहीं करते रूकू के बाद, अगर तुम्हारा हर एक अज़ा अपनी हालतों में आराम नहीं करता एक लम्हें के लिए जब तुम खड़े हो, तो तुम्हारी नमाज़ पूरी नहीं होगी।" एक बार दोबारा, आपने फरमाया, "**जबतक के तुम दो सज्दों के बीच में सीधे नहीं बैठते तो तुम्हारी नमाज़ अधूरी रहेगी।**" एक दिन, किसी को देखते हुए जो रूकन के उसूलों का ध्यान नहीं रख रहा था [नमाज़ के पाँच फराईज़ जो नमाज़ के अंदर हैं। इन पाँच फराईज़ में से हर एक "रूकन" कहलाता है] नमाज़ अदा करते हुए, रूकू के बाद सीधा नहीं खड़ा हुआ और सज्दों के बीच सीधा नहीं बैठा, तो हमारे पैग़म्बर "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने फरमाया, "**अगर तुम इस तरह अपनी नमाज़ अदा करते रहे, तो ज़िंदा किए जाने वाले दिन तुम्हें मेरी उम्मत का नहीं कहा जाएगा।**" एक दूसरे वक्त में आपने फरमाया, "**अगर तुम इसी तरीके पर चलते रहे और मर गए, तो तुम मौहम्मद (अलैहिस्सलाम) के मज़हब में नहीं मरोगे।**" अबू हुरेरा (रज़ी-अल्लाहु अन्ह) ने कहा, "वो शख़्स साठ सालों तक सारी नमाज़ें पढ़ता रहा लेकिन उसकी नमाज़ कभी भी क़ुबूल नही हुई ये वो शख़्स है जिसने रूकू और सज्दा सही नहीं किया।" ज़ैद इबनि वहाब "रहमतुल्लाही तआला अलैहि" ने किसी को देखा नमाज़ अदा करते हुए लेकिन वो रूकू और सज्दा सही नहीं कर रहा था। उन्होने उसे बाहर बुलाया और उससे पूछा, "कितने अरसे से तुम इस तरीके से नमाज़ अदा कर रहे हो?" जब उसने जवाब दिया, "चालीस सालों से," तो उन्होने कहा, "तुम ने चालीस साल तक नमाज़ अदा नहीं की। अब अगर तुम मर गए तो तुम मुहम्मद रसूलुल्लाह "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" की सुन्नत (यानी, मज़हब) में नहीं मरोगे।

ये तबरानी के ज़रिए **अवसात** किताब में लिखा है के अगर एक ईमान वाला अपनी नमाज़ खुबसूरती के साथ अदा करता है और उसके रूकू और सज्दे सही ढंग से करता है, तो नमाज़ खुश होती है और चमक से भर जाती है। फरिश्ते नमाज़ को जन्नत तक ले जाते हैं। नमाज़ एक शख़्स पर सलामती

भेजती है जिसने उसे अदा किया हो और कहेगी, “जैसे के तुमने मुझे नुक्स से बचाया, इसी तरह अल्लाह तआला तुम्हारी हिफ़ाज़त करे।” अगर नमाज़ सही ढंग से अदा न की जाए, तो ये काली हो जाती है। फरिश्ते उस नमाज़ से सख़्त नफ़रत करते हैं और उसे आसमानों तक नहीं ले जाते। ये नमाज़ उस शख़्स को बददुआ देती है जिसने इसे अदा किया हो और कहेगी, “जैसे के तुमने मुझे बरबाद किया और मुझे गंदे मकाम पर रखा, इसी तरह अल्लाह तुझे बरबाद करे।” फिर, हमें अपनी नमाज़ें सही तरह से अदा करने की कोशिश करनी चाहिए, **तादील-ए अरकान** का ध्यान रखते हुए, **रूकू, सजदा, कौमा** [रूकू के बाद सीधे और बेहतर खड़े होना।] और **जलसा [दो सज्दों के बीच में एक लम्हे के लिए बैठना।]** अच्छे से करना चाहिए। और, हमें दूसरों को खबरदार करना चाहिए अगर हम उन्हें इनको नुक्स के साथ करते हुए देखें। हमें अपने बरादरान-ए इस्लाम को नमाज़ सही अदा करने में मदद करनी चाहिए। हमें तादील-ए अरकान [इतना लम्बा बेहरकत रहना जितना के “सुब्हानल्लाह” कहा जाए] और तमानीनात [अपने सारे अज़ा को बेहरकत रखना] का ध्यान रखते हुए मिसाल बनना चाहिए। ज़्यादा मुसलमान अपने आपको इन सबको करने की ताज़ीम से महरूम रखते हैं। ये रहमत पहले से ही खो गई। ये बहुत अहम के इस अच्छे काम को दोबारा शुरू किया जाए। हमारे पैग़म्बर ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ ने फरमायाः “**वो जो मेरी भुलाई हुई सुन्नतों में से किसी एक को भी दोबारा तजदीद करेगा उसे सौ शहीदों का सवाब मिलेगा।**”

इसके अलावा, जब हम जमाअत में नमाज़ अदा करते हैं तो सफहों को तरतीब से लगाने में मुहतात होते हैं। हम जिस सफ़ में खड़े होते हैं न तो उससे आगे होते है और नाही पीछे। हर कोई एक सी सीधी सफ़ में खड़ा होना चाहता है। हमारे पैग़म्बर ‘सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम’ पहले ख़ुद सफ़े सीधी करते थे और फिर नमाज़ शुरू करते थे। आप फरमाते थे, “**सफ़ों को सीधा करना नमाज़ का एक हिस्सा है।**” ए हमारे अल्लाह! अपनी शफ़क़त के

लामहदूद ख़ज़ाने से हमें भी हिस्सा दे! हम में से किसी को भी सीधे रास्ते से न भटकने देना!

अगर एक मुसलमान इस दुनिया में कदर चाहता है और आखिरत में खुश रहना चाहता है, तो उसमें ये तीन अख़्लाक होने चाहिएँः

दूसरे बंदों से कुछ उम्मीद न रखें। मुसलमानों की चुगली न करें [या ज़िम्मी बग़ैर ईमान वालों की, चाहे अगर वो मर भी गए हों]। किसी चीज़ पर कबज़ा न रखें जिस पर के किसी दूसरे का हक़ हो।

नमाज़ के राज़

हज़रत इमाम-ए रब्बानी ने अपनी (**मकतूबात**) की पहली जिल्द के तीन सौ-चौथे खत में लिखाः अल्लाह तआला का शुक्र अदा करने के बाद और अपनी दुआएँ हमारे पैग़म्बर की रूह को पहुँचाकर, मैने तुम्हारे लिए रहमत माँगी ताकि तुम लामहदूद खुशियाँ हासिल कर सको। बहुत सारी आयत-ए करीमा में, अल्लाह तआला ने वाज़ेह किया के वो ईमान वाले जो आमाल-ए सालिह (नैक काम) करते हैं वो जन्नत में दाखिल होंगे। मैं इतने दिनों से इस को ढूँढने में लगा हूँ के वो नैक काम कौन से होंगे। मैं हैरान हूँ के वो सारे नैक काम होंगे या उनमें से सिर्फ़ कुछ होंगे। अगर वो सारे अच्छे काम हैं, तो कोई भी उनको सारा नहीं करेगा। अगर उनमें से कुछ ही हैं, तो वो अच्छे काम क्या थे? आखिरकार, अल्लाह तआला ने मुझे समझदारी के अमर से नएमम दी के ये सालिह काम पाँच बंधे हुए उसूल हैं, पाँच इस्लाम के बुनियादी सुतून। अगर एक शख़्स इन इस्लाम के पाँच सुतूनों को पूरे तौर पर और कामिल तरीके से करता है, तो शायद वो दोज़ख से बच जाए। ये असली सालिह काम हैं और आदमी को गुनाह करने से और नागवार हरकतें करने से बचाते हैं। दरहकीकत, कुरआन-अल करीम की सूरत-उल-अंकबूत की पैंतालिसवीं आयत में वाज़ेह हैः

“**एक नमाज़ की इबादत मुकम्मल तरीके से अदा की गई बेशक आदमी को फहशा (बुरे) और मुंकर (हकीर हरकातें) करने के खिलाफ़ बचाती हैं।**” अगर ये एक शख़्स के नसीब में हो के इस्लाम के पाँच उसूलों को आगे बढ़ाए, तो वो इस रहमत के लिए शुक्रिया ज़ाहिर करे। सूरत-उन-निसा की एक सौ और छयालीसवीं आयत का मतलब हैः “**मैं तुम्हें अज़ाब नहीं दूँगा अगर तुम ईमान रखते हो और मेरा शुक्रिया करते हो।**” फिर, एक शख़्स पूरे मन से इस्लाम के इन पाँच उसूलों को आगे बढ़ाएगा।

इन पाँच में से, नमाज़ सबसे अहम है। ये मज़हब का बुनियादी सुतून है। एक शख़्स को कोशिश करनी चाहिए के नमाज़ के एक भी अदाब को खोए नहीं। अगर नमाज़ सही तरीके से अदा होगी, तो बुनियादी और सबसे बड़ा इस्लाम का सुतून कायम होगा। मज़बूत रस्सी जो एक शख़्स को दोज़ख से बचाएगी उसे पकड़ लिया जाए। अल्लाह तआला हम सब पर अपनी रहमत बनाए नमाज़ को सही अदा करने के साथ!

जब नमाज़ शुरू करें, “**अल्लाहु अकबर**” कहकर इसका मतलब इस बात का इकरार करना के “अल्लाह तआला को अपने किसी बंदे की इबादत की ज़रूरत नहीं है; उसे किसी भी मामले में किसी भी चीज़ की ज़रूरत नहीं है; आदमियों का नमाज़ पढ़ना उसे कोई फ़ाएदा नहीं देता।” और तकबीरें (“अल्लाहु अकबर” कहना) जो नमाज़ में हैं वो बताती हैं के, “हम अल्लाह तआला के लायक इबादत करने के काबिल नहीं हैं।” चुँकि रूकू की तसबीहात (नमाज़ अदा करते वक्त झुकना) यही मतलब रखती हैं, हमें “अल्लाहु अकबर” कहने का हुकूम नहीं है, जब रूकू से सीधे खड़े होते हैं। बहरहाल, हमें सज्दे (नीचे झुक जाना) में तसबीहात के बाद इसे कहने का हुकूम है, क्योंकि सज्दा सबसे निचला आजज़ी का अदना और रूतबा घटाने का दर्जा है। इसे करके एक शख़्स को ये मान लेना चाहिए के उसने सही और मुकम्मल इबादत की है। इस अरकल से अपने आपको बचाने के लिए, ये न

सिर्फ़ एक सुन्नत है तकबी कहना जब झुको और सीधे खड़े हो इन सज्दों के दौरान, लेकिन हमें "अला" कहने का भी हुकूम है सज्दे की तसबीहात में। क्योंकि नमाज़ एक ईमान वाले की मेराज है, हमें हुकूम दिया गया है "अततहिय्यातु..." के लफ़्ज़ों को कहने का जिन्हें हमारे पैग़म्बर को कहने की इज़्ज़त बख्शी गई मेराज की रात में। फिर, एक शख़्स जो नमाज़ अदा करता है उसे नमाज़ को अपने लिए एक मेराज बना लेना चाहिए। उसे अल्लाह तआला से नज़दीकी का आखिरी नमाज़ में देखना चाहिए।

हमारे पैग़म्बर (अलैहिस्सलाम) ने वाज़ेह कियाः "**वो वक्त जब आदमी अल्लाह से नज़दीक होता है वो वक्त है जब वो नमाज़ अदा करता है।**" एक शख़्स जो नमाज़ अदा करता है वो अपने अल्लाह से बातें करता है, उससे मिन्नत करता है, और देखता है के उसके अलावा हर चीज़ किसी के बराबर नहीं। इसलिए, क्योंकि नमाज़ में डर है, हैबत है, और दहशत है, हमें हुकूम दिया गया के नमाज़ के आखिर में हम दो बार सलाम पैश करें ताकि हमें तसल्ली और आराम मिले।

हमारे पैग़म्बर ने हुकूम दिया, एक हदीस-ए शरीफ़ में, तिलावत करने कीः "**33 तसबीह (सुब्हानल्लाह), 33 तहमीद (अलहम्दुलिल्लाह), 33 तकबीर (अल्लाहु अकबर) और एक तहलील (ला इलाहा इल्ल-अल्लाह) हर फर्ज़ नमाज़ के बाद।**" इसकी वजह ये है के नमाज़ अदा करने में नुक्स तसबीह के साथ ढक जाते हैं। इस तरीके से ये इकरार कर लिया जाता है के एक लायक या मुकम्मल इबादत नहीं की गई। ये जानकर के नमाज़ अदा करके रहमत हासिल होना उसकी मदद के ज़रिए और वही इसे मुमकिन बनाएगा, इस बड़ी रहमत के लिए उसका शुक्रिया अदा किया जाता है **तहमीद** कहने के ज़रिए। और **तकबीर** कहने से, इस बात का इकरार होता है के उसके बराबर कोई इबादत किए जाने के लायक नहीं है।

जब एक शख़्स नमाज़ अदा करता है उसकी शराइत और अदाब के साथ, और ताहम, जो गलतियाँ की जाए वो ढक ली जाएँ, जब एक शख़्स अल्लाह तआला का शुक्रिया अदा करता है के उसने नमाज़ बख्शी, जब वो वाज़ेह करता है, कलिमा-ए तौहीद दिल से संजीदगी के साथ पढ़के, के कोई नहीं सिर्फ़ अल्लाह तआला इबादत के लायक है, वो नमाज़ कुबूल हो सकती है। वो शख़्स उनमें से बन जाता है जो नमाज़ अदा करते हैं और जो निजात पाते हैं। ए मेरे रब! तेरे पैग़म्बरों में से सबसे अफ़ज़ल की रज़ा के लिए "अलैहि व अला अलैहिमुस्सलावातु वतसलीमात," हमें अपने खुशकिस्मत बंदों में से जो नमाज़ अदा करते हैं और जो निजात हासिल करते हैं! आमीन (आमेन)

हज़रत इमाम-ए मुहम्मद मासूम ने अपनी (मकतूबात) की दूसरी जिल्द के ग्यारहवें खत में लिखाः

अल्लाह तआला इंसानों को बग़ैर दिमाग़ के तरीके पर रहने के लिए नहीं छोड़ता। वो उन्हें इजाज़त नहीं देता के वो जो चाहे करते फिरें। वो उन्हें नहीं चाहता के वो अपनी नफ़स की इच्छाओं के ताबेदार बनें, उनके कुदरती, वहशी मज़ों को ज़्यादती और बेअकल तरीके से करने पर और तबाहियों में घिर जाएँ। वो उन्हें रास्ता दिखाता है के अपनी इच्छाओं और खुशियों को किस तरह इस्तेमाल करें आराम और अमन से रहने के लिए और वो उन्हें फाएदेमंद चीज़ें करने का हुकूम देता है जो दुनिया में और आखिरत में खुशी का बाइस बने। वो उन्हें नुकसान वाले काम करने की मुमानियत करता है। ये अहकामात और मुमानियतें **(अहकाम-ए इस्लामिया)** कहलाती हैं। एक शख़्स जो चाहता है के दुनिया में आराम से रहे और जो बेहद खुशियाँ चाहता है उसके पास कोई और रास्ता नहीं हैं सिवाए इस्लाम की ताबेदारी के। एक शख़्स को अपने नफ़स और अपनी फितरत की इच्छाओं को छोड़ना होगा वो सब इस्लाम के मुताबिक नहीं हैं। अगर वो इस्लाम को नहीं मानता, वो अपने खालिक का गुस्सा और अज़ाब सहेगा। अल्लाह तआला का एक बंदा जो इस्लाम की फरमाबरदारी

करता है, चाहे वो एक मुसलमान हो या काफ़िर, वो इस दुनिया में खुश और आराम से रहेगा। उसका मालिक उसकी मदद करेगा। ये दुनिया खेती की जगह है। वो जो खेत में काम नहीं करेगा, जो दुनियावी खुशियों में जिएगा बीजों को खाकर, उसे फसल नहीं मिलेगी। इसी तरह, वो जो दुनिया में अपनी ज़िंदगी गुज़ार रहा है आरज़ी खुशियों के चक्कर में, अपनी नफ़स की इच्छओं को ज़रूरत से ज़्यादा और बेअकल तरीके से मुतमईन करेगा, उसे अवदी खुशियाँ और लामहदूद मज़ें नहीं मिलेंगे। ये हालत ऐसी नहीं है के कोई समझदार आदमी इसे कुबूल करले। वो ये नहीं चाहेगा के आरज़ी मज़ें नुकसानदायक तरीके से लिए जाएँ, जो उसे लामहदूद खुशियाँ हासिल करने से परे रखेंगे। [अल्लाह तआला ने न तो बंद किया है, नाही कोई चीज़ दुनियावी मज़ों से मना की है, वो चीज़ों जो नफस को मठिए महसूस होती हों। वो उन्हें उनका इस्तेमाल करने देता है, सिर्फ अगर वो इस्लाम के काबिल हैं तो, बग़ैर नुकसान पहुचाएँ।] इस्लाम को सही तरीके से मानने के लिए, पहले, एक शख़्स को ये यकीन होना चाहिए **(अकाईद)** [ईमान] के मुताबिक जोकि **अहल-ए अस सुन्नत के आलिमों** ने असहाब-ए किराम से सीखा और जो उन्होने कुरआन अल करीम और हदीस-ए शरीफ़ से समझा, फिर, एक शख़्स को सीखना चाहिए के हराम क्या है, वो चीज़ें जो मना की गई हैं और उनसे दूर रहें, और फिर एक शख्स को फर्ज़ सीखने चाहिए जिनका हुकूम दिया गया है करने का और उन्हें करना चाहिए। ये करना **(इबादत)** किया जाना कहलाता है। उससे रोकना जो हराम है इसे **(तक़वा)** कहते हैं।

इस्लाम के उसूलों की तावेदारी करना नीयत करके ऐसा करना **इबादत करना** [ताज़ीम देना] कहलाता है। एहकामात और मुमानियतें अल्लाह तआला की **(अहकाम-ए इस्लामिया)** या **(अहकाम-ए इलाहिया)** कहलाती हैं। वो जो हुकूम दिए गए हैं वो फर्ज़ कहलाते हैं, वो जो मुमानियत किए गए हैं वो हराम हैं। सबसे ज़्यादा कीमती इबादत का काम और मज़हब-ए इस्लाम की बुनियाद

रोज़ाना की पाँच वक्त की नमाज़ अदा करना है।[नमाज़ अदा करने का मतलब है के फातिहा को किब्ले की तरफ़ रूक करके खड़े होकर पढ़ना, किब्ले की तरफ़ झुकना और किब्ले की तरफ़ ही सिर को ज़मीन पर रखना।अगर एक शख़्स ये सारी चीज़ें किब्ले की तरफ़ रूख करके नहीं करता तो, ये नमाज़ की अदाएगी नहीं है।] एक शख़्स जो नमाज़ अदा करता है वो मुसलमान है।वो जो नमाज़ अदा नहीं करता वो या तो एक मुसलमान है या काफ़िर।पाक नज़दीकी [यानी, अल्लाह तआला का प्यार हासिल करना] जोकि नमाज़ अदा करके हासिल की जाए वो कभी कभार ही दूसरे इबादत के काम करके हासिल होगी।एक शख़्स को रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ें अदा करनी चाहिए दुनियावी मामलात को न सोचते हुए, जमाअत में और तादील-ए अरकान का ध्यान रखते हुए, और रस्मी वुज़ू पूरे ध्यान से करते हुए, उनके मुस्तहब औकात में।जबकि नमाज़ अदा की जाती है, तो अल्लाह तआला और उसके बंदे के बीच से परदें हट जाते हैं।एक शख़्स जो रोज़ाना पाँच वक्त की नमाज़ें अदा करता है वो गुनाहों से उस शख़्स की तरह पाक हो जाता है जो अपने आपको दिन में पाँच बार धोए।एक शख़्स जो रोज़ाना की पाँचो नमाज़ें सही अदा करे उसे सौ शहीदों का सवाब मिलता है।

एक शख़्स को अपनी इच्छा से करोबारी जाएदाद से और जानवरों की जो मैदानों में चरते हैं [और काश्त की जिसे फार्म की ज़मीनों और पेड़ों से हासिल किया जाता है और कागज़ी पैसा और हासिल किए हुए पर] ज़कात देनी चाहिए उनको जो ज़कात लेने के लिए मुस्तहिक हैं।एक जाएदाद जिसकी ज़कात नहीं दी जाती वो दोज़ख में जलेगी।अल्लाह तआला बहुत रहम वाला है, वो जाएदाद की ज़कात देना का हुकूम देता है जो ज़रूरी कीमत से परे है

एक साल बाद, अगर वो निसाब की कीमत को पहुँच जाए।वो जो जान और माल देने वाला है।अगर वो हुकूम दे के सारी जान और माल दे दो, तो वो जो उससे प्यार करते हैं फौरन उन्हें दे देंगे।

एक शख़्स रमज़ान के मुबारक महीने में मर्ज़ी से रोज़ा रखता है, इस वजह से के अल्लाह तआला ने इसका हुकूम दिया। एक शख़्स को जानना चाहिए के ये भूख और प्यास एक खुशी है। इस्लाम का ढाँचा पाँच चीज़ें हैंः पहला है **(अशहदु अल-ला-इला-ह-इल्लल्लाहु व अशहदु अन-न मुहम्मदन अबदुहू व रसूलुहू)** कहना, उसको जानना और उसके मआनी पर यकीन रखना। इसे **(कलिमए शहादत)** कहते हैं। दूसरे चार हैं नमाज़, ज़कात, रोज़ा और हज। अगर इन पाँच सुतूनों में से कोई एक भी गलत हुआ, तो उस शख़्स का इस्लाम भी गलत होगा। अकीदे को सही करने के बाद और इस्लाम पर ग़ौर करते हुए, एक शख़्स सूफ़िया-ए अलिया [तसव्वुफ़ के आला आदमी] के रास्ते पर बढ़ सकता है। एक शख़्स इस रास्ते पर मारिफ़तुल्लाह हासिल कर सकता है और एक शख़्स अपने नफस की इच्छाओं से पीछा छुड़ा सकता है। एक शख़्स जो अपने मालिक को नहीं जानता, वो किस तरह ज़िन्दा रह सकता है, वो किस तरह आराम पा सकता है! इस रास्ते पर मारिफ़त हासिल करने के लिए, **(फना बिल-मारूफ़)** ज़रूरी है। यानी, ये ज़रूरी है के सब चीज़ें भूल जाए सिवाए अल्लाह तआला के। वो जो अपने आपको मौजूद समझता है मारिफ़त हासिल नहीं कर सकता। **(फ़ना)** और **(बक़ा)** एक शख़्स के ज़मीर में उसके दिल में ज़ाहिर होता है। ये सुनकर समझ नहीं आएगा। वो जो मारिफ़त की नएमत हासिल नहीं करता उसे हमेशा उसके लिए देखना चाहिए। एक शख़्स को किसी चीज़ को सुधारने की कोशिश नहीं करनी चाहिए जिसे एक शख़्स को हुकूम दिया गया हो के उसे कमतर और आरज़ी के रूप में देखे।

नमाज़ अदा करने के बाद दुआ करना

अलहम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन। अस्सलातु वस्सलामु अला रसूलिना मुहम्मदिन व आलिही व साहबिही अजमईन। या रब्बि! इस रस्मी नमाज़ को कुबुल कर जो मैने अदा की! मेरी आखिरी साँस को **कलिमत अश-शहादा**

कहने के लायक वना और ईमान के साथ मुझे दूसरी दुनिया में पहुँचा। जो मेरे रिश्तेदार मर गए हैं उन्हें सज़ा न दे और माफ़ कर दे। अल्लाहुम्मागफ़िर वरहम व अंता खैरूरराहिमीन। तवेफ़्फ़नी मुसलिमन वइलाहिकनी बिससालिहीन। अल्लाहुम्मग़फ़िर-ली व ली-वालिदेई व ली- उसताज़िए व लिलमुमिनीन वल मुमिनात यौमे यकूमुल हिसाव। या रब्बि! मुझे शैतान की बुराई, दुश्मनों की बुराई और मेरे नफ़स की बुराई से बचा (एक मंफ़ी ताकत आदमी के अंदर जो उसे बुराई करने के लिए उकसाती है)! हमारे घर को अच्छाई, हलाल और नैक साअत ग़िज़ा अता फरमा! मुसलमानों को निजात दे! मुसलमानों के दुश्मनों को दुखी और तितर बितर करदे! अपनी रूहानी मदद से मुसलमानों की मदद कर जो काफ़िरों के खिलाफ़ जिहाद कर रहे हैं! अल्लाहुम्मा इन्नाका अफ़वुन करीमुन तुहिब्बुल अफ़वा फ़ा फु अननी। या रब्बी! हमारे दरमियान जो बीमार हैं उन्हें सेहत अता फरमा, हमारे दरमियान जो मुश्किलों में उन्हें राहत अता फरमा। अल्लाहुम्मा इन्नी अस अलुकससिहहात वल-आफ़ियत वल-अमानते व हुस्नेलखुलकी वररिदाए बिलकादेरि बेरहमतेका या अरहमरराहिमीन। या रब्बी! एक मुफ़िद ज़िन्दगी, अच्छे अखलाक, सही दिमाग़, आफ़ियत (अच्छी सेहत) और इसतिकामत (सही, सच्चे रास्ते पर चलाना जिसे अल्लाह तआला पसंद करता है) अता फरमा, मेरे वालदैन और मेरे बच्चों को और मेरे रिश्तेदारों को ओर मेरे दोस्तों को और मेरे सारे मज़हवी भाइयों को। आमीन! वलहम्दुलिल्लाहि रब्बिलआलमीन। अल्लाहुम्मा सल्लि अला..., अल्ला हुम-म वारिक अला..., अल्ला हुम-म रब्बना आनि..., वल हम्दु लिल्लाही रब्बिआलमीन। अस्तखफ़ेरूल्लाह, अस्तखफ़ेरूल्लाह, अस्तखफ़ेरूल्लाह, अस्तखफ़ेरूल्लाहिल अज़ीम अलकरीम अल्लज़ी ला इल्लाह इल्ला होवुल-हय्युल-कय्यूम व अतूबु इलेह।

वज़ाहतः (दुआएँ कुबूल होने की शर्तें)

1- एक मुसलमान होना।

2- अहल-ए सुन्नत का अकीदा रखना।इसके लिए, ये ज़रूरी है के चार मसलकों में से एक की तकलीद करना।

3- फाराईज़ अदा करना।एक शख़्स को अपनी कज़ा नमाज़ों का कर्ज़ चुकाना होगा चाहे उन्हें रातों में और सुन्नत रस्मी नमाज़ों की जगह अदा करे।जिनकी फर्ज़ कज़ा नमाज़ें है उनकी सुन्नत और नाफ़िली नमाज़ें कुबूल नहीं होगीं।यानी, चाहे अगर वो सही हों, उन्हें कोई सवाब नहीं दिया जाएगा।मुसलमानों को धोका देने के लिए, शैतान, फर्ज़ो को ग़ैरअहम बताएगा और सुन्नत और नाफ़िलों को करने की तरफ़ रहनुमाई करेगा।एक शख़्स को नमाज़ उसके वाजिब वक्त के शुरू होते ही अदा कर लेनी चाहिए ये जानते हुए के उसका मुकर्रर वक्त आ गया है।

4- एक शख़्स को हराम को नज़रअंदाज़ करना चाहिए।जो हलाल खाना खाते हैं उनकी दुआएँ कुबूल होती हैं।

5- एक शख़्स अल्लाह तआला से दुआ मांगने में औलिया-ए किराम (जो अल्लाह तआला के ज़रिए चाहे गए और बचाए गए) में से एक को राब्ता बनाए।

मुहम्मद अहमद बिन ज़ाहिद, इंडिया में आलिमों में से एक ने अपनी किताब **(तरग़ीब-उस-सलात)** के चौव्वनवें सबक में फारसी ज़बान में कहाः "ये एक हदीस-ए शरीफ़ में बयान थाः **(दुआ के कुबूल होने के लिए वहाँ पर दो चीज़ें हैः पहली, एक शख़्स दुआएँ इखलास के साथ माँगे।दूसरी, जो एक शख़्स क्या खा रहा है और पहन रहा है हलाल होना चाहिए।एक ईमान वाले के कमरे में एक हराम का धागा है, उसकी दुआएँ जो उस कमरे में माँगी गई**

कभी कुबूल नहीं होगीं)। इख्लास का मतलब है अल्लाह तआला के अलावा किसी और चीज़ के बारे में न सोचना और सिर्फ अल्लाह तआला से चीज़ें माँगना। इस वजह से, ये ज़रूरी है के अहल-ए सुन्नत के आलिमों ने जो वाज़ेह किया उसके मुताबिक यकीन रखा जाए, खासतौर से बंदों के हुकूक दिए हों और पाँच रोज़ाना की नमाज़ें अदा की हों।

तजदीद-ए ईमान नमाज़

या रब्बी (ए मेरे अल्लाह)। मैं अफ़सोस करता हूँ, मैं माफ़ी चाहता हूँ अपने सारे गलत, खराब अकीदों की जो इस्लाम के दुश्मनों के ज़रिए और इलहदि लोगों के ज़रिए मेरे पास धोके से आई, और सारी बिदअती, गुनाह वाली चीज़ें जो मेने कही, मेने सुनी, मेने देखी और मेने की अपनी सने बलूग़त शुरू होने के बाद से इस लम्हे तक। मैं तजवीज़ करता हूँ, मुस्ततहकम हूँ और पक्का इरादा करता हूँ के उस गलत तरीके पर यकीन नहीं रखूगाँ और न ही काम करूंगा। पहले पैग़म्बर आदम अलैहिस्सलाम हैं और आखिरी पैग़म्बर हमारे नबी, हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम हैं। मैं दोनों पैग़म्बरों पर यकीन रखता हूँ और सारे पैग़म्बरों पर भी जो उनके बीच में गुज़रे। वो सारे सच्चे और सही हैं। उन्होने जो बताया वो सब सही है। आमन्तु बिल्लाहि व बि-मा जाए मिन इंज़िल्लाह, अला मुराज़िल्लाह, व आमन्तु बि-रसूलिल्लाह व-बि मा जाए मिन इन्ज़ि रसूलिल्लाह अलाह मुराद-ए रसूलिल्लाह, आमन्तु बिल्लाहि व मलाइ-कतिही व कुतुबिही व रसूलिही वल यौमिल आखिरि वल कद्रि ख़ैरिही वशर्रिही मिनल्लाहि तआला वल बअसि व-अ-दल मौत हक्कुन अशहदु अन ला इलाह इल्लल्लाह व अशहदु अन-न मुहम्मदन अबदुहु व रसूलुहु।

नमाज़ में पोशिदा असबाब
(नमाज़ और हमारी सेहत)

मुसलमान नमाज़ अदा करते हैं क्योंकि ये अल्लाह तआला का अहकाम है। वहाँ पर बहुत सारे छुपे हुए सबब, बहुत सारे फाएदे हैं हमारे रब के एहकामात में। बेशक, जो चीज़ें उसने मना की हैं उसमें बहुत नुकसान है। इनमें कुछ फ़ाएदे और नुकसानात आप के तिब्बी माहिरीन ने मालूम किए हैं। इस्लाम में जो अहमियत सहत से मुंसलिक की गई हैं वो किसी और मज़हब या फिलोसफ़ी से मेल नहीं खाती। हमारे मज़हब ने हमें हमारी ज़िंदगियों के खात्में तक, नमाज़ अदा करने का हुकूम दिया जो इबादतों में सबसे कीमती है। वो जो नमाज़ अदा करता है वो अपनी सहत के लिए भी फ़ाएदे हासिल करता है। कुछ नमाज़ के सहत के फाएदे नीचे बताए गए हैंः

1- नमाज़ में हरकात धीरे की जाती है इसलिए वो हमारे दिल को थकाती नहीं। चूँकि नमाज़ें एक दिन में मुखतलिफ़ औकात में अदा की जाती हैं, ये आदमी को हर वक्त चुस्त रखती हैं।

2- एक शख़्स का दिमाग़ जो अपने सिर को एक दिन में अस्सी बार ज़मीन पर रखता है उसके खून का दौरान बहाओ का वज़न बढ़ता है। क्योंकि उनके दिमाग़ के खलियों को अच्छी ग़िज़ा मिलती है इसलिए, याददाश्त और शख्सी नाहमवारी उनमें कम दिखाई देती है जो नमाज़ अदा करते हैं। ये लोग ज़्यादा सेहतमंद ज़िंदगी जीते हैं। उन्हें कोई पागलों वाली बीमारी नहीं होती, जिसे आज की तिब में बुढ़ापे की दिमाग़ की कमज़ोरी/बुढ़ापे का पागलपन कहते हैं।

3- नमाज़ की अदाएगी करने वाले की आँखों का दौराने खून नमाज़ के वज़नी हरकात की वजह से मज़बूत होता है।इस तरह, आँख के अंदरूनी हिस्से में खून का दवाओ नहीं बढ़ता और आँख के ऊपरी हिस्सों में बहने वाली शए लगातार पूरी भरी रहती है।ये आँखों को मोतिया बिंद की बीमारी से बचाता है।

4- रस्मी नमाज़ में हरकात में बराबरी से नापतोल खाने को पेट में मिलाती है, तैज़ाबी सफ़रे को आसानी से बाहर निकालती है और पित्ते में नुकसान के साथ शामिल नहीं होती।ये लबलबा में प्रोटीन को निकालने में मदद करती हैं।ये कब्ज़ को खत्म करने में बड़ा किरदार निभाती हैं।ये गुरदे और पैशाब की नाली को एक मददगार हरकत अदा करता है।ये गुरदे में पत्थरी बनने से बचाता है।ये मसाने को खाली करने में मदद करता है।

5- रस्मी नमाज़ों में वज़नी हरकात दिन में पाँच नमाज़ें अदा करना जोड़ों और नसों/पट्ठों को काम कराते हैं जोकि लगातार रोज़ाना की ज़िंदगी में इस्तेमाल नहीं होते और जोड़ों को गढिढया, कढ़ा हो जाना और नसों की अकड़न जैसी बीमारियों से बचाती है।

6- जिस्म की सहत के लिए सफ़ाई बिल्कुल चाहिए।वुज़ू और गुस्ल दोनो माद्दी और रूहानी पाकिज़गी है।इसलिए, नमाज़ दुरूस्त सफ़ाई है।इस वास्ते, नमाज़ जिस्मानी और रूहानी पाकी के बग़ैर मुकम्मल नहीं हो सकती।वुज़ू और गुस्ल जिस्मानी सफ़ाई देते हैं।कोई भी जो अपनी इबादत का फ़र्ज़ निभाते हैं वो आराम पाते हैं और रूहानी तौर पर पाक हो जाते हैं।

7- दवाई से बचने के लिए, ये बहुत अहम हो जाता है के कुछ खास वक्त में वरज़ीश की जाए।नमाज़ के औकात सबसे ज़्यादा मौज़ूँ हैं खून के दबाव और साँस को बहाल करने के लिए।

8- सबसे अहम हिस्सा जो सोने को मज़बूती देती है वो है नमाज़। सज्दा करने से, जिस्म में शामिल साकन बरकी कुव्वत कायम होती है। इस तरह, जिस्म अपनी कुव्वत दोबारा हासिल करता है। नमाज़ के इन सारे फायदों को हासिल करने के लिए, ये दोनो ज़रूरी हैं कि इसे इसके दुरूस्त वक्त पर अदा किया जाए और सफाई का ध्यान रखा जाए, खाना ज़्यादा न खाया जाए और असली और हलाल खाना खाया जाए।

दुनिया की जाएदाद, सोना या चाँदी किसी के साथ हमेशा नहीं रहेंगे,

कलाकारी एक टूटे हुए दिल को जोड़ने में है, और किसी में नहीं।

सातवाँ हिस्सा

इस्कात-ए नमाज़

मरने वाले के लिए इस्कात और दोर

नूर-उल इज़ाह में **तहतावी** के ज़रिए उसके हाशियाई नोटस में लिखा है कि कज़ा नमाज़ के खात्मे पर **हलबी** और **दुरर-उल मुख्तार** में, **मुलतका** में, **दुरर-उल मुन्तका** में, **विकाया** में, **दुरेर** में, **ज़ोहरा** में, और दूसरी कीमती किताबों में भी ये ज़रूरी है कि मरे हुए शख़्स के लिए इस्कात और दोर किया जाए जो इसे (अपनी वसीयत में) कह गया है। मिसल के तौर पर, **तहतावी** के ज़रिए हाशियाई नोटस में लिखा है, "वहाँ पर नास है (आयत और हदीसें हैं साफ़ मआनी के साथ) इस्कात के बारे में (मुकम्मल तौर पर आज़ाद) (गुनाह उसके लिए) रोज़ें छोड़ना फिदया देने के ज़रिए। सारे आलिमों ने एक राये होकर इस बात को वाज़ेह किया के, क्योंकि नमाज़ रोज़े रखने से ज़्यादा अहम है, जैसे के रोज़े के साथ, इस्कात अदा किया जाए नमाज़ की इबादत के लिए

जोकि एक शख़्स ने छोड़ी हों किसी वजह से और जिसे शरीअ ने भी मंज़ूर किया हो और जिसकी वो बाद में कज़ा भी अदा न कर पाया हो क्योंकि वो बिस्तरे मरग पर चला गया अगरचे वो उन्हें अदा करना चाहता था। एक शख़्स जो कहे के नमाज़ की इस्कात अदा नहीं की जा सकती वो एक ला इल्म है। इस मकसद के लिए वो आलिमों की रज़ामंदी को देखता है। एक हदीस-ए शरीफ़ ये वाज़ेह करती हैः '**एक शख़्स एक दूसरे शख़्स के वास्ते रोज़ा या नमाज़ अदा नहीं कर सकता। लेकिन वो अपने (दूसरे शख़्स के लिए) रोज़े या नमाज़ के लिए गरीब को खिला सकता है।**' जैसे के हमने अभी हाल ही में सुना, कुछ लोग, जो अहल-अस सुन्नत के आलिमों की अफ़ज़लियत को नहीं गरदानते और जो समझते हैं के हमारे मसलकों के इमाम अपने ज़ाती दिखावे के ज़ाहिर करते हैं, जैसे कि वो ख़ुद करते हैं, उनका कहना हैं, "इस्लाम में कोई इस्कात या दोर नहीं होता। इस्कात ईसाइयों की खुलासी से मिलती हुई है।" ऐसे उनके लफ़ज़ उन्हें खतरे में डाल देते हैं। इस वजह से हमारे पैग़म्बर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने वाज़ेह किया, "**मेरी उम्मा एक साथ गुमराही में नहीं आएगी।**" इस हदीस-ए शरीफ़ से ये ज़ाहिर हुआ के जो चीज़ों मुजतहीदों के ज़रि एएक राए से बनाय की गई वो बेशक सही हैं। वो जो इन हदीस-ए शरीफ़ में यकीन नहीं रखते वो ऊपर कही गई हदीस-ए शरीफ़ से इंकार करते हैं। **इबन अबिदीन** के ज़रिए वितर की नमाज़ के बारे में जो लिखा गया था उसके खात्मे पर उन्होने लिखा, "एक शख़्स जो इजमाअः यानी ज़रूरी मज़हबी इल्म जोकि एक जाहिल को भी पता होता है, के इल्म पर यकीन नहीं रखता, वो एक काफ़िर (इल्हादी) बन जाता है।" **इजमा** का मतलब है आलिमों की एक राए। किस तरह इस्कात को तलाफ़ी से मवाज़ना कर सकते हैं? तलाफ़ी की आड़ में, पादरए लोगों को धोका दे रहे हैं। लेकिन इस्लाम मज़हब में आदमी इस्कात अदा नहीं करते। इस्कात सिर्फ़ मरने वाले के वली (देख रेख करने वाले) के ज़रिए अदा की जा सकती है और पैसा मज़हबी आदमियों को नहीं बल्कि गरीब को दी जाती है। अगर वो जो इस्कात की मुखालफ़त कर रहे हैं

कहते हैं "इस्कात और दोर जो आज अदा किए जा रहे हैं वो इस्लाम के साथ नामुनासिब हैं" बजाए इस्कात और दोर की मुखालफ़त करने के, वो इसे सही तरीके से अदा करें, और हम उन्हें मदद कर रहे हैं, ऐसा कहकर, वो दोनों ही बड़े खतरे से बच जाएंगे और इस्लाम की सेवा करेंगे। हमारे मज़हब के मुताबिक किस तरह इस्कात और दोर की जाए ये मंदरजाज़ेल हिस्से में बताया गया है। इबन आबिदीन ने कज़ा नमाज़ के खात्में पर वाज़ेह किया है किस तरह इस्कात और दोर अदा किया जाएः

अगर एक शख़्स की फाइता सलात हों, [यानी, सलात की इबादत जिसने उसने कज़ा के लिए छोड़ा क्योंकि वो उन्हें किसी उज़र की वजह से अदा नहीं कर पाया], और अगर वो उन्हें अदा नहीं कर पाया हो चाहे इशारो से अगरचे वो ऐसा कर सकता हो, जब वो मरने वाला हो तो ये उस पर वाजिब हो जाता है के वो अपनी वसीयत में तजवीज़ करे के उनकी कफ्फ़ारे की इस्कात की जाए। लेकिन वो इस्कात का हुकूम नहीं दे सकता अगर उसके पास उन्हें अदा करने की ताकत न हो। इसी तरह, अगर एक मुसाफिर या एक बीमार शख़्स जिसने रमज़ान-ए शरीफ़ में रोज़े नहीं रखे और कज़ा करने से पहले मर गया, तो वो इस्कात का हुकूम देने वाला नहीं हो सकता। अल्लाह तआला ऐसे लोगों के उज़र कुबूल फरमाते हैं। एक बीमार शख़्स के कफ़्फ़ारे की इस्कात उसका वली अदा कर सकता है उसकी मौत के बाद। उसके मरने से पहले इसे अदा नहीं किया जा सकता। इस बात की इजाज़त नहीं है एक ज़िंदा शख़्स के लिए अपने लिए इस्कात अदा करे। **जिला-उल कुलूब** किताब में बयान है (अगर एक शख़्स का अल्लाह तआला की तरफ़ कर्ज़ा हो, या किसी लोगों की तरफ़, तो उसके लिए ये वाजिब है के अपनी वसीयत को दो गवाहों की मौजूदगी में कहे या उन्हें पढ़कर सुनाए जो उसने लिखा है। इसी तरह, (कहना या लिखा) एक वसीयत का उस शख़्स के ज़रिए मुस्तहब है जो बग़ैर कर्ज़े के हो)। कफ़्फ़ारे की इस्कात के लिए, मरे हुए शख़्स का वली, यानी, वो शख़्स

जिसे उसने हिदायत दी हो उसकी जाएदाद को सही जगहों, या उसके वारिसों में तकसीम करने की, फितरे की मिकदार के मुताबिक खैरात देने की, यानी, आधा सैर [पाँच सो बीस दरहम या सात सो पचास ग्राम] गेहूँ का हर सलात की इबादत के लिए और ऐसी ही मिकदार हर वितर की सलात के लिए और इतनी ही मिकदार एक दिन के रोज़े के लिए जिसके लिए कज़ा ज़रूरी है, फिदया के तौर पर गरीब को [या उसके नायब को], जाएदाद में से देते हैं।

हन्फ़ी मसलक में अगर एक मुर्दा शख़्स अपनी वसीयत में कफ़्फ़ारे की इस्कात को करने का हुकूम नहीं देता तो, उसके वली को कफ़्फ़ारे की इस्कात अदा नहीं करनी होगी। शाफ़ी-ए मसलक में, वली को कफ़्फ़ारे की इस्कात अदा करनी होगी चाहे अगर मुर्दा शख़्स ने उसे हुकूम दिया हो या नहीं। इसी तरह हन्फ़ी मसलक में, मरे हुए शख़्स का कर्ज़ा मखलूख (लोगों) को उसकी जाएदाद में देना होगा जो वो पीछे छोड़ गया है चाहे अगर मरे हुए शख़्स ने अपनी आखिरी अलतमास में हुकूम न किया हो। असल में, कर्ज़ देने वाले अपने बकाया बग़ैर कानूनी अदालत के फ़ैसले के ठीक कर सकते है अगर वो जाएदाद हासिल करलें। अगर वो जो रोज़े छोड़ गया है कज़ा के लिए तो वो उसका फिदया देने का हुकूम दे सकता है, यानी, वो जाएदाद देकर अदा करें, उसे पूरा करना वाजिब है। इस वास्ते के ये अएकाम-ए इस्लाम है। अगर वो नमाज़ की (अदाएगी के लिए) हुकूम नहीं देता (जो वो चूक गया), तो इसकी इजाज़त है, लेकिन ये वाजिब नहीं है, के इसके लिए फिदया दिया जाए। चाहे अगर आखिरी दो अदाएगियाँ (अल्लाह तआला) को मंज़ूर न हो, वो कम से कम खैरात का सवाब, जो बदले में मरे हुए शख़्स के गुनाहों को भूलाने में मदद करता है। हज़रत इमाम-ए मोहम्मद ने भी ऐसा कहा है। ये **मजमउल-अनहुर** में लिखा है, "अगर एक शख़्स अपने नफ़स और शैतान से धोखा खाए अपनी सलात की इबादत अदा नहीं करे और फिर, अपनी ज़िंदगी के आखिर में, नादिम बन जाए [और रोज़ाना की सलात की इबादत करनी शुरू करदे और

पिछली वालों की कज़ा अदा करे], ये **मुस्तसफ़ा** किताब में लिखा है के इस शख़्स को इजाज़त है के अपनी सलात की इबादत की इस्कात अदा करने का हुकूम दे सकता है जिसकी वो कज़ा भी अदा नहीं कर पाया। ये **जिलाल उन कुलूब** में लिखा हैः "दूसरों के हुकूक में कर्ज़ा अदा करना भी शामिल है, आदात की वजह से बकाया जैसे के माल की सपरूदगी, ज़बरदस्ती छीनना, चोरी, रोज़गार और खरीदारी, जिस्मानी हुकूक दस्तअंदाज़ी के कामों की वजह से कारवाई किए गए जैसे की मोर्चा, नुकसान और नामुनासिब रोज़गार, और रूहानी हुकूक जोकि गलत कामों को करने की वजह से पीछे पड़े जैसे के कालाबाज़ारी, चुगलखोरी और बदनामी।

और एक तिहाई मरने वाले की जाएदाद का हिस्सा इस्कात के लिए काफ़ी है, तो वारिस उस जाएदाद में से फिदया दे सकता है। ये **फत्ह-उल कदीर** में लिखा है के, अगर ये काफ़ी न हो, तो वारिस एक तिहाई का घाटा भर सकता है। इसी तरह, अगर मरा हुआ शख़्स अपनी वसीयत में हज अदा करने का हुकूम दे जो उसके ऊपर फर्ज़ थी, तो उसके वारिस या किसी और के लिए हज के लिए पैसे देना मंज़ूर नहीं है। अगर वो मरने से पहले इसका हुकूम नहीं देता और अगर उसका वारिस इस्कात या हज अदा कर देता है अपने खुद के पैसे से तो, उसके हज का कर्ज़ा अदा हो जाएगा। कुछ (आलिमों) ने कहा के इन चीज़ों वारिस के बनाए किसी और के पैसे से इसकी इजाज़त नहीं है। **दुर-उल मुख़तार, मराकिल-फलाह** और **जिला-उल कुबूल** के लिखने वालों (रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन) ने कहा के इन सब की इजाज़त है।

गैहूँ, आटा, एक सैर जौ, सूखी खजूरें या किशमिश गिनी जा सकती है और कफ़्फ़ारे की इस्कात अदा करने के लिए दी जाकती हैं। [क्योंकि ये चीज़ें गैहूँ से ज़्यादा कीमती हैं, ये गरीबों के लिए ज़्यादा फायदेमंद हैं]। इनमें से किसी एक के बजाए, सोना या चाँदी इसी की कीमत का दिया जा सकता

है।[इस्कात काग़ज़ी पैसे से अदा नहीं किया जा सकता]।सज्दा-ए तिलावत के लिए फिदया देना ज़रूरी नहीं है।

इस्कात और दोर कैसे करें

अगर फिदए के तौर पर दिया गया पैसा जाएदाद की एक तिहाई से ज़्यादा बढ़ जाए तो, वली वारिसों की रज़ामंदी के बग़ैर एक-तिहाई से ज़्यादा इस्तेमाल नहीं कर सकता।ये **कुनया** किताब में लिखा है कि अगर मरने वाले पर कर्ज़ा था, तो इस बात की इजाज़त नहीं है के उसकी वसीयत को आगे बढ़ाया जाए चाहे कर्ज़खवाह ने वसीयत पूरी करने की इजाज़त ही क्यो न दी हो।इस वजह से, इस्लाम ने हुकूम दिया है के कर्ज़ पहले अदा किया जाए।कर्ज़ अदा करना कर्ज़खवाह की मर्ज़ी के साथ मुल्तवी नहीं करना चाहिए।

इस मामले में के ये पता न हो की एक शख़्स किस उमर में मरा, जिसने अपनी सारी नमाज़ की इबादतों की इस्कात का हुकूम दिया हो, उसकी वसीयत मानी जाएगी जब उसने जो एक-तिहाई जाएदाद छोड़ी है वो उसकी नमाज़ की इबादतों की इस्कात अदा करने के लिए काफ़ी न हो।अगर जाएदाद का एक-तिहाई बराबर हो और चाहे ज़्यादा हो (जो रकम खर्च की जानी है) इस्कात से, तो उसकी वसीयत कुबूल नहीं की जाएगी; ये बातिल हो जाएगी।इस वजह से, जब एक-तिहाई इस्कात के लिए काफ़ी न हो, तो नमाज़ की इबादतों का शुमार जिसके लिए इस्कात अदा की जाएगी एक-तिहाई के साथ जानी जाए, और इसलिए उसकी वसीयत उन नमाज़ की इबादतों के लिए सही (पक्की) होंगी, और उसकी वसीयत (का हिस्सा) बाकी नमाज़ की इबादतों के लिए लग़व, यानी खाली लफ़्ज़ हो जाएंगे।जब एक तिहाई उसकी पूरी

ज़िंदगी से ज़्यादा हो, और इसलिए इसकी नमाज़ की इबादतों का शुमार पता न हो, और इसलिए उसकी वसीयत बातिल हो जाएगी।

अगर मरने वाले शख़्स के पास कोई जाएदाद नहीं थी, या अगर एक-तिहाई जाएदाद जो उसने छोड़ी है वो इस्कात करने के लिए काफी नहीं है, या अगर उसने कोई वसीयत नहीं बनाई है और वली (सरपरस्त) अपनी ख़ुद की जाएदाद से इस्कात अदा करना चाहता है, तो वो दोर अदा कर सकता है। लेकिन वली को दोर अदा नहीं करना पड़ेगा। दोर अदा करने के लिए, वली को इतना सोना या चाँदी-सोने के सिक्के, कढ़े, अंगूठियाँ, सही चाँदी के सिक्के खरीदने चाहिए, जितने के एक महीने के या एक साल की इस्कात के लिए ज़रूरी हों। कर्ज़े के सालों में बारह सालों घटा कर जोड़ा जाता है- अगर मरने वाला शख़्स एक आदमी है- या नौ सालों का- अगर मरने वाला शख़्स एक औरत है- उनकी पूरी ज़िंदगी से। दस किलोग्राम गेहूँ एक दिन की छः नमाज़ की इबादतों के लिए और तीन हज़ार और छः सौ किलोग्राम एक शामसी साल के लिए।

मिसाल के तौर पर, जब एक किलोग्राम गेहूँ **1.85** लिरा का है तो एक साल की नमाज़ की इस्कात के लिए छः हज़ार पाँच सौ और अट्ठासी या, ये कहना चाहिए के, छः हज़ार छः सौ लिरा चाहिए होंगे।

ये कहिए के एक सोने का सिक्का [जिसका वज़न सात ग्राम और बीस सेंटिग्राम] एक सौ और बीस लिरा की कीमत है, एक साल की नमाज़ की इस्कात के लिए पच्पन, या हालात के मुताबिक, साठ सोने के सिक्कों की ज़रूरत है। मरने वाला का वली पाँच सोने के सिक्के (या दूसरा सोना उसी वज़न के बराबर) खरीद सकता है। और एक या ज़्यादा, मिसाल के तौर पर, चार, गरीब लोगों को ढूँढे जिन्हें दुनियावी चीज़ों से प्यार न हो और जो अपना मज़हब जानते हों और उससे प्यार करते हों।

[ये लोग इतने ज़्यादा गरीब हों के जो फितरा देने की ज़िम्मेदारी से फारिख़ हों और उन लोगों में शुमार हों जिन्हें ज़कात दी जाती हो। अगर वो (इतने ज़्यादा) गरीब न हों, तो इस्कात कुबूल नहीं होगी]। मरने वाले शख़्स का सरपरस्त, यानी, वो शख़्स जिसे उसने अपनी वसीयत बनाई है, या उसके वारिसों में से एक या वो शख़्स जिसे नायब बनाया गया हो, वो पाँच सोने के सिक्के पहले गरीब शख़्स को देगा, खैरात देने की नीयत से, कहते हुए, “मैं तुम्हें ये सोना मरने वाले शख़्स जिसको जाना जाता था......... उसकी इस्कात-ए सलात के लिए बदला दे रहा हूँ।”

फिर गरीब शख़्स, (सोने के सिक्के अपनी तहवील में ले लेगा), कहेगा, “मैं इसे कुबूल करता हूँ और लेता हूँ, और मैं इन्हें तुम्हें तोहफ़े की तरह देता हूँ,” और उन्हें वारिस या वारिस के नायब को दे देगा, जो उनको अपनी तहवील में ले लेगा।

फिर, वारिस या वारिस का नायब सोने के सिक्कों को उसी गरीब शख़्स को दे देगा या दूसरे शख़्स को और उसे तोहफ़े के तौर पर वापिस ले लेगा।

इस तरह, एक दौर (घूमेगा; चक्कर) एक गरीब शख़्स को (सोना) देते हुए चार बार पूरा करेगा या चार गरीब लोगों को एक एक बार देगा और उन्हें वापिस लेगा।

एक दोर के साथ (मरने वाला शख़्स) सलात के कफ़्फ़ारत के बीस सोने के सिक्कों से आज़ाद हो जाता है। अगर मरने वाला शख़्स एक आदमी हो और साठ साल का हो, तो **48X60 = 2880** सोने के सिक्के अढ़तालीस सालों की सलात के लिए ज़रूरी हैं। इसलिए, दोर **2880:20 = 144** किया जाएगा। अगर सोने के सिक्के दस हैं, तो **72** दोर किए जाएंगे, और अगर सोने

के सिक्के बीस हों तो, छत्तीस दोर पूरे किए जाएंगे। अगर गरीब लोगों का तादाद दस है और सोने के सिक्कों की तादाद भी दस है, तो उन्नतीस दोर अढ़तालीस सालों को सलात की कज़ा का इस्कात-ए कफ़्फ़ारत पूरा किया जाएगा। क्योंकिः **उन सालों का नंबर जिसके दौरान उसने (मरने वाले शख़्स ने) नमाज़ अदा नहीं की x तो सोने के सिक्कों का नंबर एक साल के लिए = गरीब का नंबर x सोने के सिक्के जो घुमाए गए उनका नंबर x दोरों का नंबर।** ये उस मिसाल पर लागू होता है जो हमने दिया हैः **48 x 60 = 4 x 5 x 144 = 4 x 10 x 72 = 4 x 20 x 36 = 10 x 10 x 29**

जैसा के देखा गया है, दोर के नंबरों को तए करने के लिए (जो किए जाएंगे) सलात की इस्कात के लिए, सोने के सिक्कें (जो चाहिए) एक साल के लिए वो सलात की कज़ा के सालों से ज़रब किए जाएंगे। फिर सोने के सिक्कों के नंबर जो घूमाए गए उन्हें गरीब मुंफ़रिद के नंबर से ज़रब किया जाएगा। पहले जरब के नतीजे को दूसरे वाले के ज़रिए तकसीम किया जाएगा। तकसीम का नतीजा दोरों के नंबर की निशानदही करेगा। गेहूँ और सोना काग़ज़ी पैसे में बराबर वक्त के साथ साथ अंदाज़न उसी कीमत पर आ जाते हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में, सोने की कीमत और गेहूँ की कीमत हमेशा एक साथ राबते से ऊपर और नीचे जाते हैं। इस वजह से, एक साल की इस्कात के लिए गेहूँ की कीमत में कोई तबदिली नहीं होती, इसलिए इस साल की इस्कात के लिए सोने के सिक्कों का नंबर, यानी साठ सोने के सिक्के जैसे के हमने ऊपर जोड़े हैं, वो तकरीबन एक जैसे ही रहते हैं। इसलिए, इस्कात की गिन्ती के लिए हालात के मुताबिक कुबूल किया हुआ फारमुला है, सिवाए कुछ गैरमामुली हालतों केः **एक महीने की सलात की इस्कात के लिए पाँच सोने के सिक्के। रमज़ान में एक महीने के रोज़ों की इस्कात के लिए एक सोने का सिक्का।** इस तरह, सोने के सिक्कों का नंबर का फिरना और घूमाने का नंबर इसके मुताबिक गिनती किया जाता है।

नमाज़ की इस्कात पूरी होने के बाद, अढ़तालीस सालों के छोड़े हुए रोज़ों, यानी, उनके लिए जिसकी क़ज़ा बनाई गई वो, (वारिस या उसका नायब तीन दोर बनाएगा

पाँच सोने के सिक्कों और चार गरीब लोगों के सात। इस वास्ते, एक साल के रोज़ों के (तीस दिन के) कफ़्फ़ारों के लिए **52.5** साढ़े बावन किलोग्राम गेहूँ, या **5.25** ग्राम सोना, यानी **0.73** सोने के सिक्के चाहिए। इसलिए, हन्फ़ी मसलक में, **एक सोने का सिक्का एक साल के रोज़े के कफ़्फ़ारत को अज़ाद करता है,** और इसलिए, ये ज़रूरी है के अढ़तालीस सालों के लिए अढ़तालीस सोने के सिक्के देना ज़रूरी हैं। एक दोर पाँच सोने के सिक्कों और चार गरीब लोगों के साथ पूरा करने का मतलब है के बीस सोने के सिक्के देना रोज़ों की इस्कात जिनकी क़ज़ा चाहिए थी अदा करने के बाद, कुछ दोर पहले ज़कात के लिए और फिर कुरबान के लिए अदा किए जाएँ।

एक कसम के कफ़्फ़ारत के लिए एक दिन में दस लोगों की ज़रूरत है, और एक दिन के रोज़े के कफ़्फ़ारे के लिए जिसे बग़ैर किसी काबिले कुबूल उज़र के तोड़ा गया और जिसके लिए कफ़्फ़ारा ज़रूरी है उसके लिए एक दिन में साठ मिसकीन/गरीब लोग चाहिए; और, एक गरीब शख़्स को एक दिन में आधे सेर से ज़्यादा गेहूँ न दिया जाए। यानी, कई कसमों का कफ़्फ़ारा उसी दिन के अंदर दस गरीब लोगों को न दिया जाए। फिर, कसमों के कफ़्फ़ारे और (टूटे) रोज़ों को एक दिन में न किया जाए। अगर (मरने वाला शख़्स) अपनी कसमों के लिए (इस्कात का) हुकूम दे, तो तुम दो किलोग्राम गेहूँ का आटा, या उसके बराबर दूसरी जाएदाद जैसे के सोना और चाँदी, दस में से हर एक गरीब लोगों को एक दिन में। या, तुम एक जैसी कीमत लगातार दस दिनों के लिए रोज़ाना एक ही गरीब शख़्स को दे सकते हैं। या, (गिनती करते हुए और) देते हुए (पूरा खर्चा) एक गरीब शख़्स को काग़ज़ी पैसे में, तुम्हें उससे कहना चाहिए, "मैं तुम्हें अपना नायब बनाता हूँ। इस पैसे के साथ तुम अपने खाना

खरीद सकते हो और दस दिनों के लिए इसे खा सकते हो, दिन में दो बार, एक बार सुबह में और एक बार शाम में!" अगर वो दूसरी चीज़ें खरीदता है, जैसे के कॉफी और अखबार बजाए अपने आपको खिलाने के जैसे के उसे सलाह दी गई है, तो ये काबिले कुबूल नहीं है। सबसे अच्छा तरीका इसे करने का ये है के एक रैस्टरण्ट से सौदा करले और दस दिन का खर्चा उस रेस्टरण्ट को दे दे और गरीब शख़्स वहाँ हर सुबह और हर शाम खाना खाए दस दिनों के लिए यही मामला रोज़े के कफ़्फ़ारे के लिए है जो नीयत (इरादा) करने के बाद टूट जाए और ज़िहार के कफ़्फ़ारे के साथ; इन दोनो मामलों में से हर एक में, एक दिन के कफ़्फ़ारे के लिए तुम्हें आधा सेर गेहूँ या इतनी ही कीमत की कोई दूसरी मिलकियत हर एक साठ मिसकीनों गरीब लोगों को एक दिन में देने होंगे या एक गरीब शख़्स को साठ दिनों के लिए या (साठ दिन के लिए) उसे एक दिन में दो बार खाना खिलाए।

ज़कात की इस्कात (मैय्यत के ज़रिए) हुकूम नहीं दी गई तो उसे अदा करना ज़रूरी नहीं है। फतवा वारिस को इजाज़त देता है के ज़कात की इस्कात का दोर वो अदा कर सकता है अपनी खुद की इच्छा से।

जब दोर किया जाए, तो हर बार गरीब लोगों को सोना दिया जाए, वली सलात या रोज़े की इस्कात की नीयत करे। गरीब शख़्स को ये भी कहना चाहिए, "मैंने (ये) तोहफ़े के तौर पर दिया," जैसे वो सोने को वापिस देगा और वली को ये कहना चाहिए, "मैने (इसे) हासिल किया।" अगर वली इस्कात अदा करने के लायक नहीं है, तो वो दूसरे शख़्स को अपना नायब बना सकता है मरने वाले शख़्स की इस्कात अदा करने के लिए।

इमाम बिरगिवी के ज़रिए **वसीयतनामे** के आखिरी हिस्से में और कादीज़ादे अहमद अंफ़दी रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम के ज़रिए उसकी वज़ाहत में लिखा गया हैः ये पहले से शर्त है के गरीब लोगों के पास निसाब

(जाएदाद की) की रकम हो। उनके लिए इजाज़त है के वो मरने वाले शख़्स के रिश्तेदार हो सकते हैं। जब गरीब शख़्स को (सोने के सिक्के) दिए जाएँ तो वली को ये कहना चाहिए, "मैंने तुम्हें ये फलाँ और फलाँ की इस्कात के लिए फलाँ और फलाँ कई सलात की इबादतों के लिए दिया है।" और गरीब शख़्स को कहना चाहिए, "मैं इन्हें कुबूल करता हूँ," और जब वो उन्हें अपनी तहवील में ले ले तो ये जान ले के ये सोने के सिक्के उसके हैं। अगर वो ऐसा नहीं जानता है तो उसे पहले से इसके बारे में बताया जाए। और ये गरीब शख़्स, रहमदिली दिखाते हुए, अपनी ही जैसे दूसरे गरीब शख़्स को सोने के सिक्के दे दे, ये कहते हुए, "मैं तुम्हें ये फलाँ-फलाँ की सलात की इस्कात के लिए दे रहा हूँ।" बाद वाला, उनको अपनी तहवील में लेते हुए, ये कहेगा, "मैंने इन्हें कुबूल किया।" जब वो उनको अपनी तहवील में ले तो उसे ये जान लेना चाहिए वो उसकी जाएदाद है। दोर कुबूल नहीं किया जाएगा अगर वो उन्हें हिफ़ाज़त के तौर पर जमा करे या तोहफ़े की तरह देने के लिए। और ये दूसरा गरीब शख़्स, ये कहने के बाद, "मैं लेता हूँ और उन्हें कुबूल करता हूँ," तीसरे गरीब शख़्स को इन्हें देते हुए ये कहे, "मैं तुम्हें इसी तरीके से इन्हें दे रहा हूँ।" इस तरह, दोर नमाज़ की इबादतों, रोज़ों के लिए, ज़कात के लिए, कुरबानियों के लिए, सदका फितरों के लिए, अदक के लिए (कसमों की अदाएगी), इंसानी और सारी दूसरी मखलूक के हुकूक (तोड़ने) के लिए किए जाते हैं। फासिद और बातिल खरीदो, और फरोख्त इंसानी हुकूक तोड़ने वाले ज़मरे में आते हैं। एक हल्फ रोज़े के कफ़्फ़ारों के लिए दोर करने की इजाज़त नहीं है।

दोर के मुकम्मल होने के बाद, आखिरी गरीब शख़्स सोने के सिक्कों को अपनी तहवील में लेगा और रहमदिली दिखाते हुए अपनी खुद की मरज़ी से और अपनी खुद की इच्छा से वली को उन्हें तोहफ़ा दे सकता है। सरपरस्त उन्हें ले लेगा, ये कहते हुए, "मैं इन्हें कुबूल करता हूँ।" अगर वो (गरीब शख़्स)

उन्हें तोहफ़ा नहीं देता, तो उन्हें ज़बरदस्ती नहीं लिया जा सकता, क्योंकि ये उसकी अपनी मिलकियत है। सरपरस्त इन गरीब लोगों को कुछ सोने के सिक्के या कुछ काग़ज़ी रक्म या मरने वाले शख़्स की जाएदाद में से कुछ उन्हें दे दें और इस ख़ैरात का सवाब करने वाले शख़्स की रूह को पहुँचाए। एक गरीब शख़्स जो कर्ज़े में हो या एक बच्चा जो बलूगत की उमर को न पहुँचा हो वो दोर में शामिल नहीं हो सकते। इस वास्ते के, जैसे ही वो सोने के सिक्के अपने तहवील में लेगा उसके लिए ये फर्ज़ हो जाएगा के वो अपना कर्ज़ा पहले चुकाए। उसे इस बात की इजाज़त नहीं होगी के वो दूसरे शख़्स को सोने के सिक्के पकड़ाए मरे हुए शख़्स का कफ़्फ़ारा अदा करने के लिए बजाए अपने कर्ज़ को चुकाने के। दोर कुबूल हो सकता है, लेकिन वो ख़ुद, अकेले कोई सवाब कमाएगा, वो गुनहगार बन जाएगा।

अगर मरने वाला शख़्स बग़ैर किसी जाएदाद के, अपनी वसीयत में दोर करने का हुकूम देता है, तो वली के लिए ये वाजिब नहीं है के दोर को करे। मरते हुए शख़्स के लिए ये वाजिब है के वो इतनी जाएदाद की वसीयत करे जो इस्कात के लिए काफ़ी हो, बशर्त ये के विरसे से एक-तिहाई से ज़्यादा न हो। इसलिए, इस्कात बग़ैर दोर के अदा करना ज़रूरी हो जाएगा। वो गुनहगार होगा अगर वो एक तिहाई से कम जाएदाद होने पर दोर करने का हुकूम देगा जबकि एक-तिहाई उसकी जाएदाद इस्कात के लिए काफ़ी है। इबने आबिदीन की पाँचवी जिल्द के एक-दो सौ और तेहत्तर सफ़हे पर लिखा है, "अगर एक बीमार शख़्स के छोटे बच्चे हैं या गरीब बड़े बच्चे जिन्हें उसकी विरासत की ज़रूरत है, जो सने बलूग को पहुँच चुके हों और जो पाक हों, तो उसके लिए बहतर है के अपनी जाएदाद अपने पाक बच्चों के लिए छोड़ जाए बजाए इसके के नफली पाक कामों और खिदमात की (अदाएगी के लिए) वसीयत करे।" **बज़्ज़ाज़िय्या** किताब में तोहफों की गुफ़तगू में लिखा है, "एक शख़्स को उसकी मिलकियत को नेक कामों और खिदमत पर लगाना चाहिए

बजाए इसके के वो इसे अपने गुनहगार (अगर वो ऐसे हों) बच्चों के लिए छोड़ जाए। इस लिए, इसका मतलब हुआ गुनाह का साथ देना। और एक शख़्स को अपने गुनहगार बच्चे को रकम या जाएदाद उसके रिज़क से ज़्यादा नहीं देना चाहिए।"

अगर एक शख़्स के बहुत ज़्यादा सलात, रोज़े, ज़कात, कुरबान और कसम की कज़ाएँ हों तो उसे अपनी वसीयत में ये हुकूम नहीं देना चाहिए के उसकी छोड़ी हुई विरासत में से एक तिहाई से कम में दोर किया जाए और ये के बाकी बची हुई जाएदाद को नेक कामों में लगा दिया जाए जैसे के कुरआन अल-करीम की किरअत, खत्म-ए तहलील और मोलीद उसे इस बात की इजाज़त नहीं है। एक शख़्स जो ऐसी मज़हबी खिदमत के लिए पैसे देता है या लेता है वो गुनहगार बन जाता है। इस बात की इजाज़त है के कुरआन अल-करीम को (किस तरह पढ़ा जाए) पढ़ाने यानी सिखाने के पैसे दिए या लिए जाएँ। ताहम इसको पढ़ने के लिए इजाज़त नहीं है।

वारिसों के लिए किसी दूसरे शख़्स के लिए मरने वाले की छोड़ी हुई नमाज़ की इबादतों या रोज़ों की कज़ा अदा करने की इजाज़त नहीं है। ताहम इस बात की इजाज़त है और बल्कि अच्छा है के नफ़ली सलात और रोज़े अदा करके और उसका सवाब मरने वाले की रूह को पहुँचा दे।

मरने वाले के ज़रिए मुंतखिब किए गए नायब को इस बात की इजाज़त है के मरने वाले के हज के कर्ज़े की वो कज़ा अदा करदे। ये मरने वाले को उसके (हज के) कर्ज़ से छुटकारा दिलाएगा। इस वास्ते, के हज एक इबादत है जो दोनो से की जाती है जिस्म के साथ और जाएदाद के साथ भी। नफ़ली हज हमेशा किसी के बदले में किया जा सकता है। लेकिन हज जोकि फ़र्ज़ है वो एक नायब के ज़रिए सिर्फ़ उस शख़्स के बदले किया जाएगा जो शख़्स अपने मरने तक उसे अदा करने के काबिल न हो।

मजमा उल अनहुर और **दुर्र-उल मुनतका** में ये लिखा है कि, “मरने वाले की इस्कात तदफीन से पहले अदा कर देनी चाहिए।**कुहिस्तानी** में ये लिखा है के तदफ़ीन के बाद भी इसकी इजाज़त है।”

मरने वाले की नमाज़, रोजे, ज़कात और कुरबान के कफ़्फ़ारों की इस्कात अदा करने के लिए, एक गरीब शख़्स को उसके निसाब से ज़्यादा रकम देनी चाहिए।असल में, सारे सोने के सिक्के एक ही गरीब आदमी को दे देने चाहिए।

इस बात की इजाज़त नहीं है के एक शख़्स मरते वक्त अपनी छोड़ी हुई नमाज़ की इबादतों का फिदया अदा करे।अगर एक शख़्स इतना बूढ़ा हो के वो रोज़े न रख सके, तो उसके लिए इस बात की इजाज़त है के वो अपने रोज़ों का फ़िदया अदा करे जोकि वो अदा नहीं कर सकता।एक बीमार शख़्स को अपनी सलात कम से कम सिर को हिलाकर अदा कर लेनी चाहिए।अगर एक शख़्स इतना बीमार हो के वो अपनी सलात की इबादतों को एक दिन से ज़्यादा अदा न कर पाए चाहे इन सब हरकात (अपने सिर के) के साथ भी, तो वो इन सलात की इबादतों के फर्ज़ से अज़ाद हो जाता है।अगर वो बाद में ठीक हो जाए तो उसे इन इबादतों की कज़ा अदा नहीं करनी पड़ेगी।लेकिन जब वो ठीक हो जाए तो उसे अपने रोज़ें रखने होंगे जो उसने नहीं रखे थे।अगर वो ठीक होने से पहले मर जाए, (उसके गुनाह इन्हें न अदा करने के) तो ये रोज़ें उसके माफ़ हो जाएंगे।

आठवाँ हिस्सा

बत्तीस और चौव्वन फराइज़

(अहकामात)

जब एक बच्चा जो, सिने बलूगत को पहुँचता है, या एक काफ़िर, **कलिमात अल-तौहीद (ला इल्लाहा इल्लल्लाह मुहम्मदन रसूलुल्लाह)** कहता है, समझता है और उसके मआनी में यकीन रखता है, वो मुसलमान होते हैं। जब एक काफ़िर एक ईमान वाला बनता है, उसके सारे गुनाह फौरन माफ़ कर दिए जाते हैं लेकिन, किसी भी दूसरे मुसलमान की तरह, जब उसको मौका मिले तो आमन्तु की दुआ को याद करे और उसके मआनी की हू बहू याद करे। वो उसमें यकीन रखे और कहेः "मैं ईमान रखता हूँ के सारा इस्लाम, यानी, अहकामात और मुमानिआत मुहम्मद अलैहिस्सलाम के ज़रिए फरमाई गई सब अल्लाह तआला के ज़रिए हुकूम की गई हैं।" जितनी जल्दी मुमकिन हो सके, उसे फराईज़ (अहकामात) और हराम (मुमानिआत) और अखलाकी सिफ़ात जो हालात उसने तर्जुबा किए उनसे जुड़े हुए सबको उसे सीखना चाहिए। ये फर्ज़ है। अगर वो इन्कार करे, यानी, अगर वो यकीन न करे और इस असलियत को अहमियत न दे के फर्ज़ को अदा करने और सीखना और हराम को नज़रअंदाज़ करना फर्ज़ है, तो वो अपना ईमान खो देता है, वो एक **मुरतद्द** [बिदअती, मुंकर] बन जाता है। यानी, अगर वो उन चीज़ों को जो उसने सीखी हैं उनमें से कोई एक को भी नहीं मानता, मिसाल के तौर पर, औरतों का बुरका ओढ़ना- तो वो एक मुरतद्द बन जाता है। जब तक के वो तौबा (पछतातापा) न करले उस चीज़ के लिए जिसने उसे मुंकर बनाया, तो एक मुरतद्द "**ला इल्लाह इल्लल्लाह**" कहने से और इस्लाम के कुछ अहकामात को करने से जैसे के नमाज़, रोज़ा या हज या अच्छे काम करने से वो मुसलमान नहीं बन

जाता। आखिरत में, उसे ऐसे अच्छे काम करने के कोई फ़ाएदे नहीं मिलेंगे। उसे तौबा करनी होगी, उसके इंकार करने से, उसकी बेयकीनी के लिए, उसे माफ़ी मांगनी होगी।

इस्लाम के आलिमों ने बत्तीस और चौव्वन ज़ाएद फराईज़ (अहकामात) चुने हैं जो हर मुसलमान को याद करने हैं यकीन करने हैं और मानने हैं।

बत्तीस फर्ज़/फराइज़

ईमान की बुनियादेः छः (6)
इस्लाम की बुनयादः पाँच (5)
नमाज़ के वाजिबात [रस्मी इबादत, सलात]ः बारह (12)
वुज़ू के रस्मी वाजिबातः चार (4)
गुस्ल के वाजिबात [रस्मी गुस्ल]ः तीन (3)
तय्यमुम के वाजिबातः दो (2)

यहाँ पर ऐसे भी आलिम हैं जिन्होने कहा के तय्यमम के वाजिबात बताए हैं। उस मामले में, ये 33 तक जुड़ जाता है।

ईमान की बनियादें (6)

1- अल्लाह तआला के वुजूद और उसकी वहदानियत पर यकीन रखना।

2- उसके फरिश्तों में यकीन रखना,

3- अल्लाह तआला के ज़रिए नाज़िल किताबों पर यकीन रखना।

4- अल्लाह तआला के ज़रिए भेजे गए पैग़म्बरों पर यकीन रखना।

5- आखिरी दिन (अल-योमिल-आखिर) पर यकीन रखना।

6- इस बात पर यकीन/ईमान रखना के कदर, खैर (अच्छा) और शरे (बुरा), सब अल्लाह तआला की तरफ़ से आता है।

इस्लाम की बुनियादें (5)

7- कलिमा अस-शहादत का इकरार करना,

8- पाँच रोज़ाना की नमाज़ों को उनके मुकर्रर वक्त में अदा करना।

9- अपनी जाएदाद की ज़कात देना।

10- रमज़ान के महीने के हर दिन का रोज़ा रखना।

11- (उस शख़्स के लिए जो इस लायक हो) हज अदा करना [बड़ी ज़ियारत] अपनी ज़िंदगी में एक बार।

नमाज़ के वाजिबात (12)

A. नमाज़ में **12** फर्ज़ हैं, **7** जिसमें से पहले हैं, यानी नमाज़ शुरू करने से पहले। उन्हें शर्ते [शराइत] भी कहा जाता है।

12- तहारत [पाक होना] हदस से [वुज़ू या गुस्ल की हालत के बग़ैर होने से],

13- नजासत से तहारत [चीज़ें जो इस्लाम ने नापाक बताई हैं],

14- सतर-ए अवरत [जिस्म के उन हिस्सों को छुपाना जिन्हें अवरत कहा जाता है],

15- इस्तिक़बाले किब्ला [किब्ले की तरफ़ मुँह करना],

16- वक्त [मुकर्रर वक्त],

17- नियत [इरादा],

18- तकबीर-ए तहरीमा [इसे तकबीर-ए इफ़तिताह भी कहते हैं जिसका मतलब है नमाज़ शुरू करने से पहले अल्लाहु अकबर कहना],

B. नमाज़ के अंदर पाँच फराइज़/फर्ज़ हैं। इनको रूकन कहा जाता है।

19- कयाम [खड़े होना],

20- किरअत [कुरआन को पढ़ना],

21- रूकू [झुकना],

22- सज्दा [माथे को ज़मीन पर टिकाना],

23- आखिरी क़अदा [आखिरी बैठना],

वुज़ू के वाजिबात (4)

24- मुँह को धोना,

25- दोनों हाथों को कोहनियों तक धोना,

26- मसह करना [अपने गीले हाथों को रगड़ना] एक-चौथाई सिर का,

27- पैरों को गट्टों की हडिडयों तक दोनों तरफ़ से धोना,

गुस्ल के वाजिबात (3)

28- चेहरे को धोना,

29- नाक के अंदर धोना,

30- जिस्म के हर हिस्से को धोना,

तय्यमुम के वाजिबात (2)

31- अपने आपको जनाबत से पाक करने या बग़ैर वुज़ू की हालत से पाक करने की नीयत करना।

32- दोनो हथेलियों को साफ़ मिट्टी पर रगड़ना और चेहरे का मसह [रगड़ना] करना।फिर दूसरी बार दोनों हाथों को मिट्टी पर रगड़ो और दोनों हाथों को कोहिनियों से लेकर हथेलियों तक मसह करो।

चौव्वन फर्ज़/फराइज़

1- अल्लाह तआला की वहदानियत में ईमान रखना।

2- हलाल चीज़ों को खाना और पीना।

3- वुज़ू अदा करना [धोना]।

4- पाँच रोज़ाना की नमाज़ अदा करना जब उनका वक्त आ जाए।

5- गुस्ल करना।

6- इस बात पर ईमान रखना के रिज़्क (ग़िज़ा) सिर्फ़ अल्लाह तआला के ज़रिए दी जाती है।

7- साफ़ और हलाल कपड़ें पहनना।

8- अपना काम करते वक्त अल्लाह में भरोसा (तवक्कुल) करना।

9- जो तुम्हारे पास है उस पर राज़ी रहना।

10- अल्लाह तआला की नएमतों के लिए शुक्रिया अदा करना [उसकी नएमतों को इस्लाम के हुकूम के मुताबिक इस्तेमाल करना]।

11- कज़ा और कदर के साथ राज़ी रहना।

12- तकलीफ़ में सबर करना।

13- अपने गुनाहों के लिए तौबा [तासीफ़] करना।

14- अल्लाह तआला की रज़ा हासिल करने के लिए इबादत करना।

15- शैतान को दुश्मन मानना।

16- कुरआन अल-करीम के हुकूम पर रज़ामंदी करना।

17- मौत के लिए अपने आपको तैयार करना, यानी, कोशिश करना ईमान के साथ मरने की फर्ज़ों को अदा करते हुए और हराम को नज़र अंदाज़ करते हुए।

18- अल्लाह तआला जिन्हें प्यार करता है उन्हें प्यार करना और जिन्हें वो प्यार नहीं करता उनसे प्यार न करना और परे रहना [इसे हुब्ब-ए फ़िल्लाह और बुग़द-ए फ़िल्लाह कहते हैं]।

19- अपने वालदेन पर रहम करना और उन पर महरबानी करना।

20- अमर-ए-मारूफ़ (हुकूम देना और इस्लाम को फैलाना) और नहीं-ए-अन-इल-मुंकर (लोगों को उन चीज़ों के करने से रोकना जो इस्लाम ने ममनुअ करार दी हैं)।

21- उन महरम रिश्तेदारों से मिलने जाना जो इस्लाम को मानते हैं।

22- भरोसे (अमानत) को न तोड़ना।

23- अल्लाह तआला से डरना और ज़्यादती और गुनाह वाली चीज़ों से परे रहना।

24- अल्लाह और उसके पैग़म्बर की फरमावरदारी करना।

25- गुनाहों से बचना और इबादत के कामों को अदा करना।

26- मुसलमान हुकमरानों की इताअत करना।

27- आसमानी और खाकी मखलूकात को देखना सबक लेने के लिए।

28- अल्लाह तआला की मौजूदगी के बारे में सोचना।

29- अपनी ज़बान को हराम, फहश लफ़ज़ों को कहने से महफ़ूज़ रखना।

30- अपने दिल को बेकार चीज़ों और नुकसानदेह दुनियावी इच्छाओं

से पाक और परे रखना।

31- किसी भी शख़्स का मज़ाक न उड़ाना।

32- हराम चीज़ों को न देखना।

33- अपने वादे पर कायम रहना।

34- हराम चीज़ों का न सुनना।

35- इल्म सीखना।

36- नापने या तौलने में ईमानदार रहना।

37- अल्लाह के अज़ाब से अपने आपको महफ़ूज़ न समझना, अल्लाह तआला के गुस्से से खौफ़ज़दा होना।

38- अपनी जाएदाद में से गरीब मुसलमानों को ज़कात देना और उनकी मदद करना।

39- अल्लाह के रहम से नाउम्मीद न होना।

40- अपने नफ़ज़ की ज़ाएद अय्याश इच्छाओं की तकलीद मत करो।

41- अल्लाह की रज़ा के लिए भूखे शख़्स को खाना दो।

42- वाफ़िर रिज़क (एक शख़्स के गुज़ारे के लिए) को हासिल करने के लिए काम करना।

43- अपनी जाएदाद की ज़कात देना और अपनी फ़सल की अश्र देना।

44- जिमा से परे रहने जबकि एक शख़्स की बीवी माहवारी की या दूध पिलाने की हालत में हो।

45- अपने दिल को बेकार चीज़ों और नुकसान वाली दुनियावी इच्छाओं से पाक करें।

46- अपने आपको घमंड से रोकना।

47- यतीम की जाएदाद की हिफ़ाज़त करना।

48- ऐसी हालतों और हरकात से रूकना जो जवान लड़कों की तरफ़

जिस्मानी महसूसात को उभारने का सबब बनें।

49- पाँच रोज़ाना की नमाज़ों को उनके मुकर्रर वक्त में अदा करना, उन्हें छोड़ना नहीं।

50- दूसरों के असासे को नाइंसाफ़ी के साथ ज़बत न करना या लड़ाई झगड़े, यानी गलत हथकंडों के ज़रिए।

51- अल्लाह तआला के साथ किसी को साथी न बनाना।

52- ज़िना, करने से बचना

53- शराब या दूसरी नशीली चीज़ों को न पीना।

54- जब तक के जाइज़ वजह न हो कसम न खाना।(मामूली वजूहात के लिए कसमों को न खाना।)

कुफ्र (बेयकीनी)

सब बुराइयों में सबसे खराब बात है अल्लाह तआला (के मौजूदगी से) से इंकार करना, यानी एक काफ़िर होना।ये कुफ्र है के जिन चीज़ों पर ईमान होना चाहिए उनमें से किसी एक पर कुफ्र करना।मुहम्मद अलैहिस्सलाम पर ईमान न रखना कुफ्र है।(ईमान) का मतलब है दिल से सारे अहकामात को मानना जो मुहम्मद अलैहिस्सलाम पर अल्लाह तआला की तरफ़ से नाज़िल हुए और आपके ज़रिए हम तक पहुँचाए गए, और इस हालत को जुबान से यकीन करना।जब वहाँ पर कोई रूकावट हो इसको खुले तौर पर कहने में तो, इसकी इजाज़त है के इसे जुबान से न कहा जाए।ईमान रखने के लिए, ऐसी चीज़ों को इस्तेमाल करना या कहना जिन्हें इस्लाम ने कुफ्र की अलामतें बताया है तो इन्हें भी नज़र अंदाज़ करना चाहिए।अहकाम-ए इस्लामिया से ग़फ़लत बरतना भी कुफ्र है, यानी इस्लाम के अहकाम या मुमानियत में से किसी भी एक की, कुरआन अल-करीम, फरिश्तों या किसी भी पैग़म्बर का मज़ाक उड़ाना, या उनके ज़रिए कही गई किसी भी बात से इंकार करना।इंकार करने का मतलब

है यकीन न रखना, उसको सुनने के बाद उसको कुबूल न करना। उन चीज़ों पर शक करना जो ज़रूरी हैं यकीन रखना इसका मतलब की कुफ़्र होता है।

यहाँ पर तीन किस्म के कुफ़्र हैंः 1) लाइल्मी की वजह से कुफ़्र (जहली), 2) सरकशी की वजह से कुफ़्र (जहूदी), और 3) राए के ज़रिए कुफ़्र (हुकमी)।

1- लाइल्मी की वजह से कुफ़ (कुफ़्र-ए जहली)ः ये उन लोगों का कुफ़्र है जिन्होने (एक खास इस्लामी अकीदे) उसके बारे में नहीं सुना और न ही उसके बारे में सोचा। "जहल" का मतलब है लाइल्मी। दो किस्म की जिहालत है। पहली वाली सादा लाइल्मी है। इस जिहालत के सात लोग ये जानते हैं के वो लाइल्म हैं। उनका कोई यकीन नहीं होता। वो जानवरों की तरह होते हैं क्योंकि इंसानों और जानवरों को जो चीज़ तफरीक करती है वो है इल्म और समझदारी। ये लोग उन जानवरों से भी नीचे हैं क्योंकि हर जानवर अपनी खास वुसअत में जिसके लिए उसे तखलीक किया गया वो तरक्की पर है। दूसरी किस्म की जिहालत/लाइल्मी मिली हुई जिहालत है **(जहल अल-मुरककब)**, जिसका मतलब है गलत और खराब ईमान रखना। पुराने ग्रीक फलसफियों का अकीदा और बहत्तर इलहादी मुसलमानों के फिरकों में लोगों के गलत ईमान जो उस रज़ामंदी के मुताबिक नहीं हैं जो इस्लाम में साफ़ बताई गई हैं ओर इस तरह अपना ईमान खो दिया इस किस्म की जिहालत की मिसाल देकर। इस किस्म की लाइल्मी पहली किस्म से ज़्यादा खराब है। ये एक बीमार है जिसका कोई ईलाज नहीं।

2- सरकशी की वजह से कुफ़्र (कुफ़्र-ए जहूदी)ः लोग जो इस गुप में होते हैं कुफ़्र को जानबुझकर चुनते हैं या तो क्योंकि वो दुनियावी मरतबों को चाहते हैं या वो घमंडी होते हैं या वो खौफज़दा होते हैं के लोग उन्हें नफ़रत

करेंगे जब वो नए मज़हब में शामिल होंगे। मिसाल के तौर पर, फिरओन और बाएज़नटिन बादशाह हराक्लिअस इस किस्म के कुफ़्र रखते है।

3- राए के ज़रिए कुफ़्र (कुफ़्र-ए हुकमी)ः एक शख़्स जो कुछ कहे या करे जिसे इस्लाम ने कुफ़्र की अलामत बताया है वो एक काफ़िर बन जाता है चाहे अगरचे वो दिल से असली में यकीन रखता हो और मुसलमान होने का इकरार करे। **ये कुफ़्र है के जिसे इस्लाम ने हमें हुकूम दिया है के ज़लील करो उसकी हम इज़्ज़त करे और उसकी बेइज़्ज़ती करें जिसे इस्लाम ने हमें हुकूम दिया है के इज़्ज़त करो।**

1- ये कहना "अल्लाह तआला हमें अर्श से या जन्नत से देख रहा है" तो ये कुफ़्र है।

2- ये कहना, "अल्लाह तआला तुम्हारे साथ बुरा करे जैसे के तुमने मेरे साथ बुरा किया" कुफ़्र है।

3- किसी खास मुसलमान का नाम लेना और कहना, "ये मेरे लिए एक यहूदी की तरह है" कुफ़्र है।

4- एक झूठ बोलना और फिर कहना, "अल्लाह जानता है ये सच्च है" कुफ़्र है।

5- फरिश्तों के लिए बेहुरमती वाले फिकरे कहना कुफ़्र है।

6- कुरआन अल-करीम के बारे में कम करके बोलना या चाहे उसके किसी एक हुरूफ़ के बारे में ही क्यो न कहे, इसके चाहे एक हुरूफ़ में यकीन न करे ये भी कुफ़्र है।

7- कुरआन अल-करीम को गानों के साज़ों के साथ पढ़ना कुफ़्र है।

8- बाएबल और तौरह के असली बयानों से इंकार या रददोबदल कुफ़्र है। [आज, बाएबल और तौरह के असली बयान मौजूद नहीं हैं।]

9- कुरआन अल-करीम को उन हुरूफ़ों के साथ पढ़ना जिन्हें शाज़ कहते हैं और ये दावा करना के असली कुरआन पढ़ लिया कुफ़्र है।

10- पैग़म्बरों के बारे में छोटा बोलना कुफ़्र है।

11- पच्चीस पैग़म्बरों अलैहिम-उस-सलवात-उ-व-त-तसलीमात में से किसी एक से भी मुंकर होना जिनके नाम कुरआन अल-करीम में ज़िकर किए गए हैं तो ये कुफ़्र है।

12- ये कहना, "वो एक पैग़म्बर से बहतर है," एक शख़्स के खैराती कामों के बारे में जानकर ये कुफ़्र है।

13- ये कुफ़्र का काम है कहना के पैग़म्बर अलैहिम-उस-सलवात-उ-वत-तसलीमात ज़रूरतमंद लोग थे, पैग़म्बरों के लिए गरीबी उनकी अपनी मर्ज़ी थी।

14- अगर एक शख़्स दावा करे के वो पैग़म्बर है, तो वो और जो उस पर यकीन करें वो काफ़िर बन जाते हैं।

15- आखिरत में जो वाक्यात होंगे उनका मज़ाक उड़ाना कुफ़्र है।

16- कब्र में या आखिरत में जो अज़ाब नाज़िल होगा उससे इंकार करना कुफ़्र है, [या ये कहना के माकूल नहीं है]।

17- इस बात से इंकार करना के ईमान वाले अल्लाह तआला को जन्नत में देख पाएँगे या ये कहना, मिसाल के तौर पर, "मैं जन्नत नहीं चाहता।मैं अल्लाह को देखना चाहता हूँ।" ये कुफ़्र है।

18- लफ़्ज़ जो इस्लाम से मुनहरिफ़ होने के अलामतें हैं, मिसाल के तौर पर ये कहना, "सांईसी इल्म इस्लामी इल्म से बहतर हैं" ये कुफ़्र है।

19- ये कहना, "इससे कोई फर्क नहीं पड़ता चाहे मैं (रोज़ाना की इबादत जिसे कहते हैं) नमाज़ अदा करूँ या नहीं," ये कुफ़्र है।

20- ये कहना "मैं नहीं दूँगा (इस्लाम की ज़रूरी खैरात जिसे कहते हैं) ज़कात," कुफ़्र है।

21- ये कहना, "मेरी इच्छा है के रिबा (सूद) हलाल होता" कुफ़्र है।

22- ये कहना, "मेरी इच्छा है जुल्म (बेरहमी) हलाल होती" कुफ़्र है।

23- ये कुफ़्र का काम है के सवाब की उम्मीद रखना (आखिरत में ई

नाम मिलना) खैरात देने के काम से जो उस जाएदाद से दी गई जिसे इस्लाम के मना किए गए ममनुअ काम जिसे हराम कहते हैं उससे कमाया गया हो, या फिर एक गरीब शख़्स से खैरात देने वाले के लिए रहमत मांगी जाए अगरचे जो खैरात दी गई है वो उस माल से आई है जो इस तरह के नाजाइज़ तरीके से कमाई गई है और वो ये जानता है।

24- ये दावा करना के इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रहिमाहुल्लाहु तआला के ज़रिए किया गया कियास जाइज़/सही नहीं है कुफ़्र है।इस वजह से, वहावी काफ़िर बन गए हैं।

25- किसी भी जानी मानी सुन्नतों को नापसंद करना कुफ़्र है।

26- अगर एक शख़्स हदीस-ए शरीफ सुनता है, "**मेरी कब्र और मेरे मिंबर के बीच में जन्नत के बाग़ों में से एक बाग़ है**" और कहता है, "मैं कुछ नही देखता सिवाए एक कब्र, एक चटाई, और एक मिंबर के," तो वो एक काफ़िर बन जाता है।

27- इस्लाम की इस्लामी तालीमात से इंकार करना या इस्लामी तालीमात या इस्लामी आलिमों को हकीर मानना कुफ़्र है।

28- कोई भी जो ये इच्छा रखता हो के एक काफ़िर बन जाए वो ऐसा बन जाता है जैसे ही वो ये इरादा करता है के एक काफ़िर बन जाए।

29- कोई भी जो ये इच्छा रखता है के दूसरे काफ़िर बन जाएँ वो खुद एक काफ़िर बन जाता है अगर वो उनको काफ़िर इसलिए बनाना चाहता है क्योंकि वो खुद कुफ़्र को पसंद करता है।

30- एक शख़्स काफ़िर बन जाता है अगर वो ऐसे लफ़्ज़ कहे जो कुफ़्र का सबब बने इरादतन और इच्छा से।अगर वो ये लफ़्ज़ कहता है क्योंकि वो नहीं मानता के इन लफ़्ज़ों को कहने से कुफ़्र होता है, तो भी वो शख़्स ज़्यादातर इस्लामी आलिमों के मुताबिक एक काफ़िर बन जाता है।

31- जानबुझकर अमल में लाया गया कोई भी काम जोकि कुफ़्र का सबब जाना जाता है उसे करने से उसका नतिजा कुफ़्र ही निकलता है।बहुत

सारे आलिम ऐसे भी हैं जिनका कहना है के ये कुफ़्र का सबब है चाहे जब एक शख़्स को ये पता भी न हो के ये काम करना कुफ़्र की वजह बन सकता है।

32- कमर के इरद गिरद एक रस्सी की तरह बेलट (जुन्नार) पहनना या कोई भी ऐसी चीज़ पहनना जो कुफ़्र की अलामत है तो वो एक शख़्स को काफ़िर बनने का बाइस हो सकती है।अगर एक कारोबारी/ताजिर इन सबको काफ़िरों के मुल्क में अपने आपको छुपाने के लिए पहने/इस्तेमाल करे, तो वो एक काफ़िर बन जाएगा।इन सब चीज़ों का इस्तेमाल चुटकलों में या दूसरों को हँसाने के लिए करना भी एक शख़्स के लिए काफ़िर बनाने का सबब बन सकता है।

33- जब काफ़िर लोग अपने मज़हबी दिनों का जश्न मना रहे हों, तो उन मज़हबी चीज़ों को करना जिन्हें वो अमल में लाते हैं उस ख़ास दिन में तो ये भी कुफ़्र का सबब बनता है।इसलिए भी, उन चीज़ों को देना, इन मज़हबी पाक दिन में उनके लिए ख़ास है, उन्हें तोहफे के तौर पर देना भी कुफ़्र का बाइस है।

34- बयानात जो ये दिखाने के लिए दिए जाएँ के एक शख़्स अदबी आदमी है ये बहुत जानकारी वाला है और अकलमंद शख़्स है, या सिर्फ़ दूसरों को हैरान करने के लिए या दूसरों को हँसाने के लिए या दूसरों को ख़ुश करने के लिए ऐसा करना, कुफ़्र का सबब हो सकता है राए के ज़रिए (कुफ़्र-अल हुकमी)।कुछ ख़ास चीज़ों को कहना जबकि एक शख़्स तैश में हो तो ये भी राए के ज़रिए कुफ़्र का बाइस है।

35- अगर एक चुगली करने वाला ग़ीबत न करने से इंकार करे और दावा करे के उसने सिर्फ एक असलियत बताई थी एक ख़ास शख़्स के बारे में, तो ये इंकार भी कुफ़्र का बाइस है।

36- अगर एक लड़की, जिसकी शादी (उसके वालदेन के ज़रिए) एक मुसलमान लड़के के साथ (इस्लामी शादी के मुहाएदे जिसे कहते हैं) निकाह कर दिया गया जब वो बच्ची थी, वो इस्लाम को उसके अकीदे उसूलों को नहीं

जानती, या उनके बारे में पूछे गए सवालों के जवाब नहीं देती, शअर और सिने बलूगत को पहुँचने के बाद, उसका निकाह (शादी का मुहाएदा जिसे इस्लाम के ज़रिए माना गया) बातिल और मंसूख माना जाएगा। वो लड़की एक मुरतदद (बिदअती) है। यही कानून एक लड़के पर भी नाफिज़ होता है।

37- जब एक शख़्स [नाइंसाफ़ी से] एक मुसलमान का कत्ल करता है या कोई किसी दूसरे को फरमान देता है एक मुसलमान को कत्ल करने का, तो अगर एक शख़्स ये देख रहा है और अपनी रज़ामंदी के अल्फ़ाज़ बुदबुदाता है, जैसे के, "बहुत अच्छा!" तो वो एक काफ़िर बन जाता है।

38- ये कहना के फलाँ फलाँ शख़्स कत्ल कर दिया जाएगा कुफ़्र का सबब बन जाता है अगर इस्लाम के पेनल कॉड के मुताबिक वो शख़्स कत्ल नहीं किया गया।

39- अगर एक शख़्स दूसरे को नाइंसाफी के साथ मारे या कत्ल करे, तो उसके इस बेरहम काम को सही करार देना कुफ़्र (बईमानी) है इस तरह कहते हुए, मिसाल के तौर पर, "तुमने बहुत अच्छा काम किया। ये इसी के लायक था!"

40- अल्लाह के नाम पर झूठ बोलना ये कहकर, मिसाल के तौर पर, "जैसे के अल्लाह जानता है, मैं तुम्हें अपने बच्चों से ज़्यादा चाहता हूँ," कुफ़्र है।

41- अगर एक शख़्स उँचा मरतबा रखने वाला छींक दे और कोई उसकी मौजूदगी में उसे कहदे, (**यरहमुकुल्लाह**) तो उस शख़्स को बेरहमी से ये कहना, मिसाल के तौर पर, "तुम्हे इतने बड़े नरतबे वाले के साथ इस तरह बात नहीं करनी चाहिए! ये कुफ़्र है। [जब एक मुसलमान छींके, तो ये उसके लिए सुन्नत का काम है कहना। "अलहम्दुलिल्लाह"। और ये फर्ज़ का काम (किसी के लिए भी) है उनके लिए जो उसे सुने ये कहना "यरहमुकुल्लाह"।]

42- इस्लाम के अहकामात को संजीदगी से ना लेना भी कुफ़्र है।

43- अल्लाह तआला के रहम से नाउम्मीद होना भी कुफ़्र है।

44- पैसा, जाएदाद या सामान जो आमतौर पर ममनुअ (हराम) नहीं हैं लेकिन बाद में बाहरी सबब या वजह से जिसे **(हराम लि-ग़ैरिहि)** कहते हैं, मिसाल के तौर पर, चोरी की चीज़ें या चीज़ें जिन्हें मना किए हुए तरीकों से हासिल किया गया हो वो ममनुअ बन जाती हैं। उनको न जानना और उन्हें जाइज़ (हलाल) कहना कुफ्र का बाइस नहीं है। चीज़ें जैस सड़ा मांस, सुअर का गोश्त, और शराब जो महक में ममनुअ है उन्हें कहते हैं **(हराम लि-अएनिहि)** जाइज़ बताना कुफ्र है।

45- किसी भी बिना शक बताए गए गुनाहों को जाइज़ बताना कुफ्र है।

46- इस्लाम के ज़रिए इज़्ज़त दी गई चीज़ों को छोटा बताना या उनका मज़ाक उड़ाना, मिसाल के तौर पर, अज़ान (नमाज़ के लिए बुलाना) मस्जिदें, फिक्ह-की किताबें, ये सब कुफ्र का बाइस हैं।

47- रस्मी इबादतों को अदा करना जबकि एक शख़्स को पता है के वो पाक (वुज़ू) नहीं है ये भी कुफ्र का बाइस है।

48- ये भी कुफ्र है के अगर एक शख़्स को पता है के वो किब्ले के रूख के अलावा दूसरे रूख पर रस्मी इबादत कर रहा है। ये कहना के नमाज़ (रस्मी इबादत) को किब्ले की तरफ़ रूख करके अदा करना ज़रूरी नहीं है कुफ्र है।

49- एक मुसलमान को काफ़िर कहना उसकी बुरी शखसियत को खोलने के लिए कोई कुफ्र का बाइस नहीं होता। ये कुफ्र का बाइस तब है अगर उसे ऐसा कहना उस शख़्स की अपनी इच्छा का इरादा ज़ाहिर करना है के वो मुसलमान एक काफ़िर था।

50- एक गुनाह करना कुफ्र का बाइस नहीं बनता; ताहम ये कुफ्र की वजह बनता है इसे हकीर करने के लिए या बेध्यानी में क्या ये एक गुनाह है या नहीं।

51- इस बात पर यकीन न रखना के इबादत करना ज़रूरी है या ये

के गुनाहों से परे रहना ज़रूरी है, ये कुफ्र का बाइस है।

52- ये मानना के जो लोगों से टेक्स जमा किया जाता है वो हुक्मराँ (सुल्तान) की जाएदाद बन जाता है, ये कुफ्र का बाइस है।

53- काफ़िरों के मज़हबी रसूम को पसंद करना, ज़ुन्नार पहनना या कुफ्र वाले निशान इस्तेमाल करना बग़ैर शख़्स ज़रूरत के, उनको इज़्ज़त देना, ये सब कुफ्र है।

54- कोई भी एक शख़्स जो अपनी इच्छा से कसम खाए के, "फलाँ फलाँ के पास ये चीज़ है या फलाँ फलाँ के पास वो चीज़ नहीं है अगर ये सही नहीं है, तो मैं चाहे एक काफ़िर हो या मैं चाहे एक यहूदी हो," वो एक काफ़िर बन जाता है, चाहे उसका दावा सही है या नहीं।

55- किसी भी चीज़ को चाहना जोकि हराम (ममनुअ) है हर मज़हब में- जैसे के मिलावट, सौदमी, रिबा (सूद), झूठ, के वो हलाल (मंज़ूर) हो जाएँ, ये कुफ्र (गैर मज़हबी) है।

56- ये कहना "मैं सारे पैग़म्बरों में ईमान रखता हूँ, अगरचे, मुझे ये नहीं पता के क्या आदम अलैहिस-सलाम एक पैग़म्बर हैं या नहीं" ये कुफ्र है।

57- कोई भी जो ये नहीं मानता के मुहम्मद अलैहिस्सलाम आखिरी ज़माने के पैग़म्बर हैं (इंसाफ़ के दिन तक की मुददत) तो एक काफ़िर बन जाता है।

58- कोई भी जो कहे, "अगर जो पैग़म्बरों ने हमें इतलाअ दी है वो सही है, तब हम लोग वो हैं जो आखिरत में अज़ाब से बच जाएँगे," वो एक काफ़िर बन जाएगा। [इस मामले में, कुफ्र ये है के अगर पैग़म्बरों के लफ़ज़ों की सच्चाई को ऐसे शक के साथ कहा गया था।]

59- अगर किसी को कहा जाए, "आओ, नमाज़ (रस्मी इबादत) अदा करो," और वो जवाब दे, "मैं नहीं," तो वो एक काफ़िर बन जाएगा। ताहम, अगर उसका मतलब है "मैं इसे तुम्हारे हुकूम से नहीं पढूँगा, मैं इसे अल्लाह तआला के हुकूम से अदा करूँगा, तो वो एक काफ़िर नहीं बनता।

60- अगर किसी को कहा जाए, "अपनी दाढ़ी को मुट्ठी भर से छोटी मत छाँटो" या "अपनी दाढ़ी के हिस्से को अपनी मुट्ठी से लम्बी छाँटो" या "अपनी नाख़ून काटो," क्योंकि ये सब चीज़ें रसूलुल्लाह (अलैहिस-सलाम) की सुन्नत हैं, और जवाब हो, "मैं नहीं," तो वो एक काफ़िर बन जाएगा। यही उसूल बाकी दूसरी सुन्नतों पर भी नाफ़िज़ होता है। (ये कहना कुफ़्र/कुफ़र नहीं है "मैं इसे अदा नहीं करता तुम्हारी हिदायत की वजह से, मैं इसे अदा करूँगा क्योंकि ये रसूलुल्लाह की सुन्नत है। ये कुफ़र है अगर इसे सुन्नत या रसूलुल्लाह के हुकूम के इंकार करने के इरादे से किया जाए।)

61- जब एक शख़्स अपनी मूँछ अरास्ता करता है और दूसरा शख़्स उससे कहे "ये बेकार है," तो दूसरा शख़्स अपना ईमान खो देगा। [अपनी मूँछ को तराश्ना/आरास्ता करना सुन्नत है। वो दूसरा शख़्स सुन्नत को हल्का समझता है।]

62- कोई भी जो ये कहे "मैं तुम्हारे लिए बरकत वाला हो" उस आदमी को जिसने पूरे सिल्क के कपड़े पहने हों, तो वो अपना ईमान खो देगा।

63- अगर एक शख़्स मकरूह काम करता है, जैसे के किब्ले की तरफ़ टाँगे फैलाकर लेट जाए या किब्ले की तरफ़ थूके या पैशाब करे, और कहे, "ये चीज़ें मत करो, ये मकरूह हैं;" और दूसरा जवाब दे, "मेरी इच्छा है के मेरे सारे गुनाह इसकी तरह हों," वो अपना ईमान खो सकता है क्योंकि उसने मकरूह को ग़ैरअहम समझा।

64- अगर एक नौकर कमरे में दाखिल होता है और अपने मास्टर/मालिका को इस्लाम के ज़रिए बताए गए अखलाक के मुताबिक सलाम करता है, और कोई उसके मास्टर की मौजूदगी में उससे कहे, "मत बात करो! ये किस तरह एक नौकर के लिए ठीक हो सकता के वो अपने मालिक को कैसे सलाम करे?" वो शख़्स जिसने ये कहा वो एक काफ़िर बन जाता है। बहरहाल, अगर उसका मतलब उसे तमीज़ सीखाना है और कहे के उसे अपने मास्टर को संजिदगी के साथ, अपने दिल से सलाम करना चाहिए, तो वो एक काफ़िर नहीं

बन जाता।

65- ये कहना कुफ़र है के “ईमान बढ़ रहा है या घट रहा है।” अगर एक शख़्स इसे ईमान के कामल और यकीन के वास्ते से कहता है तो, ये कुफ़र नहीं है।

66- ये कुफ़र है कहना “किब्ले दो हैं।एक कावा, दूसरा जरूसलाम/जरूसलेम।” ये कुफ़र है अगर एक शख़्स अव कहे के यहाँ पर दो किब्ले हैं।अगर उसका मतलब हो के पहले बैत मुक़ददस जरूसलेम में कावा था, फिर कावा, किब्ला बन गया, तो ये कुफ़र नहीं है।

67- ये कुफ़र है के इस्लाम के एक आलिम के खिलाफ़ बुग़ज़ रखना बग़ैर किसी जाइज़ वजह के, या उसे कोसना।

68- अगर एक शख़्स कहे, “आग की इबादत करने वालों का ये माकूल रिवाज है के जब खा रहे होते हैं तो बात नहीं करते,” या, “ये अच्छा बरताव है आग की इबादत करने वालों का के जब एक शख़्स की बीवी महीने से होती है या दूध पिलाने वाली हालत में होती है तो उसके बराबर में नहीं सोते,” तो वो एक काफ़िर बन जाता है।

69- अगर एक शख़्स से पूछा जाए क्या वो एक ईमान वाला है, और वो जवाब दे “इंशाअल्लाह,” अगर वो जवाब के तौर पर “हाँ,” के अलावा और कोई वज़ाहत नहीं जानता, तो वो एक काफ़िर बन जाएगा।

70- अगर एक शख़्स दूसरे से कहे जिसका बच्चा मर गया हो, “अल्लाह तआला को तुम्हारे बच्चे की ज़रूरत थी,” वो शख़्स जिसने ये कहा वो एक काफ़िर बन जाएगा।

71- अगर एक औरत अपनी कमर के इतराफ़ काली रस्सी बाँध ले, ओर जब पूछा जाए तो वो जवाब दे “ये ज़ुन्नार है (एक पादरी की कमर की रस्सी),” वो काफ़िर बन जाएगी।

72- कोई भी जो हराम खाना खाने से पहले बिस्मिल्लाह पढ़े वो एक काफ़िर बन जाता है।ये उसूल उन हराम पर नाफ़िज़ हैं जो महक में हराम हों,

जैसे सड़ा गोश्त और शराब। ये दूसरी और हराम चीज़ों पर आएद नहीं होता जो महक में हराम नहीं। मिसाल के तौर पर, जबरन/छीने हुए खाने को खाने से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ना कुफ़्र नहीं है। क्योंकि छीनना हराम हैं, न की खाना।

73- ये कुफ़्र है के अपने कुफ़्र के साथ राज़ी रहना। आलिम एक शख़्स के बारे में इस फैसले पर राज़ी नहीं है जो दूसरे पर लानत भेजे ये कहते हुए, "अल्लाह तआला तुम्हारी रूह जब निकाले जब तुम कुफ़्र की हालत में हो।" अगरचे, अगर एक शख़्स दूसरे के कुफ़्र के साथ राज़ी हो, क्योंकि आखिरत में अज़ाब दाएमी और शदीद होगा उस शख़्स की बेरहमी और गुनाहों की वजह से, तो ये कुफ़्र नहीं है।

74- अगर एक शख़्स कहता है "अल्लाह तआला जानता है के मैंने फलाँ फलाँ चीज़ नहीं की," चाहे अगरचे वो जानता है के उसने वो चीज़ की है, वो एक काफ़िर बन जाएगा। उसने अल्लाह तआला के साथ लाइल्मी मंसूब की है।

75- अगर एक शख़्स एक औरत के साथ बग़ैर गवाहों के शादी करता है और अगर आदमी और औरत कहते हैं: "अल्लाह तआला और पैग़म्बर अलैहिस सलाम हमारे गवाह हैं," दोनो मर्द और औरत काफ़िर बन जाते हैं। इस वास्ते के, हमारे पैग़म्बर "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ग़ैब (पौशिदा) नहीं जानते थे जब आप ज़िंदा थे। ये कुफ़्र है इस बात का दावा करना के आप ग़ैब जानते थे। [सिर्फ़ अल्लाह तआला जिन्हें वो बताता है वो ग़ैब जानते हैं।]

76- अगर एक शख़्स कहे के वो चोरी या खोई हुई चीज़ों के बारे में जानता हैं, वो और जो उस पर यकीन करते हैं काफ़िर बन जाते हैं। चाहे वो कहे जिन्नों ने उसे बताया, वो फिर भी एक काफ़िर है। जिन्नात और पैग़म्बर ग़ैब नहीं जानते। [सिर्फ अल्लाह तआला और जिन्हें वो आगाह करे वो ग़ैब जान सकते हैं।]

77- अगर एक शख़्स अल्लाह तआला के नाम से हल्फ़ लेना चाहे

और दूसरा उससे कहे, “मैं नहीं चाहता के तुम अल्लाह तआला के नाम से हल्फ़ लो। मैं चाहता हूँ के तुम अपने अएज़ाज़ पर हल्फ़ लो,” वो एक काफ़िर बन जाता है।

78- अगर एक शख़्स दूसरे शख़्स से कहे जिसे वो पसंद नहीं करता, “मेरे लिए तुम्हारा चेहरा मौत के फरिश्ते की तरह है,” वो एक काफ़िर बन जाता है। मौत के फरिश्ते [इज़राईल अलैहिस्सलाम] एक बुलंद फरिश्ते हैं।

79- कोई भी जो ये कहे, “नमाज़ अदा न करना एक अच्छी चीज़ है,” एक काफ़िर बन जाता है। अगर किसी को बताया जाए, “आओ, नमाज़ (रस्मी इबादत) अदा करो,” ओर जवाब में वो कहे, “नमाज़ अदा करना मेरे लिए मुसिबत का काम है,” वो एक काफ़िर बन जाएगा।

80- कोई भी जो कहे “अल्लाह तआला आसमान में मेरे गवाह होंगे,” वो एक काफ़िर बन जाएगा क्योंकि उसने एक जगह अल्लाह तआला से मंसूब करदी। अल्लाह तआला जगह के साथ नहीं है।

81- कोई भी जो कहे “बाप” अल्लाह तआला के बारे में, वो एक काफ़िर बन जाता है।

82- अगर एक शख़्स कहे: “रसूलुल्लाह अलैहिस-सलाम खाने के बाद अपनी मुबारक उंगलियाँ चाटते थे,” और दूसरा शख़्स कहे, “ये तो ग़ैर मुनासिब चीज़ ऐसा करना,” तो दूसरा शख़्स एक काफ़िर बन जाएगा।

83- कोई भी ये कहे “हमारे पैग़म्बर अलैहिस-सलाम काले थे,” वो एक काफ़िर है। [काले कुत्तों को “अरब” कहना, या दूसरी ऐसी फैली हुई आदात को, नज़र अंदाज़ करना चाहिए।]

84- अगर एक शख़्स कहे, “रोज़ी अल्लाह तआला बनाता है और उसी के ज़रिए भेजी जाती है। अगरचे, इसके लिए चाहिए के उसके बन्दे काम करें,” ये बुत परस्ती है। इस वास्ते के, बंदों का काम अल्लाह तआला के ज़रिए तखलीक किया जाता है।

85- कोई भी जो ये कहे “यहूदी से बहतर इसाई होना है, या एक

इशतराकी होने से बहतर है के एक अमरिकन काफ़िर बन जाए," तो वो एक काफ़िर बन जाता है। एक शख़्स को इस तरह कहना चाहिए "यहूदी इसाईयों से ज़्यादा खराब हैं, इशतराकी इसाईयों से ज़्यादा खराब हैं।"

86- कोई भी जो कहे "एक काफ़िर होना भरोसा तोड़ने से बेहतर है," वो एक काफ़िर बन जाता है।

87- अगर एक शख़्स कहे, "मैं इस्लामी तालीम की तकरीरों के साथ क्या करूँ?" या "इस्लामी आलिम जिसके बारे में बात कर रहे हैं कौन इस काबिल है जो इसे कर पाए," या वो एक तहरीरी शहादत इस्लामी फरमान के साथ को ज़मीन पर फैंक दे, तो वो एक काफ़िर बन जाता है।

88- कोई भी जो दूसरे शख़्स के लफज़ जो कुफ़र का सबब बने उस पर हँसे, तो वो एक काफ़िर बन जाता है उस शख़्स की तरह जो उसे कह रहा हो। अगर वो पहले से हँस रहा था वो अपनी हँसी रोक नहीं पाया तो, वो एक काफ़िर नहीं होता।

89- अगर एक शख़्स कहे "मज़हब के आला आदमियों की रूहें हमेशा मौजूद रहती हैं," तो वो एक काफ़िर बन जाता है। अगर वो कहे "वो मौजूद हो सकते हैं," ये कुफ़र नहीं है। [अल्लाह तआला के महबूब बंदों की रूहें हाज़िर और दिखाई नहीं देती अल्लाह तआला की तरह। जब उनके नाम लिए जाते हैं वो हाज़िर होती हैं। उनके नाम लेने से पहले, वो वहाँ मौजूद/हाज़िर नहीं होतीं।]

90- कोई भी जो कहे "मैं नहीं जानता के इस्लाम क्या है," या "मैं इस्लाम नहीं चाहता," वो एक काफ़िर बन जाता है।

91- कोई भी जो कहे "अगर आदम अलैहिस-सलाम वो गैहूँ न खाते, तो हम गुनहगार नहीं होते," वो एक काफ़िर बन जाता है। ताहम, अगर वो कहता "हम ज़मीन पर न होते," ये मशकूक है के क्या वो एक काफ़िर बन जाएगा।

92- अगर एक शख़्स कहे "आदम अलैहिस-सलाम कपड़े बुनते थे,"

और दूसरा जवाब दे, "तो, हम बैज़ बनाने वाले के बेटे हैं," तो जवाब देने वाला एक काफ़िर बन जाएगा।

93- जब एक शख़्स काबिले माफ़ी गुनाह करता है और दूसरा उसे तौबा करने के लिए कहता है, अगर वो जवाब दे, "मैने ऐसा क्या किया है जिसके लिए तौबा करने की ज़रूरत है," वो एक काफ़िर बन जाएगा।

94- अगर एक शख़्स दूसरे से कहे, "चलो इल्म हासिल करें इस्लाम के एक आलिम की तकरीरों में हाज़िरी देकर या फ़िकह की किताबों को पढ़कर और ज़रूरी मज़हबी इल्म हासिल करके," और दूसरा ये जवाब दे "मैं इल्म के साथ क्या करूँगा," तो जवाब देने वाला एक काफ़िर बन जाएगा। इस वास्ते, इल्म को कमतर करना हुआ।

95- कोई भी जो तफ़सीर और फ़िकह की किताबों की बेहुरमती करे, इन किताबों को नापसंद करे, तो एक काफ़िर बन जाता है।

96- अगर एक शख़्स पूछे "तुम किसकी नसल से हो (आदम अलैहिस-सलाम)?" या "तुम किसकी कौम (इब्राहिम अलैहिस-सलाम) से तअल्लुक रखते हो?", "ईमान के रास्ते में तुम्हारा रहनुमा कौन है (**अबू मंसूर-ए मातुरीदी** या **अबूल हसन अली असहारी** दो में से हर एक)," "तुम्हारे कामों के रास्ते में कौन रहनुमा है" (यानी **इमाम-ए आज़म अबू हनीफ़ा, इमाम मालिक बिन अनस, इमाम मुहम्मद बिन इदरीस शाफिई या इमाम अहमद बिन हनबल** (रहमत-अल्लाहु तआला अलैहिम अजमईन), वो जो पूछ रहा है और जवाब नहीं जानता, तो वो एक काफ़िर बन जाता है।

97- कोई भी जो दावा करे एक खास हराम को के हलाल है काफ़िर बन जाता है। [ये खतरनाक है दावा करना के सिग्रेट पीना हराम है।]

98- ये चाहना के कोई चीज़ जो सारे मज़ाहिब में हराम है और जो अकल के मुताबिक नहीं है, उसे हलाल मानना कुफ़्र है। मिसाल के तौर पर; ये चाहना के मिलावट, सौडमी, पूरा भरने के बाद भी खाना, सूद लेना या देना हलाल होता। जैसे के शराब हर मज़हब में हराम नहीं है, तो ये चाहना के ये

हलाल होती, कुफ़र नहीं है।

99- ये कुफ़र है के जबकि बेकार बातें की जा रही हों या मज़ाक हो रहा हो तो कुरआन अल-करीम का इस्तेमाल किया जाए।

100- अगर एक शख़्स दूसरे शख़्स का नाम पुकारे याहया **(या याहया! हुज़-इल-किताबे)**, वो एक काफ़िर बन जाएगा।उसने कुरआन अल-करीम का मज़ाक उड़ाया।इसी तरह, कुरआन अल-करीम को पढ़ना मयुज़िक़ के साज़ों के साथ, जोकि डरामों, या गानों में इस्तेमाल होते हैं।

101- ये एक शख़्स के ईमान खोने का सबब बन सकता है अगर वो कहे: "मैं आ गया अब बिस्मिल्लाही" अगर एक कुछ चीज़ ज़्यादती/वाफ़िर मिकदार में देखे और कहे: **(माहलअकल्लाहु)** और वो इस लफ़ज़ का मतलब नहीं जानता, वो एक काफ़िर बन जाएगा।

102- अगर एक शख़्स दूसरे से कहे: "मैं तुम्हें अब बददुआ नहीं दूँगा।वो कहते हैं कोसना गुनाह से भरा है।" वो अपना ईमान खो सकता है।

103- कोई भी जो कहे "तुम फरिश्ते जिब्रईल के बछड़े की तरह नंगे हो" वो एक काफ़िर बन जाएगा।ये लफ़ज़ फरिश्ते का तमस्खर है।

104- यहाँ ये डर है के एक शख़्स अपना ईमान न खो दे अगर वो हलफों को अल्लाह तआला के नाम में जोड़ दे ऐसे लफ़्ज़ों पर जैसे: "मेरे बेटे के सिर पर" या "मेरे सिर पर।" मिसाल के तौर पर, अगर वो कहे: "वल्लाही, मेरे बेटे के सिर पर," वो अपना ईमान खो देगा।

105- कुरआन अल-करीम, मिलाद या इलाहीस को मौसिकी के साज़ों के साथ पढ़ना कुफ़र है।

106- ये हराम है के कुरआन अल-करीम, मिलाद, इलाहीस, सलवात-ए शरीफास को गुनाह से भरी महफ़िल में पढ़ना, चाहे अगर इसे इज़्ज़त के साथ किया जा रहा हो।इन्हें मज़े या तफ़रीह के लिए पढ़ना कुफ़र है।

107- अगर एक शख़्स अज़ान को न सुने और उसकी कदर न करे

जिसे सुन्नत के मुताबिक कहा जाए, वो फौरन एक काफ़िर बन जाता है।

108- वो जो कुरआन अल-करीम को अपनी समझ के मुताबिक वज़ाहत करे एक काफ़िर बन जाता है।

109- एक शख़्स जिसका ईमान उन अकीदों की रज़ा के मुताबिक नहीं हैं जो कुरआन अल-करीम में ओर हदीस-ए शरीफ़ में साफ तौर पर बताए गए हैं, या जो एक राए से मुजतहीदों के ज़रिए नशर किए गए हैं और जो मुसलमानों के बीच में जाने जाते हैं, वो एक काफ़िर बन जाता है।इस तरह का कुफ़र **(इल्हाद)** कहलाता है और कोई भी जो इस तरह के तरीके में यकीन करता है वो **(मुलहिद)** बन जाता है।

110- कोई भी जो एक काफ़िर को इज़्ज़त देते हुए मुखातिब करता है वो एक काफ़िर बन जाता है।

111- एक काफिर को इज़्ज़त से भरी चीज़ें कहना, मिसाल के तौर पर "मास्टर", कहना कुफ़र है।

112- कोई भी जो किसी दूसरे शख़्स के कुफ़र को रज़ामंदी दे वो खुद एक काफ़िर बन जाता है।

113- कुरआन अल-करीम जिन कैसेटस और रिकार्डस में रिकार्ड किए जात हैं वो भी मुसहाफ़-ए शरीफ़ (एक किताब जिसमें कुरआन अल करीम लिखा गया वो मुसहाफ़ कहलाता है) की तरह कीमती हैं।उनकी बेहुरमती करना कुफ़र है।

114- पैशनगाई करने वाले जो जिनों से मिलते हैं, या वो लोग जो जन्म पत्री इस्तेमाल करते हैं, और हर पूछे गए सवाल का जवाब देते हैं उनपर यकीन करना, या ये जादू देखने वाले क्या कहते हैं और करते हैं, चाहे अगर वो जो कहते हैं कभी सही भी हो सकता है, इसका मतलब हुआ के अल्लाह तआला के अलावा कोई दूसरा भी सब कुछ जानता है और जो वो चाहे कर सकता है।ये कुफ़र है।[साईन्सी इल्म से इंकार करना कोई कुफ़र नहीं है।]

115- ये कुफ़र है के एक सुन्नत को कमतर जानते हुए इसे ग़ैर अहम

जानते हुए छोड़ देना।

116- ये कुफ़्र है एक पादरी की कमर की रस्सी (ज़ुन्नार कहते हैं) को पहनना, मुरतियों की इबादत करना या इज़्ज़त देना, यानी, सलीबें, बुत या उनकी तस्वीरें, मज़हबी किताब की बेहुरमती करना जो इस्लामी उसलों को बताए, इस्लामी आलिम का मज़ाक उड़ाना, ऐसा कुछ कहना जिससे कुफ़्र का सबब बने, किसी चीज़ की बेइज़्ज़ती करना जिसे हमें इज़्ज़त करने का हुकूम दिया गया हो और किसी चीज़ की इज़्ज़त करना जिसकी बेइज़्ज़ती करने का हमें हुकूम दिया गया हो।

117- कोई भी जो कहे "एक जादूगर, अपने जादू के साथ, कुछ भी कर सकता है जो वो चाहे।उसकी जादूगरी मुकम्मल असर रखेगी," और वो जो इन लफ़्ज़ों को मानेंगे, वो काफ़िर बन जाएँगे।

118- अगर एक मुसलमान पक्के तौर पर जवाब दे जैसे के "हाँ," उस शख़्स को जिसने उसे काफ़िर पुकारा, वो एक काफ़िर होगा।

119- ये कुफ़्र है के अपनी जाएदाद में से जोकि हराम मानी जाती है उसमें से मस्जिदें तामिर कराने या खैरात देने या कोई और खैरात का काम उसमें से करने के बदले सवाब की उम्मीद रखना।

120- अगर एक शख़्स अपनी जाएदाद में से खैरात देता है जोकि बेशक हराम है, और बदले में सवाब कमाने की उम्मीद रखे, और वो गरीब जो खैरात लेता है, वो ये जानता है के उस माल में से है जो हराम है, वो कहता है: "अल्लाह तआला की रज़ा हो," और खैरात देने वाला या दूसरा शख़्स कहे: "आमीन (आमेन)," वो सब काफ़िर बन जाएँगे।

121- ये कुफ़्र है के दावा करना के एक औरत से शादी करलो जो हराम है शादी करने के बाद वो हलाल है।

122- ये कुफ़्र है के कुरआन अल-करीम को और मोलिद को मज़े के लिए रेडियो और लाऊड स्पीकरों में शराब खानों में या गुनाह वाली मजलीसों में सुनना।

123- ये कुफ़्र है के कुरआन अल-करीम को म्युज़िक के साज़ों के साथ पढ़ना।

124- कुरआन अल-करीम जो रेडियो या लाऊड स्पीकरों से सुनाई दे रहा है उसकी बेहुरमती करना चाहे अगरचे जो आवाज़ सुनी जा रही है वो कुरआन अल-करीम की अपनी नहीं है, लेकिन मकनातीसी लहरें ये भी कुफ़्र है।

125- ये कुफ़्र है किसी को या किसी चीज़ को "खालिक" कहना अल्लाह तआला के अलावा, कोई फर्क नहीं के एक शख़्स ने क्या दलालत दी।

126- ये कुफ़्र (ग़ैर मज़हबी) का बाइस है कहना अब्दुलकोएदुर, बजाए अबदुलकादिर के, जब इरादतन कहा जाए। इसी तरह ये कहने के साथ है अबदो बजाए अबदुल उज़ैज़ के, मेमो बजाए मुदम्मद के, हस्सो बजाए हसन के, और इबो बजाए इब्राहिम के। कुछ ताजिर लोग इन मुबारक नामों को अपने जूतों या चप्पलों पर लिखते हैं इश्तेहारों के लिए क्योंकि ये उनके नाम हैं, और वो जो इन्हें खरीदते हैं उन्हें अपने पैरों में पहनते हैं, और, इस तरह, उन पर चढ़ जाते हैं। ये डर होता है के दोनो ही जिसने उसे लिखा और वो जो उन पर चढ़ रहा है वो अपना ईमान खो सकते हैं।

127- नमाज़ अदा करना जबकि एक शख़्स जानता है के उसने रस्मी वुज़ू अदा नहीं किया है तो ये कुफ़्र है। एक सुन्नत को नापसंद करना कुफ़्र है। सुन्नत को अहमियत न देना भी कुफ़्र है।

128- ये दावा करना "हम पीरों की कब्रों को गिरा रहे हैं क्योंकि हमें खतरा है के जाहिल ये समझेंगे के ये खालिक हैं," कुफ़्र है।

129- किसी को भी, खासतौर से अपने खुद के बच्चे को काफ़िर बनने का सबब बनना कुफ़्र है।

130- ये कुफ़्र है के दावा करना के ज़िना और लोंडियाबाज़ी/सौडमी की इजाज़त है।

131- ये कुफ़र है के हराम को अहमियत न देना जिसे नास [यानी, आयत या हदीस] के ज़रिए या इजमा [सहाबत अल-करीम और ताबिअन के एक act या बयान के ज़रिए, मुतफिक राए, या ऐसे मामलों पर रज़ामंदी] के ज़रिए बताया गया।

132- बड़े गुनाहों को मसलसल करते रहना, उनको करने में बज़िद रहना, एक शख़्स को काफ़िर बनने की तरफ़ मोड़ देती है। ये कुफ़र है नमाज़ की तरफ़ अहमियत को न मिलाना।

133- ये कुफ़र है एक काग़ज़, कवर, या इबादत की दरी को ज़मीन पर रखना, अगर उन पर एक इस्लामी तहरीर है या चाहे एक इस्लामी हुरूफ़ ही क्यों न हो [अगर ये काम उनकी बेहुरमती करने के लिए किया गया।]

134- ये कहना "अबू बकर सिददीक़ और उमर अल फारूक को खालीफा बनने का कोई हक नहीं था," ये कुफ़र है।

135- ये कुफ़र है के एक मरे हुए आदमी से कुछ उम्मीद करना, अगर एक शख़्स ये माने के मरा हुआ शख़्स कुछ तखलीक कर सकता है। [सिर्फ अल्लाह तआला खालिक है।]

136- ये बहुत नामुनासिब और कुफ़र है अल्लाह तआला को "बड़ा बाप पुकारना जो चीज़ें जल्दी बख्श देता है।"

137- ये फ़र्ज़ है के मरे हुए को ज़मीन में दफ़नाना। अगर एक शख़्स जो इस काम से परे रहे, इसे कोई अहमियत न दे और साईन्स के बारे में उज़र दे, कहे: "ये दकियानूसी है मरे हुए को दफ़नाना। ये ज़्यादा बहतर है के उन्हें बुधों, ब्राहमणों या इशतराकी का काफ़िरों की तरह जला दो," वो एक काफ़िर बन जाता है।

138- ये कुफ़र है के अल्लाह तआला के एक प्यारे बंदे को दिल से या ज़ुबान से इंकार करना, चाहे वो प्यारा बंदा ज़िंदा हो या मुरदा।

139- ये कुफ़र है के अल्लाह तआला के प्यारे बंदों की तरफ़ और इस्लामी आलिमों की तरफ़ नापसंदिदगी रखो जो इस्लामी तालीम के मुताबिक

काम कर करते हैं।

140- ये कुफ़र है कहना के औलिया (फकीर) इस्मा (पाकी) की सिफ़त रखते हैं।[इस्मा का मतलब है किसी भी वक्त कोई भी गुनाह नहीं करते।ये सिफ़त सिर्फ पैग़म्बरों के लिए खास है।]

141- ये डर है के कोई भी जिसने बातिन के इल्म से कोई हिस्सा नहीं लिया [अंदरूनी, पौशिदा इल्म दिल और रूह से ताअल्लुक रखने वाली] वो एक काफ़िर की तरह मर जाएगा।इस इल्म में सबसे कम दर्जे का हिस्सा रखने वाला इसकी मौजूदगी में ईमान रखने वाला है।

142- ये कुफ़र है के कुरआन अल-करीम को इस तरह पढ़ना जिस तरह इससे पहले किसी भी इस्लामी आलिम ने नहीं पढ़ा, चाहे अगर इस तरह किरअत करने से उसके मआनी और लफ़्ज़ों में कोई बिगाड़ पैदा न हुआ हो।

143- ये कुफ़र है के इसाई पादरियों की किसी खास इबादत की चीज़ को इस्तेमाल किया जाए।

144- ये कुफ़र है ये मानना के एक वाक्या अपने आप रोनुमा होता है, इस तरह कहना के जानवरों का एक अकेले खलिए से जानदार चीज़ों से पनपना और आखिर में इंसानी मखलूक।

145- कोई भी जो नमाज़ अदा नहीं करता मकसद से, जो उसकी कज़ा की नीयत नहीं करता, जो डरता नहीं के आखिरत में उसे सज़ा मिलेगी इस छोड़ने की वजह से, वो हनफी मसलक के मुताबिक एक काफ़िर होता है।

146- ये कुफ़र है काफ़िरों की इबादत करना, जैसे के म्युज़िक के साज़ों को बजाना एक अज़ा या एक घंटी की तरह, जो वो अपने गिरजाघरों में खेलते हैं, मस्जिदों में, या ऐसी चीज़ों का इस्तेमाल करना जिन्हें इस्लाम ने कुफ़र की अलामते बताया है, जबकि उनकी वहाँ पर कोई ज़रूरत नहीं (सख्त ज़रूरत या ज़बरदस्ती)।

147- वो जो असहाब-ए किराम को कोसते हैं वो मुलहिद कहलाते हैं।मुलहिद एक काफ़िर होता है।

148- ये कुफ़र है के एक काफ़िर को उसकी तस्वीर टाँग कर इज़्ज़त देना।

149- ये कुफ़र है सलीबों, सितारों, सूरज, गायों या ऐसी कोई दूसरी चीज़, तस्वीरें या बुत को इज़्ज़त देना, ये मानते हुए के ये या वो जो उन्होने बनाए हैं वो रूहानी सिफ़ात रखते हैं जैसे के तखलीक करना वो जो चाहें या बीमारी का इलाज करना।

150- कोई भी जो हज़रत आएशा पर बोहतान लगाए [कोई जो कहे वो एक मिलावटी/बनावटी थीं] या वो जो ये नहीं मानते के उनके बाप एक सहाबी हैं वो एक काफ़िर बन गया।

151- ये एक यकीनी इल्म है के इसा अलैहिस-सलाम आसमान से उतरेंगे। कोई भी जो ये नहीं मानता वो एक काफ़िर बन जाता है।

152- एक शख़्स को जिसे कुरआन अल-करीम में या हदीस-ए शरीफ़ में जन्नत की खुशी की खबर सुनाई गई हो उसे एक काफ़िर बुलाना, कुफ़र का बाइस है।

153- ये एक बहुत बड़ा जुर्म है के आयत-ए करीमाओं और पाक सलफ़ के ज़रिए (मुसलमानों की पहली तीन नसलें) उनकी वज़ाहत को बिगाड़ने की कोशिश करना, जोकि साईन्स और साईन्सी तर्जुबात से परे हैं और साईन्स से उसका कुछ लेना देना नहीं, इस तरह साईन्सी इल्म में वो रज़ा के साथ महसूस किए जा सकते हैं। जो कोई भी ऐसी तफसीर या तर्जुमा करता है काफ़िर बन जाता है।

154- अगर एक लड़की जो मुसलमान कहलाई जाती है जब बाशअर होती है और सिने बलूग़त को पहुँचती है इस्लाम को नहीं जानती, तो वो एक काफ़िर होती है बग़ैर मज़हब के। यही उसूल/कानून एक मर्द बच्चे पर भी आएद होता है।

155- ये एक मुसलमान औरत के लिए हराम और गुनाह से भरा है बाहर जाना जबकि उसका सिर, बाज़ू और टाँगे खुली हों और उन्हें मर्दो को

दिखाना। अगरचे वो इस हकीकत को कमतर जानती है, अगर वो इसे कोई अहमियत नहीं देती तो, वो अपना ईमान खो देती है, वो एक काफ़िर बन जाती है।

156- फर्ज़ और हराम जो हमारे पैग़म्बर अलैहिस-सलाम ने बताए वो कुरआन अल-करीम में साफ़ बताए गए फर्ज़ और हराम की तरह कीमती हैं। वो जो उन्हें नहीं मानते, वो जो उनसे इंकार करते हैं अपना ईमान खो देते हैं।

157- एक शख़्स को रूकू की तसबीह में अज़ीम 'ज़ी' के साथ कहना चाहिए जिसका मतलब है मेरा रब अफ़ज़ल है। अगर, इसके बजाए, इसे 'ज़े' के साथ बोल दिया तो इसका मतलब है, 'मेरा रब मेरा दुश्मन है', और सलात (नमाज़) बातिल और खारिज हो जाएगी, मआनी किसी चीज़ से बदल जाना कुफ़र का बाइस था।"

158- एक शख़्स अपना ईमान खो देता है अगर कहे, 'कितनी खुबसूरती से तुमने किरअत की!' एक हाफिज़ को जो कुरआन अल-करीम को खुश आहंगी से किरअत कर रहा था। ये इसलिए क्योंकि वो जो किसी चीज़ के लिए 'अच्छा' कह रहा है जोकि हराम है, चारों मसलकों के मुताबिक, वो एक काफ़िर (ग़ैर मज़हबी) बन जाता है। अगर उसका मतलब है उसकी अवाज़ तो वो एक काफ़िर नहीं बनता।

159- कोई भी जो ये न माने के फरिश्तें और जिन्नात मौजूद हैं वो एक काफ़िर बन जाता है।

160- कुरआन अल-करीम सतरें साफ़ और मशहूर मआनी देती हैं। कोई भी जो मज़हबी फिरके जिसे कहते है बातिनीस (इसमाइलीस) उनकी तकलीद करते हैं उनके मआनी को बिगाड़ते हुए तो वो एक काफ़िर बन जाता है।

161- जादू से सलूक करते वक्त, अगर एक शख़्स कहे या कुछ ऐसा करदे जिससे कुफ़र की वजह बने, वो एक काफ़िर बन जाता है।

162- अगर एक शख़्स एक मुसलमान को "काफ़िर" कहे [या अगर एक शख़्स एक मुसलमान को एक पादरी या इशतराकी बुलाए], और ये माने के वो मुसलमान एक काफ़िर है असल में, वो ख़ुद एक काफ़िर बन जाता है।

163- एक शख़्स जो इबादतें करता है और फिर भी शुबह में रहता है क्या उसका ईमान कायम है, महसूस करता है के उसके बहुत सारे गुनाह हैं और सोचता है के उसकी इबादतें उसे नहीं बचा पाएंगी, तो उसके ईमान की मज़बूती पर सवाल है।

164- पैग़म्बरों को नम्बर देने का मतलब ये हो सकता के एक ग़ैर-नबी भी एक नबी थे या इसका मतलब ये हो सकता है के नबी की नब्बुवत को कुबूल न करना। ये कुफ़र है। इस वास्ते, एक पैग़म्बर से मुंकर होने का मतलब है सारे/हर एक पैग़म्बर से इंकार करना।

एक मुसलमान, मर्द या औरत, अपना ईमान खो देता/देती है जब वो ये कहे या कुछ चीज़ करे जिसे इस्लामी आलिमों के ज़रिए मुतफ़िक राए से कुफ़र की वजह बयान किया गया, और जो वो जानता/जानती है के अगर करेंगे तो कुफ़र का बाइस होगा, लेकिन वो इसे जानबुझकर [इच्छा से, किसी दबाव के बग़ैर] करता/करती है, चाहे वो इसे करे या कहे संजिदगी के साथ या मज़ाक के साथ, इस बात से परे के कोई क्या कह रहा है ये कोई इसका कानून नहीं है। वो शख़्स एक **(मुरतद)** (मुश्रिक) बन जाता है। कुफ़र का ये दरजा **(कुफ़र-ए इलादी)** कहलाता है। उस शख़्स के पिछले सवाब जो कुफ़र-ए इलादी के ज़रि एक मुरतद बन गया सब बातिल और खारिज हो जाएंगे। अगर ये मुरतद तौबा करले, तो उसकी पिछली इबादतों के सवाब वापिस नहीं मिलेंगे। अगर वो मालदार है, उसे हज दोबारा करना होगा। ये उसके लिए ज़रूरी नहीं है के अपनी सावका सलात को दोबारा अदा करे, जो ज़कात दे चुका है उसे दोबारा दे, या वो रोज़े दोबारा रखे जो वो अदा कर चुका है उस दौरान जबकि वो एक मुरदत था। लेकिन ये ज़रूरी है के अपने मुरतद होने से

पहले जो इबादत के काम उसने नहीं किए थे उन्हें अदा करे। **तौबा के लिए सिर्फ कलिमा-ए शहादत कह लेना काफ़ी नहीं है। जिन चीज़ों की वजह से मुरतदद बना था उनकी भी तौबा करनी चााहिए।** [उसे उसी दरवाज़े से इस्लाम में दाखिल होना होगा जिस से वो बाहर निकला था।]

अगर एक शख़्स कहे या कुछ चीज़ करे जिसका उसे पहले पता नहीं था के ये मुरतदद की वजह बन सकता है, या एक शख़्स जानबुझकर एक लफ़्ज़ कहे जोकि इस्लामी आलिमों के ज़रिए मुतफ़िक राए से बयान नहीं किया गया वो मुरतदद का सबब हो सकता है, इस मामले में, ये शुबह वाली बात है के क्या उसने अपना ईमान खो दिया या अगर उसका निकाह खत्म हो गया। अहतियात के तौर पर, ये बहतर है के वो अपना ईमान और निकाह दोबारा कायम करे। इसे **(कुफ़र-ए जहली)** (कुफ़र-ए लाइल्मी) कहते हैं किसी लफ़्ज़ को जाहिर करना जिसे तुम नहीं जानते के वो लादीन का सबब बन सकती है। इन मामलों से लाइल्मी जाहिर करना एक उज़र नहीं है, और ये एक बड़ा गुनाह है एक मुसलमान के लिए। इस वास्ते एक मुसलमान के लिए ये फर्ज़ है के उन चीज़ों को सीखना जो हर किसी के लिए जानना ज़रूरी हैं। एक शख़्स का निकाह और ईमान बातिल नहीं होता जब वो एक लफ़्ज़ को जाहिर करे जो लादीनी का सबब बनता है। अगर हाादसाती तौर पर कहे, घबराहट में या वज़ाहत करने की हालत में। इस मामले में, ये अहतियात करना चाहिए के तौबा और इस्तिग़फ़ार करले, वो तजदीद-ए ईमान (एक शख़्स के ईमान को बहाल करना) करना हुआ।

एक काफ़िर एक मुसलमान बन जाता है कलिमा-ए तौहीद को कहकर। इसी तरह, एक मुसलमान एक लफ़्ज़ कहकर काफ़िर बन सकता है। अगर एक मुसलमान की हरकत या बयान से एक सौ मआनी निकलते हैं, और अगर उनमें से एक लफ़्ज़ ये निशानदही करे के वो एक मुसलमान है जबकि उनमें से निन्यानवें ने दिखाया के वो एक काफ़िर है, तो हमें कहना

पढ़ेगा के वो एक मुसलमान हैं। यानी, निन्यानवें मआनी जो कुफ़र की मौजूदगी की निशानदही करते हैं वो हिसाब में नहीं लिए जाते। बाकी बचा हुआ एक मआनी जो ईमान की मौजूदगी की निशानदही करता है वो हिसाब में लिया जाता है। हमारे ये लफ़ज़ गलत न समझे जाएँ। इसे गलत न समझे जाने के तरीके से, दो नुकतों पर ग़ौर करना चाहिए। पहला, वो शख़्स जिसका बयान या हरकत सवाल में है उसका मुसलमान होना। जब एक फ्रेंच आदमी कुरआन अल-करीम की तारीफ़ करता है, या एक अंग्रेज़ शख़्स कहे के वहाँ सिर्फ एक खालिक है, तो ये नहीं कहा जा सकता के वो मुसलमान हैं। दूसरा नूकता जिस पर के ग़ौर दिया जाए वो है के वाहिद बयान या एक अकेली हरकत से एक सौ मआनी के बारे में क्या कहा गया। अगर, ताहम, सौ बयानात में से एक ईमान की निशानदही करता है जबकि बिन्यानवें उनमें से कुफ़र दिखाते हैं, तो हम ऐसे शख़्स को मुसलमान कहने का हुकूम नहीं दे सकते।

हर मुसलमान को हर सुबह और शाम मंदरजाज़ेल ईमान की दुआ कहनी चाहिए और इस तरह एक शख़्स को तौबा करनी चाहिए और अपना ईमान और निकाह तजदीद कराना चाहिएः

"अल्ला हुम-म इन्नी अऊज़ु बिक मिन अन उश्रिक-बि-क शै अंव वअना आलमु व अस्तग़्फिरूक लिमा ला-आलमु इन्नी-क अनता आलमुल-गुयूब।"

"अल्ला हुम-म इन्नी उरीदु अन उजददिदल ईमाने व-इन्नी का हा तजदीदेन बि-कोलि ला-इलाहि इल्लल्लाह मुहम्मदन रसूलुल्लाह।"

अपने ईमान को खोना नहीं और बराबर बनाए रखना

1- हमें ग़ैब में यकीन रखना चाहिए।[ग़ैब में ईमान रखना यानी साबित करना, के माना और मंज़ूरी के साथ यकीन किया उस मज़हब में जिसे रसूलुल्लाह ने पैग़म्बर के तौर पर बताया उसे बग़ैर दिमाग़, तर्जुबे और फ़लासफ़ी की सलाह से ये देखना के वो उसके मुताबिक है भी या नहीं।]

2- हमें ये मानना चाहिए के सिर्फ़ अल्लाह तआला और वो जो उसके ज़रिए आगाह किए गए ग़ैब को जानते हैं।

3- हमें यकीन रखना चाहिए, यानी, हराम को हराम मानना चाहिए।

4- हमें यकीन रखना चाहिए, यानी, हलाल को हलाल मानना चाहिए।

5- हमें अल्लाह तआला के गुस्से से डरना चाहिए और अपने आपको उसके आज़ाब से महफ़ूज़ नहीं समझना चाहिए।

6- हमें उसकी शफ़कत से नाउम्मीद नहीं होना चाहिए।इस हालत में के एक शख़्स इस बात से मुंकर हो के उसने कुछ किया है जो लादीनी का सबब बने, इसका मतलब है तौबा (तासीफ़)।अगर एक मुरतदद (एक शख़्स जो इस्लाम से मुंकर हो गया हो) बग़ैर तौबा (माफ़ी) के मर जाए, तो उसे दोज़ख में हमेशा के लिए आज़ाब हासिल झेलना पड़ेगा।इसलिए, हमें कुफ़र से डरना चाहिए और कम बोलना चाहिए।एक हदीस-ए शरीफ़ में ये अहकाम हैः **(हमेशा वो कहो जो इकाबल मंद हो, फाएदे वाली चीज़ें बताओ।या खामोश**

रहो!) हमें संजिदा होना चाहिए, मज़ाक नहीं करना चाहिए। हमें सबब और अकल के साथ नामुनासिब चीज़ें नहीं करनी चाहिए। हमें अल्लाह तआला से लगातार ये दुआ माँगते रहना चाहिए गिड़गिड़ा कर के वो हमें कुफ़्र से बचाए।

चीज़ें जो एक ईमान वाले के मौजूदा ईमान को खोने का सबब बनें

1- बिदअत रखने वाला बनना। यानी, गलत यकीन रखना। [कोई भी जो भटक जाए, चाहे एक ज़रा सा, उस अकीदे से जिसे अहल अस-सुन्नत के आलिमों ने बताया तो वो एक बिदअती या एक काफ़िर बन जाता है।]

2- कमज़ोर ईमान रखना, यानी, एक ईमान बग़ैर अमल के।

3- एक शख़्स के जिस्म के नौ रूकनों में किसी सही रास्ता भटक जाना।

4- एक बड़ा गुनाह लगातार करते रहना।

5- अपना एक मुसलमान होने के लिए शुक्रिया अदा न करना।

6- बग़ैर ईमान के मरने का ख़ौफ़ न होना।

7- ज़ुल्म करना।

8- अज़ान को न सुनना जो सुन्नत के मुताबिक अदा की जाए।

9- अपने वालदेन से बाग़ी होना।

10- कस्मों को अकसर खाना, चाहे अगर वो सही हों।

11- नमाज़ में तादील-ए अरकान को छोड़ना।[तादील-ए अरकान का मतलब है बेहरकत रहना इतना लम्बा जितना के "सुब्हानल्लाह" कह सके नमाज़ में चार जगहों पर साकन रहकर, नाम के तौर पर रूकू में, रस्सी वाँधले।

12- ये मानना के नमाज़ ग़ैर अहम है और नमाज़ को सीखने में और अपने बच्चों को उसे सीखाने में कोई अहमियत न देना।जो नमाज़ अदा करते हैं उनकी नमाज़ में रूकावटें पैदा करना।

13- नशीली चीज़ों को पीना।

14- ईमान वालों को अज़ियतें देना।

15- मज़हबी तालीम को बेचने के लिए अल्लाह तआला का प्यारा नौकर होने का झूठा दावा करना।

16- अपने गुनाहों को भूल जाना, उन्हें हलका समझते हुए।

17- गमंडी होना, अपने आप से प्यार होना।

18- अपने आपको अपनी तालीम और इबादत के कामों की वजह से दूसरों से बरतर समझना।

19- मुनाफ़िक होना, दोहरे चेहरे वाला।

20- लालची होना, मुसलमान दोस्तों से हसद रखना।

21- अपनी हुकूमत या अपने मालिक के अएकामात जो इस्लाम के मुनासिब हों उन पर अमल न करना।

22- ये दावा करना, ये जानने से पहले, के फलाँ शख़्स “अच्छा” है।

23- लगातार झूठ बोलते रहना।

24- अहल अस-सुन्ना के आलिमों की मज़हबी तालीम को नज़रअंदाज़ करना।

25- जो सुन्नत है उससे लम्बी मूँछे रखना।

26- आदमियों के लिए, सिल्क/रेश्मीन कपड़े पहनना।

27- चुग़लखोरी पर डरे रहना।

28- अपने दुश्मनों से बुरा बरताव करना। ये एक गुनाह है चाहे अगर वो काफ़िर ही क्यों न हों।

29- दुनियावी नतीजों/मामलों के लिए अकसर गुस्सा हो जाना।

30- फ़ैज़ [सूद] देना या लेना।

31- गमंड के लिए लम्बे लिबास पहनना।

32- जादू के अमल करना।

33- अपने महरम रिश्तेदारों से मिलना छोड़ देना जो इस्लाम पर अमल करते हों।

34- जिन्हें अल्लाह तआला प्यार करता है उनसे प्यार न करना, और उन्हें प्यार करना जो इस्लाम के खिलाफ़ हों। **[हुब्ब-ए फ़िल्लाह, बुग़हद-ए फिल्लाह ईमान के लिए लाज़मी है।]**

35- तीन दिन से ज़्यादा अपने मुसलमान भाई से नफ़रत रखना।

36- ज़िना, ज़िनाकारी का इरतकाब करते रहना।

37- लोंडियाबाज़ी का इरतकाब करना और उसके लिए तौबा न करना।

38- फ़िकह की किताबों में दर्ज और सुन्नत के मुताबिक अज़ान को न देना।सुन्नत के मुताबिक दी गई अज़ान को न सुनना।

39- एक शख़्स को देखते हुए जो हराम का इरतकाब कर रहा हो, और चाहे अगरचे उसके बस में हो, फिर भी उसे रोकने की कोशिश न करना, कम से कम गन के मश्वरे के साथ, उस चीज़ से रोकने के लिए जोकि हराम है।

40- अपनी बीवी, बेटी या दूसरी किसी भी औरत को रज़ामंदी देना के उसे खबरदार करने का हक है के, सड़कों पर जा सकती हैं जबकि उनके सिर, बाज़ू, टाँगे न ढंकी हों, या ज़ेवर पहनकर और खुशबूदार लिबास पहनकर और लोगों से बात करना जो उनके लिए महरम न हों।

बहुत संगीन गुनाह हैं [बहत्तर उनमें से नीचे हैं।]

1- कत्ल का इरतकाब करना।

2- ज़िना, ज़िनाकार का इरतकाब करना।

3- लोंडियाबाज़ी करना।

4- नशीली चीज़ें पीना।[बीयर पीना हराम है।]

5- चोरी करना।

6- खुशी के लिए मनशियात का इस्तेमाल करना।

7- ग़ज़ब का इरतकाब करना।

8- एक झूठा गवाह बनना।

9- रमज़ान के महीने में मुसलमानों के दरमियान अवाम में खाने के लिए।

10- फ़ैज़ [सूद] की अदाएगी करना या लेना।

11- अकसर कसमों की कसम खाना।

12- अपने वालदेन के बाग़ी होना।

13- अपने महरम रिश्तेदारों से मिलना तर्क कर देना जो इस्लाम को मानते हों।

14- जंग के दौरान, लड़ाई छोड़ना और दुश्मन से भाग जाना।

15- यतीमो के माल को हड़पना।

16- नापने या तौलने में धोका करना।

17- नमाज़ों को उनके मुकर्रर औकात से पहले या बाद में अदा करना।

18- अपने साथी मुसलमान का दिल तोड़ना।[ये काबे को खत्म करने से ज़्यादा गुनहगार है।] [कुफ़र के बाद, एकदिल तोड़ने से ज़्यादा कोई गुनाह नहीं जिससे अल्लाह तआला नफ़रत करता है।

19- किसी चीज़ को करना जो रसूलुल्लाह "सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम" ने नहीं कही और ये दावा करना के ये एक हदीस-ए शरीफ़ है।

20- रिश्वत कुबूल करना।

21- सच्ची गवाही देने से बचने के लिए।

22- अपनी जाएदाद की ज़कात और अशर को न देना।[ज़कातः एक खास रकम को जाएदाद की खास इकसाम के लिए लोगों की बाअस इक्साम को देना (जोकि सालाना दिया जाता है और एक फर्ज़ है); अशरः

पैदावार की ज़कात जो एक शख़्स की ज़मीन से हासिल होती है।]

23- उनके लिए जिनके पास ताकत है, किसी को न रोकना जबकि वो एक गुनाह का इरतकाब कर रहा हो।

24- जानदार जानवर को जलाना।

25- कुरआन-अल करीम को याद करने के बाद भूल जाना के उसे किस तरह पढ़ते हैं।

26- अल्लाह तआला की शफ़कत से नाउम्मीद होना।

27- लोगों को धोका देना, चाहे वो मुसलमान हों या ग़ैर मुस्लिम हों।

28- सुअर/खिंज़िर खाना।

29- असहाब-ए किराम की तरफ़ नापसंदिदगी रखना। उनमें से किसी एक के बी बारे में बुरा बोलना।

30- जब किसी का पेट भर जाए, उसके बाद भी खाते रहना।

31- औरतों के लिए, अपने शौहरों के बिस्तर से परहेज़ करने के लिए।

32- औरतों के लिए, अपने शौहरों की इजाज़त के बग़ैर दूसरों से बाहर मिलने के लिए जाना।

33- एक पारसा औरत को बदकार कहना।

34- नमीमा करना, यानी, औरतों के बीच में अलफ़ाज़, गपशप जैसी चीज़ें।

35- अपने अवरत (शर्मगाहों) हिस्सों को खोलना। [एक आदमी के अवरत हिस्से उसकी नाभी घुटनों के निचले हिस्सों के बीच में होते हैं। एक औरत के अवरत हिस्सों में बाल, बाज़ू और टाँगे शामिल हैं।] एक शख़्स के अवरत हिस्सों को देखना हराम है।

36- सड़ा हुआ गोश्त खाना, या दूसरों को इसे खिलाने की वजह बनना।

37- अमानत में खयानत करना।

38- एक मुसलमान की चुग़लखोरी करना।

39- हासिद होना।

40- अल्लाह तआला का साथी मंसूब करना।

41- झूठ बोलना।

42- अपने आपको दूसरों पर अफ़ज़ल समझना।

43- वारिस को उसकी विरासत से महरूम रखना जो किसी ने अपने मरते वक्त दी थी।

44- कंजूस होना।

45- दुनिया के लिए चाह होना।

46- अल्लाह तआला के अज़ाब से न डरना।

47- एक हराम को [एक चीज़ जो ममनुअ है] हराम न जानना।

48- हलाल को [एक चीज़ जिसकी इजाज़त दी गई हैं] हलाल न समझना।

49- ज्योतिष में यकीन रखना, और वो जो कहें नामानूम के बारे में।

50- इस्लाम को छोड़ना, एक मुरतदद बनने के लिए।

51- नामहरम औरतों और लड़कियों को देखना, यानी, (लालसा) से देखना उन्हें जिन्हें देखना हराम है।

52- औरतों के लिए, आदमियों की तरह पहनना।

53- आदमियों के लिए, औरतों की तरह पहनना।

54- हरम-ए काबा कौ हदूद के अंदर एक गुनाह का इरतकाब करना।

55- अज़ान [इबादत के लिए बुलाना] अदा करना या नमाज़ें [रस्मी इबादतें] अदा करना उनके मुकर्रर औकात से पहले।

56- रियास्त, कबानिन के हुकूम से बाग़ी होना।

57- अपनी बीवी के अवरत हिस्सों को अपनी माँ के अवरत हिस्सों के साथ मवाज़ना करना।

58- अपनी सास की कसम खाना।

59- किसी भी औज़ार से एक दूसरे पर निशाना लगाना।

60- कुत्ते के ज़रिए कुछ भी छोड़ा गया खाना और पीना।

61- जो तुमने महरबानियाँ की हैं उनका फ़ायदा उठाने पर ज़ोर देना।

62- [आदमियों के लिए] रेशमीन कपड़े पहनना।

63- जिहालत पर ज़ोर देना [अहल अस-सुन्नत के अकीदे, फर्ज़, हराम, और सारे ज़रूरी इल्म को न सीखना]।

64- एक कसम उठाना कुछ कहते हुए जो अल्लाह तआला के नाम में नहीं हो या जिसे इस्लाम के ज़रिए न बताया गया हो।

65- इल्म (तालीम) को नज़रअंदाज़ करना।

66- ये न समझना के लाइल्मी एक दर्द है।

67- काबिले माफ़ी गुनाहों को बार बार इरतकाब करने पर ज़ोर देना।

68- अकसर ज़ोर से हँसना।

69- जुनूब की हालत में इतना लम्बा रहना के एक रस्मी इबादत (सलात) को उसके मुकर्रर वक्त में न पढ़ पाए।

70- जिमा करना जबकि एक शख़्स की बीवी हैज़ की हालत में हो या ज़च्चाह हो।

71- तगन्नी (कुरआन में से हम आहंगी पढ़ना) ग़ैर अखलाकी गाने गाना। मौसिक के साज़ों को बजाना और सुनना।

72- खुदकुशी करना।

निकाह जिसे मुतअ या मवाक्कत (आरज़ी) कहते हैं हराम है। जैसे के औरतों के लिए खुले सिर, बाल, बाज़ू और टाँगों के बाहर जाना हराम है इसी

तरह उनके लिए हराम है ज़ेवरों को पहनकर, खुशबू वाले तंग कपड़े ज़ाहिर करते हुए बाहर जाना।

एक औरत को देखना हराम है, चाहे बग़ैर हवस के, जिसने कपड़े पहने हुए हों लेकिन उसके कवा अवरत हिस्सें (जिस्म के वो हिस्से जिन्हें ढापना ज़रूरी है) बहुत कम ढके हुए हों। नामहरम औरत के अंदरूनी कपड़ों को हवस के साथ हराम है। उसके हिस्सों को जो उसके कवा अवरत हिस्से नहीं हैं और जो चुस्त हों या कम ढके हों उन्हें हवस के साथ देखना हराम है। ऐसी तस्वीरें बनाना या छापना जो हवस और हराम का बाइस बने ये हराम है। [ये कुफ़र (ग़ैर-मज़हबी) है "तो क्या हुआ"? कहना हराम के बारे में]।

ये इस्राफ़ (खर्च करना या बेकार इस्तेमाल करना) और हराम है पानी को वुज़ू और गुस्ल की ज़रूरत से ज़्यादा इस्तेमाल करना।

(अल्लाह तआला के प्यारे बंदों) पिछले औलिया के बारे में बुरा बोलना, उन्हे लाइल्मी का ताना देना, उनके लफ़्ज़ों से ऐसे मआनी निकालना जो इस्लाम के उसूलों के मुताबिक न हों, इस बात पर यकीन न रखना के उनके गुज़र जाने के बाद भी वो करामात रखते हैं, ये मानना के वो एक औलिया हैं जब वो मर जाते हैं तो ये चीज़ खत्म हो जाती है, लोगों को उनकी कबरों पर जाने से रोकना उनके ज़रिए सलामती हासिल करने के लिए, ये सब हराम है जैसे के एक मुसलमान के बारे में बुरा सोचना बिल्कुल वैसे ही, ज़ुल्म, नाहक छीनना, हसद, तोहमतें, झूठ बोलना या चुग़लीखोरी करने का इरतकाब करना।

एक शख़्स की आखिरी सांस में दस चीज़ें जो कुफ़र का सबब बनती हैं

1- अल्लाह तआला के अहकामात और मुमानियत को न सीखना।

2- अहल अस-सुन्नत के अकीदे के मुताबिक अपने ईमान को सही न करना।

3- दुनियावी दौलत, मंसब, शौहरत से प्यार करना।

4- लोगों, जानवरों, की और ज़ालिम होना।

5- अल्लाह तआला और दूसरों का शुक्रिया अदा न करना जो सलामती की दुआ में बीच में थे।

6- अपने ईमान को खोने का डर न होना।

7- पाँच रोज़ाना की नमाज़ों को उनके मुकर्रर औकात में अदा न करना।

8- सूद (फ़ैज़) लेना या अदा करना।

9- पाक मुसलमानों को कमतर समझना उनके बारे में बुरी चीज़ें, जैसे के "असर डालने वाला" बोलना।

10- कहना, लिखना या बेशर्म अलफ़ाज़, तहरीरें या तस्वीरें बनाना।

अहल अस-सुन्नत के अकीदे को बनाए रखने के लिए ज़रूरी है के इन मसलों पर ग़ौर किया जाए

1- अल्लाह तआला सबब रखता है। वो उसकी खुदी से अलग हैं

2- ईमान बढ़ता या घटना नहीं है।

3- संगीन गुनाह करना कुफ़र नहीं है।

4- एक शख़्स को गायब पर यकीन रखना।

5- ईमान के मज़मून पर कोई काबिले कुबूल दूसरा जवाब नहीं है।

6- अल्लाह तआला जन्नत में दिखाई देंगे (यानी, ईमान जब जन्नत में दाखिल होंगे तो उसे देखेंगे। अल्लाह तआला किसी जगह या वक्त के ज़रिए बधें नहीं है। जैसे के उसकी मखलूक।)

7- ईमान के लिए तवक्कुल लाज़मी है।

8- अमल (इबादतें) ईमान का हिस्सा नहीं है।

9- कदर में यकीन रखना ईमान के बुनियादी उसूलों में से एक है।

10- चारों मसलकों में से एक को मानना ज़रूरी है।

11- सारे असहाव-ए किराम, अहल-ए बैत ओर हमारे पैग़म्बर अलैहिस-सलाम की बीवियों से प्यार रखना ज़रूरी है।

12- चारों खलीफ़ाओं के रूतबे खिलाफ़त में उनके वाक्यात के रोनुमा होने के मुताबिक हैं।

13- एक शख़्स की फाज़िल/नफ़ली इबादतों, जैसे के नमाज़, रोज़ा और दी हुई खैरात का सवाव, दूसरे शख़्स को दिया जा सकता है।

14- मेराज में यकीन रखना चाहिए [हज़रत मुहम्मद का आसमानों पर

तशरीफ़ ले जाना] जिस्मानी और रूहानी इरतफ़ा।

15- औलिया [अल्लाह तआला के प्यारे बंदे] के करामात [मोजिज़ों] को भी सच मानना।

16- इस बात पर यकीन रखना चाहिए के आखिरत में वहाँ पर शिफ़ाअत [सिफ़ारिश] होगी।

17- मसत (जिसपर पानी न ठहरे ऐसे जूते जो पाँव के उस हिस्से को ढके जो वुज़ू में धोना फर्ज़ हो) पर मसह करने की इजाज़त है (अपने गीले हाथों को रगड़ना)।

18- कबर में सवालात सच है।

19- कबर में अज़ाब जिस्म और रूह दोनो पर नाफ़िज़ है।

20- अल्लाह तआला ने इंसानी मखलूक और उसके अमाल दोनों को तखलीक किया।लोगों (जानिबदार इच्छा) इरादा-ए जज़िय्या रखते हैं।

21- रिज़्क (खुराक) या तो हलाल या हराम तरीके से आता है।

22- एक शख़्स के लिए ये पूछने की इजाज़त है के उसकी दुआएँ [अलतमास, इबादतें] औलिया [अल्लाह तआला के प्यारे बंदे] की रज़ा के लिए कुबूल हो जाएँ।

उस मुअज़्ज़िन ने पुकारा, वो खड़ा हुआ और अदा की इकामत,
उसने अपना चेहरा काबे की तरफ़ किया, उसने बांधी नीयत।
ईमान वालो ने जब इसे सुन, उन्होने इसे इज़्ज़त से सुन,
फिर शुरू की उन्होने दुआएँ, अल्लाह तआला की इबादत।

बुरे अख़लाक

1- बेमज़हबी (कुफ़र)।

2- लाइल्मी।

3- गलतियाँ होने पर मलामत मिलने का डर होना [सच्चाई को कुबूल न करना तंकीद पर रंज करते हुए, लोगों के ज़रिए बुरा बोलना]।

4- तारीफ़ किए जाने से प्यार होना।[अपने आप से प्यार होना, तारीफ़ और बड़ाई किए जाने से प्यार होना]।

5- इलहादी ईमान (विदअत)।[गलत यकीन]

6- नफ़स की इच्छाएँ।[नफ़स की मसती भरी इच्छाओं के मुतालबे की तकलीद करना]

7- नकली [तकलीद] ईमान।[अपने ईमान की बुनियाद अनजाने लोगों की नकल पर रखना।]

8- शैखीवाज़ी (रिया)।[गमंड करना/शैखी मारना, दुनियावी इच्छाओं को मज़हबी कामों के अमल के ज़रिए हासिल करना।]

9- दुनियावी मक़सद (तूल-ए अमल)।[दुनियावी अज़ाइशों में रहने के लिए एक लम्बी ज़िंदगी चाहना]।

10- तमअ।[मना किए गए ज़रियों का इस्तेमाल करना दुनियावी आज़ाईशों को हासिल करने के लिए]।

11- गुज़र (किब्र)।[अपने आपको दूसरों पर बरतर रखना।]

12- तज़ल्लुल।[ज़रूरत से ज़्यादा आजिज़ी।]

13- खुद से प्यार (उजब)।[अपने खुद के अच्छे कामों और इबादतों से खुश होना]।

14- पामाल जलन (हसद)।[उजाड़ने वाली हसद रखना, ये चाहना के हसद किए जाने वाले शख़्स को रहमतों से महरूम रखा जाए]।अबुल-लेस समरकंदी रहमतुल्लाही तआला अलैह ने कहाः "**तीन लोगों की दुआएँ कुबूल नहीं होंगीः एक शख़्स जो हराम पर गुज़ारा करता है, वो जो चुग़ली करता है, और वो शख़्स जो पामाल हसद रखता है।**"]

15- नफ़रत (हिकद)।[दूसरों को हकीर जानते हुए, उन्हें नीचा देखना।ये चाहना के दूसरों पर नुकसान वाकेय हो।

16- शूमयत। [दूसरे शख़्स पर सज़ा होने से खुशी महसूस करना।]

17- हिजर। [दोस्ती छोड़ देना, गुस्से में बने रहना।]

18- बुज़दिली (जुबन)। [थोड़ी या बिल्कुल भी बहादुरी न रखना।]

19- तहव्वुर। [ज़ाइद और नुकसानदह गुस्सा होना]

20- ग़दर। [अपने लफ़्ज़ और कसम को न रखना।]

21- भरोसे को तोड़ना/अमानत में खयानत। [धोकेबाज़ी की अलामतें; अमल या लफ़्ज़ जो भरोसे को तोड़ें।]

22- वादे को तोड़ना/वादा खिलाफ़ी। [अपने वादे को तोड़ना। ये एक हदीस-ए शरीफ़ में लिखा हैः **(धोके की तीन अलामतें हैंः झूठ बोलना, वादे को कायम न रखना, भरोसे को तोड़ना)**।]

23- दूसरे लोगों के बारे में बुरी राए रखना (सू-ए ज़न)। [सू-ए ज़न हराम (ममुनअ) है। ये मान लेना के एक शख़्स के गुनाह माफ़ नहीं हो सकते मतलब अल्लाह तआला से सू-ए ज़न रखना। ये मान लेना के पक्के ईमान वाले गुनहगार हैं मतलब सू-ए ज़ना]

24- जाएदाद का प्यार। [दुनियावी चीज़ों और जाएदाद, पैसे, से प्यार होना।]

25- नेक कामों (तसवीफ़) को अदा करने में टाल मटोल करना [अच्छे अमाल की अदाएगी मुल्तवी करना]। ये एक हदीस-ए शरीफ़ में हवाला दिया गया हैः **(पाँच चीज़ों के आने से पहले पाँच चीज़ों की कीमत जान लोः मौत से पहले ज़िंदगी की कीमत; बीमारी से पहले सेहत की कीमत; दुनिया में आखिरत (बाद की) कमाना; बुढ़ापे से पहले जवानी की कीमत; और गरीबी से पहले दौलत की कीमत।)**

26- फासिक के लिए हमदर्दी रखना। [बेरहमी, जुल्म सबसे बुरा फिस्क है। वो जो हराम का इरतकाब करते हैं वो फ़ासिक कहलाते हैं।]

27- आलिमों की तरफ़ हसद रखना। [इस्लामी तालीम और आलिमों का मज़ाक उड़ाना कुफ़र है।]

28- शर जगाना (फ़ितना)।[लोगों में मुश्किलें और परेशानियों की वजह बनना।एक हदीस-ए शरीफ़ में हवाला हैः (फितना सो रहा है।अल्लाह तआला उनपर लानत भेजे जो इसे जगाएँ!)।]

29- सुलह करना (मुदाहना) और फरेब (मुदारा)।[दुनियावी फायदे हासिल करने के लिए अपने मज़हब की कुरबानी देना।]

30- सरकशी (इनाद) और तकब्बुर (मुकव्वर)।[जो सही है उसे कुबूल नहीं करना।]

31- हीला (निफाक़)।

32- गहराई से न सोचना, ज़रूरी न जानना।[अपने गुनाहों, बंदो और खुद के बारे में न सोचना।]

33- एक मुसलमान को बददुआ देना।

34- एक मुसलमान को ग़ैर मुनासिब नामों को देना।

35- एक उज़र को मना करना।

36- कुरआन अल-करीम की गलत वज़ाहत देना।

37- ममनुअ (हराम) कामों को करने के लिए ज़ोर देना।

38- चुगलखोरी (ग़ीबत)।

39- तौबा (तासीफ़) न करना।

40- दौलत, ताकत, मरतबा या ओहदों की लालच करना।

[हमें बुरे अखलाक से अपने आपको रोकना है और कोशिश करनी है अच्छे अखलाक रखने की।ये एक हदीस-ए शरीफ़ से वाज़ेह है, **(उसकी खुबसूरत अखलाकी किरदार की वजह से, एक बंदा जिसकी इबादतें कम हैं वो जन्नत में उँचा मकाम पाएगा।)**

(सबसे आसान और सबसे ज़्यादा फायदेमंद इबादात कम बोलना है और अच्छा अखलाक रखना है।) (अच्छे अखलाक रखने का मतलब है जो

लोग तुम से दूर हैं उन तक रसाई करना, जिन्होने तुम्हें तकलीफ़ दी उन्हें माफ़ कर देना, उन्हें फायदा पहुँचाना जो तुम्हें उनसे महरूम रखने का सबब बने।)

नवाँ हिस्सा

नमाज़ की सूरह और दुआएँ

क्या सूरतों और दुआओं को लेटिनी हर्फ़ो के साथ लिख सकते हैं?

अगरचे सुरतों और दुआओं को लेटिनी हर्फ़ो में लिखने की कोशिश की जा चुकी है, लेकिन ये मुमकिन नहीं है। जो कुछ भी निशानियाँ लातेनी हर्फ़ो में इज़ाफ़ा किए गए हैं, लेकिन सूरतों और दुआओं को सही तरीके से पढ़ना मुमकिन न हो सका। कुरआन अल-करीम के हर्फ़ो की तरह पढ़ने के लिए ये ज़रूरी है के लगातार एक माहिर शख़्स से सीखे और काबिल हो। क्योंकि ये अमल पूरे तौर पर चाहिए, यकीन करलें, एक वाकिफ़ शख़्स के लिए, मुमकिन है और नएमत है के कुरआन अल-करीम के फर्फ़ो को बराहेरास्त सीखाए। हदीस-ए शरीफ़ और फिकह की किताबों में इस नएमत की बरतरी तफ़सील से वाज़ेह है। ये वाज़ेह हुआ है के ये ज़्यादा सवाब लाता है। इसलिए, हर मुसलमान को अपने बच्चों को मस्जिदों में या कोर्सीस में भेजना चाहिए कुरआन अल-करीम की तालीमात के लिए। वो अपने बच्चों को कुरआन अल-करीम के हर्फ़ो को सीखाएँ और किस तरह उन्हें पढ़ना हैं। उन्हें इन बड़ें सवाबों को हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए।

एक हदीस-ए शरीफ़ में ये वाज़ेह है, **(वो जो अपने बच्चों को कुरआन अल-करीम सीखाते हैं या कुरआन अल-करीम के उस्तादों के पास**

भेजते हैं, कुरआन अल-करीम के हर हर्फ के लिए उन्हें ईनाम दिया जाएगा जैसे के उन्होने इस बार काबे की ज़ियारत करली, और योमुलहश्र में हाकमियत का ताज उनके सिर पर रखा जाएगा।सारे लोग ये देखेंगे और तारीफ करेंगे।) एक और हदीस-ए शरीफ़ में, ये बयान है के (**वो लोग जो अपने बच्चों को अपना मज़हब नहीं सीखाते वो दोज़ख में जाएँगे**)।

जब एक शख़्स कुरआन अल-करीम को पढ़ रहा हो या किरअत कर रहा हो तो दस अदब का ध्यान रखेः

1- एक शख़्स जब वुज़ू के साथ हो तो उसे इसकी तिलावत करनी चाहिए।किब्ले की तरफ़ और इज़्ज़त के साथ इसकी किरअत करनी चाहिए।

2- एक शख़्स को इसे आहिस्ता और उसके मआनी के बारे में सोचते हुए पढ़ना चाहिए।

3- एक शख़्स को इसे रोते हुए पढ़ना चाहिए।

4- हर आयत को मुनासिब अदा करो।यानी, एक अज़ाब की आयत को डरते हुए किरअत करना चाहिए, रहम की आयत को उम्मीद के साथ, तनज़ीह की आयत अल्लाह तआला की तारीफ़ करते हुए पढ़नी चाहिए।कुरआन अल-करीम पढ़ने या किरअत करने से पहले आऊज़ो और बिस्मिल्लाह पढ़ना चाहिए।

5- अगर एक शख़्स के अंदर गमंड आ जाए, या अगर एक शख़्स नमाज़ अदा करने वालो को फ़ेरे, तो एक शख़्स को उसे अहिस्ता से पढ़ना या किरअत करना चाहिए।उनके लिए जिन्होने कुरआन अल-करीम याद कर लिया है, मुसहाफ़ [कुरआन अल-करीम की किताब] को देखते हुए कुरआन अल-करीम को किरअत करने का सवाब उसे मुह ज़बानी किरअत करने से ज़्यादा है।क्योंकि आँखे भी इबादत करती हैं।

6- ये ज़रूरी है के कुरआन अल-करीम को खुबसूरत आवाज़ के साथ और मुनासिब तजवीद के साथ पढ़े।कुरआन अल-करीम को तग़ननी के साथ

हर्फ़ों और लफ़्ज़ों को बिगाड़ा न जाए तो ये मकरूह है।

7- कुरआन अल-करीम अल्लाह तआला के लफ़्ज़ हैं, ये इससे मंसूब है, ये अबदी है। हर्फ़ जो मुँह से बाहिर आते हैं वो इसी तरह हैं जैसे कहना "आग"। "आग" कहना आसान है। बहरहाल, कोई भी आग को बरदाश्त नहीं कर सकता। इन हर्फ़ों का मतलब (कुरआन अल-करीम से) इसी तरह ये हर्फ़ दूसरे हर्फ़ों की तरह नहीं हैं। अगर इन हर्फ़ों के मआनी ज़ाहिर हो जाएँ, तो ज़मीन की सातों परतें और आसमान की सातों परतें इसे बरदाश्त नहीं कर पाएँगी। अल्लाह तआला ने अपने लफ़्ज़ की खुबसूरती और अफ़ज़लियत इंसानों को भेंजी इन हर्फ़ों के अंदर छुपाकर।

8- कुरआन अल-करीम को पढ़ने या किरअत करने से पहले, एक शख़्स को उसकी बड़ाई के बारे में सोचना चाहिए जिसने इसे कहा, अल्लाह तआला। ये ज़रूरी है के कुरआन अल-करीम को छूने के लिए साफ़ हाथ होने चाहिए और इसी तरह, इसे पढ़ने के लिए पाक दिल होना चाहिए। वो, जो अल्लाह तआला की बड़ाई को नहीं समझता वो, कुरआन अल-करीम की भी बड़ाई को नहीं समझेगा। ये ज़रूरी है के अल्लाह तआला की सिफ़ात को समझना और उसकी मखलूक को अल्लाह तआला की बड़ाई को भी समझना चाहिए। एक शख़्स कुरआन अल-करीम को ये जानते हुए पढ़े के ये उसके लफ़्ज़ हैं जो मालिक और हाकिम है इस सारी मखलूक का।

9- एक शख़्स जब कुरआन अल-करीम की तिलावत कर रहा हो तो उसे दूसरी चीज़ों के बारे में नहीं सोचना चाहिए। अगर एक शख़्स ये नहीं सोचे के जब वो बाग़ में चल रहा है तो उसे क्या नज़र आ रहा है, तो वो उस बाग़ के इतराफ़ नहीं चल सकता। इसी तरह, कुरआन अल-करीम एक जगह है जहाँ ईमान वालो का दिल चारों तरफ़ चलता है। वो जो इसे पढ़ रहा हो उसे उसके अंदर की ग़ैर मामूली खुसूसियात और हिकमत (फ़ाएदे; अंदरूनी, खुफ़िया वजूहात; इंतेहाई पाक असबाब) के बारे में सोचना चाहिए।

10- एक शख़्स को इसके हर एक लफ़्ज़ के मआनी के बारे में सोचना चाहिए और तो इसे दोहराता रहे जब तक के वो इसे समझ न ले।

नमाज़ में दुआओं के मआनी

सुबहानका

ऐ मेरे अल्लाह! मैं तेरी तनज़ीह करता हूँ, इज़्ज़त करता हूँ के तू हर नुक्स से पाक है। मैं तौसिफ़ करता हूँ इज़्ज़त करता हूँ के तेरे साथ तमाम सिफ़ाते कमालिया हैं। मैं तेरी तारीफ़ करता हूँ। तेरा नाम आला है। (और तेरी शौहरत सब चीज़ों से अफ़ज़ल है) [ये हिस्सा जनाज़े की नमाज़ अदा करते वक्त शामिल किया जाता है।] तेरे सिवा कोई माबूद नहीं।

अत्तहिय्यातु

तमाम ज़वानी और फ़ेली (कर्म वाली) इवादतें और तमाम माली इवादतें अल्लाह ही के लिए हैं। सलाम तुम पर ऐ नवी और अल्लाह की रहमत और उसकी वरकतें। सलाम हो हम पर और अल्लाह के ने वन्दों पर। गवाही देता हूँ मैं कि अल्लाह के सिवा कोई इवादत के लायक नहीं और गवाही देता हूँ मैं कि मुहम्मद (अलैहिस-सलाम) अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।

अल्लाहुम्मा सल्लि

ऐ मेरे अल्लाह! जैसे के तूने रहमत नाज़िल फरमाई इब्राहिम "अलैहिस-सलाम पर और उनकी औलाद पर, रहमत नाज़िल फरमा (हमारे

आका) मुहम्मद “अलैहिस्सलाम” पर और उनकी औलाद पर भी। बेशक तू तारीफ़ के लायक और बुज़ुर्गी वाला है।

अल्ला हुम-म बारिक

ऐ मेरे अल्लाह! जैसे के तूने बरकत नाज़िल फरमाई इब्राहिम “अलैहिस सलाम पर उनकी औलाद पर, बरकत नाज़िल फरमा (हमारे आका) मुहम्मद “अलैहिस-सलाम” पर और उनकी औलाद पर। बेशक तू तारीफ़ के लायक और बुज़ुर्गी वाला है।

रब्बना आतेना

या रब! (ऐ मेरे अल्लाह)! हमें इस दुनिया में और आखिरत में अच्छाई अता फरमा और हमें दोज़ख के अज़ाब से बचा। ऐ मेरे रहमदिलों के रहमदिल, अपनी शफ़कत से ......

दुआए कुनूत

ऐ मेरे अल्लाह! हम तुझे से मदद चाहते हैं। हम तुझ से मग़फ़िरत चाहते हैं। हम तेरी रहनुमाई चाहते हैं। हम तुझ से माफ़ी चाहते हैं और हम तुझ पर तवक्कुल रखते हैं। हम तेरी अच्छी तरह तारीफ़ करते हैं। हम तेरा शुक्र अदा करते हैं (तेरी रहमत के लिए), हम तेरी रहमत से मुंकर नहीं होते। हम उसको मना कर देते है और छोड़ देते हैं जो तेरे खिलाफ़ फ़िस्क और फुजर का इरतकाब करते हैं। [फ़िस्क का मतलब गुनाह। फुजर का मतलब अय्याशी, नफ़स की इच्छाओं की तकलीद करना और गुनाह करना।]

ऐ मेरे अल्लाह! हम सिर्फ़ तेरी इबादत करते हैं, हम सिर्फ़ तेरे लिए नमाज़ अदा करते हैं, हम सिर्फ़ तेरे लिए सज्दा करते हैं, हम सिर्फ़ तेरी तरफ़ दौड़ते हैं और तेरे ही पनाह लेते हैं। हम तेरी रहमत की उम्मीद करते हैं और तेरे अज़ाब से डरते हैं। बेशक तेरा अज़ाब काफ़िरों को पहुँचने वाला है जो सच्चाई को छुपाते हैं।

اَلتَّلْقِينُ لِلْمَيِّتِ

عَلَيْكَ سَلَامُ اللّٰهِ يَا عَبْدَ اللّٰهِ ابْنَ عَبْدِ اللّٰهِ (٣ دفعه) كُلُّ شَيْءٍ هَالِكٌ اِلَّا وَجْهَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَ لَهُ الْحُكْمُ وَ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ. فَاعْلَمْ بِاَنَّ هٰذَا آخِرُ مَنْزِلِكَ مِنْ مَنَازِلِ الدُّنْيَا وَ اَوَّلُ مَنْزِلِكَ مِنْ مَنَازِلِ الْآخِرَةِ. وَ اعْلَمْ بِاَنَّكَ خَرَجْتَ مِنْ دَارِ الدُّنْيَا الدَّنِيَّةِ وَ وَصَلْتَ اِلٰى دَارِ الْعُقْبٰى الْاَبَدِيَّةِ. خَرَجْتَ مِنْ دَارِ الْغُرُورِ وَ وَصَلْتَ اِلٰى دَارِ السُّرُورِ. خَرَجْتَ مِنْ دَارِ الْفَنَاءِ وَ وَصَلْتَ اِلٰى دَارِ الْبَقَاءِ. وَ اعْلَمْ بِاَنَّ الْآنَ الْآنَ قَدْ يَنْزِلُ بِكَ الْمَلَكَانِ الرَّفِيقَانِ الشَّفِيقَانِ الْاَسْوَدَانِ الْوَجْهَانِ وَ الْاَزْرَقَانِ الْعَيْنَانِ، اَحَدُهُمَا مُنْكَرٌ وَآخَرُهُمَا نَكِيرٌ لَا تَخَفْ عَنْهُمَا وَ لَا تَحْزَنْ فَاِنَّهُمَا عَبْدَانِ مَأْمُورَانِ مِنْ قِبَلِ الرَّحْمٰنِ، سَائِلَانِ عَنْكَ وَ قَائِلَانِ لَكَ: مَنْ رَبُّكَ وَ مَنْ نَبِيُّكَ وَ مَا دِينُكَ وَ مَا اِمَامُكَ وَ مَا قِبْلَتُكَ وَ مَنْ اِخْوَانُكَ وَ مَنْ اَخَوَاتُكَ فَقُلْ فِي جَوَابِهِمَا بِلَفْظٍ فَصِيحٍ وَ لِسَانٍ صَرِيحٍ: اَللّٰهُ رَبِّي وَ مُحَمَّدٌ نَبِيِّي، وَ الْاِسْلَامُ دِينِي وَ الْقُرْآنُ اِمَامِي وَ الْكَعْبَةُ قِبْلَتِي وَ الْمُؤْمِنُونَ اِخْوَانِي وَ الْمُؤْمِنَاتُ اَخَوَاتِي. فَاعْلَمْ بِاَنَّ الْمَوْتَ حَقٌّ وَ الْقَبْرَ حَقٌّ وَسُؤَالَ الْمُنْكَرِ وَ النَّكِيرِ حَقٌّ وَ الْحَشْرَ حَقٌّ وَ النَّشْرَ حَقٌّ وَالْحِسَابَ حَقٌّ وَ الْمِيزَانَ حَقٌّ وَالصِّرَاطَ حَقٌّ وَالْجَنَّةَ لِلْمُؤْمِنِينَ حَقٌّ وَ النَّارَ لِلْكَافِرِينَ حَقٌّ. مِنْهَا خَلَقْنَاكُمْ وَ فِيهَا نُعِيدُكُمْ وَ مِنْهَا نُخْرِجُكُمْ تَارَةً اُخْرٰى. اُذْكُرِ الْعَهْدَ الَّذِي كُنْتَ عَلَيْهِ فِي دَارِ الدُّنْيَا الدَّنِيَّةِ وَ هُوَ شَهَادَةُ اَنْ لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَ اَنَّ مُحَمَّدًا رَسُولُ اللّٰهِ. اَللّٰهُمَّ ثَبِّتْهُ عَلَى الْجَوَابِ وَ اَنْطِقْهُ بِالصِّدْقِ وَ الصَّوَابِ [اَللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ مُحْسِنًا فَزِدْ فِي اِحْسَانِهِ وَ اِنْ كَانَ مُسِيئًا فَاغْفِرْ لَهُ وَ ارْحَمْهُ وَ تَجَاوَزْ عَنْهُ]

(٣ دفعه) آمِينَ. وَ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ.

اَلتَّلْقِينُ لِلْمَيِّتِ

عَلَيْكَ سَلَامُ اللّٰهِ يَا عَبْدَ اللّٰهِ ابْنَ عَبْدِ اللّٰهِ (٣ دفعه) كُلُّ شَيْءٍ هَالِكٌ اِلَّا وَجْهَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَ لَهُ الْحُكْمُ وَ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ. فَاعْلَمْ بِاَنَّ هٰذَا آخِرُ مَنْزِلِكَ مِنْ مَنَازِلِ الدُّنْيَا وَ اَوَّلُ مَنْزِلِكَ مِنْ مَنَازِلِ الْآخِرَةِ. وَ اعْلَمْ بِاَنَّكَ خَرَجْتَ مِنْ دَارِ الدُّنْيَا الدَّنِيَّةِ وَ وَصَلْتَ اِلٰى دَارِ الْعُقْبٰى الْاَبَدِيَّةِ. خَرَجْتَ مِنْ دَارِ الْغُرُوْرِ وَ وَصَلْتَ اِلٰى دَارِ السُّرُوْرِ. خَرَجْتَ مِنْ دَارِ الْفَنَاءِ وَ وَصَلْتَ اِلٰى دَارِ الْبَقَاءِ. وَ اعْلَمْ بِاَنَّ الْآنَ الْآنَ قَدْ يَنْزِلُ بِكَ الْمَلَكَانِ الرَّفِيقَانِ الشَّفِيقَانِ الْاَسْوَدَانِ الْوَجْهَانِ وَ الْاَزْرَقَانِ الْعَيْنَانِ، اَحَدُهُمَا مُنْكَرٌ وَآخَرُهُمَا نَكِيرٌ لَا تَخَفْ عَنْهُمَا وَ لَا تَحْزَنْ فَاِنَّهُمَا عَبْدَانِ مَأْمُوْرَانِ مِنْ قِبَلِ الرَّحْمٰنِ، سَائِلَانِ عَنْكَ وَ قَائِلَانِ لَكَ: مَنْ رَبُّكَ وَ مَنْ نَبِيُّكَ وَ مَا دِينُكَ وَ مَا اِمَامُكَ وَ مَا قِبْلَتُكَ وَ مَنْ اِخْوَانُكَ وَ مَنْ اَخَوَاتُكَ فَقُلْ فِي جَوَابِهِمَا بِلَفْظٍ فَصِيحٍ وَ لِسَانٍ صَرِيحٍ: اَللّٰهُ رَبِّي وَ مُحَمَّدٌ نَبِيِّي، وَ الْاِسْلَامُ دِينِي وَ الْقُرْآنُ اِمَامِي وَ الْكَعْبَةُ قِبْلَتِي وَ الْمُؤْمِنُوْنَ اِخْوَانِي وَ الْمُؤْمِنَاتُ اَخَوَاتِي. فَاعْلَمْ بِاَنَّ الْمَوْتَ حَقٌّ وَ الْقَبْرَ حَقٌّ وَسُؤَالَ الْمُنْكَرِ وَ النَّكِيرِ حَقٌّ وَ الْحَشْرَ حَقٌّ وَ النَّشْرَ حَقٌّ وَالْحِسَابَ حَقٌّ وَ الْمِيزَانَ حَقٌّ وَالصِّرَاطَ حَقٌّ وَالْجَنَّةَ لِلْمُؤْمِنِينَ حَقٌّ وَ النَّارَ لِلْكَافِرِينَ حَقٌّ. مِنْهَا خَلَقْنَاكُمْ وَ فِيهَا نُعِيدُكُمْ وَ مِنْهَا نُخْرِجُكُمْ تَارَةً اُخْرٰى. اُذْكُرِ الْعَهْدَ الَّذِي كُنْتَ عَلَيْهِ فِي دَارِ الدُّنْيَا الدَّنِيَّةِ وَ هُوَ شَهَادَةُ اَنْ لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَ اَنَّ مُحَمَّدًا رَسُوْلُ اللّٰهِ. اَللّٰهُمَّ ثَبِّتْهُ عَلَى الْجَوَابِ وَ اَنْطِقْهُ بِالصِّدْقِ وَ الصَّوَابِ [اَللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ مُحْسِنًا فَزِدْ فِي اِحْسَانِهِ وَ اِنْ كَانَ مُسِيئًا فَاغْفِرْ لَهُ وَ ارْحَمْهُ وَ تَجَاوَزْ عَنْهُ]

(٣ دفعه) آمِينَ. وَ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ.

وَ التَّابِعِينَ الْاَخْيَارِ وَ الْاَبْرَارِ (رِضْوَانُ اللّٰهِ عَلَيْهِمْ اَجْمَعِينَ).

اَيُّهَا الْمُؤْمِنُونَ الْحَاضِرُونَ! اِتَّقُوا اللّٰهَ وَ اَطِيعُوهُ اُوصِيكُمْ عِبَادَ اللّٰهِ بِتَقْوَى اللّٰهِ، وَ اعْلَمُوا اَنَّ اِلَى اللّٰهِ الْمُنْتَهٰى، وَ اَنَّهُ هُوَ اَمَاتَ وَ اَحْيَا، اِنَّ هٰذِهِ تَذْكِرَةٌ لِمَنْ يَخْشٰى، وَ اِلَى اللّٰهِ الْمُشْتَكٰى. (اَعُوذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ): «يَوْمَ لَا يَنْفَعُ مَالٌ وَ لَا بَنُونَ اِلَّا مَنْ اَتَى اللّٰهَ بِقَلْبٍ سَلِيمٍ»

الخطبة الثانية

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي هَدٰينَا لِلْاِيمَانِ وَ الصَّلٰوةُ وَ السَّلَامُ عَلٰى مُحَمَّدٍ صَاحِبِ الْفَضْلِ وَ الْاِحْسَانِ اَلْمُنَزَّلِ عَلَيْهِ فِي مُحْكَمِ كِتَابِهِ تَعْظِيمًا وَ تَكْرِيمًا (اَعُوذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ) «اِنَّ اللّٰهَ وَ مَلٰٓئِكَتَهُ يُصَلُّونَ عَلَى النَّبِيِّ يَآ اَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا صَلُّوا عَلَيْهِ وَ سَلِّمُوا تَسْلِيمًا».

اَللّٰهُمَّ صَلِّ وَ سَلِّمْ وَ بَارِكْ عَلٰى سَيِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَ عَلٰى آلِ سَيِّدِنَا مُحَمَّدٍ. يَا اَللّٰهُ بِكَ تَحَصَّنْتُ «٣ دفعه» وَ بِعَبْدِكَ وَ رَسُولِكَ سَيِّدِنَا مُحَمَّدٍ (ﷺ) اِسْتَجَرْتُ «٣ دفعه» اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِلْمُؤْمِنِينَ وَ الْمُؤْمِنَاتِ وَالْمُسْلِمِينَ و الْمُسْلِمَاتِ اَلْاَحْيَآءِ مِنْهُمْ وَ الْاَمْوَاتِ اٰمِينْ.

وَ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ.

(اَعُوذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ): «اِنَّ اللّٰهَ يَأْمُرُ بِالْعَدْلِ وَ الْاِحْسَانِ وَ اِيتَاءِ ذِي الْقُرْبٰى وَ يَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَ الْمُنْكَرِ وَ الْبَغْيِ يَعِظُكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ. وَ لَذِكْرُ اللّٰهِ اَكْبَرُ وَ اللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تَصْنَعُونَ».

خُطْبَةُ الْجُمُعَةِ

الخطبة الاولى

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِيْنَ اَضْعَافَ مَا حَمِدَهُ جَمِيْعُ خَلْقِهٖ كَمَا يُحِبُّ وَ يَرْضٰى، وَ الصَّلَاةُ وَ السَّلَامُ عَلٰى مَنْ اَرْسَلَهُ رَحْمَةً لِلْعَالَمِيْنَ، كُلَّمَا ذَكَرَهُ الذَّاكِرُوْنَ وَ غَفَلَ عَنْ ذِكْرِهِ الْغَافِلُوْنَ كَمَا يَنْبَغِيْ وَ يَحْرٰى، وَ عَلٰى آلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَ اَزْوَاجِهٖ وَ اَوْلَادِهِ الْبَرَرَةِ التُّقٰى وَ النُّقٰى، خُصُوْصًا مِنْهُمْ عَلَى الشَّيْخِ الشَّفِيْقِ، قَاتِلِ الْكَفَرَةِ وَ الزَّنَادِيْقِ، اَلْمُلَقَّبِ بِالْعَتِيْقِ، فِي الْغَارِ الرَّفِيْقِ اَلْاِمَامِ عَلَى التَّحْقِيْقِ خَلِيْفَةِ رَسُوْلِ اللّٰهِ (ﷺ) اَبِيْ بَكْرِ ن الصِّدِّيْقِ (رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُ). ثُمَّ السَّلَامُ مِنَ الْمَلِكِ الْوَهَّابِ، عَلَى الْاَمِيْرِ الْاَوَّابِ، زَيْنِ الْاَصْحَابِ، مُجَاوِرِ الْمِنْبَرِ وَ الْمِحْرَابِ، اَلنَّاطِقِ بِالْحَقِّ وَ الصِّدْقِ وَ الصَّوَابِ، اَمِيْرِ الْمُؤْمِنِيْنَ عُمَرَ بْنِ الْخَطَّابِ (رَضِيَ اللّٰهُ تَعَالٰى عَنْهُ). ثُمَّ السَّلَامُ مِنَ الْمَلِكِ الْمَنَّانِ، عَلَى الْاَمِيْرِ الْاَمَانِ، حَبِيْبِ الرَّحْمٰنِ، صَاحِبِ الْحَيَاءِ وَ الْاِحْسَانِ، اَلشَّهِيْدِ فِيْ اَثْنَاءِ تِلَاوَةِ الْقُرْاٰنِ، اَمِيْرِ الْمُؤْمِنِيْنَ عُثْمَانَ بْنِ عَفَّانَ (رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُ). ثُمَّ السَّلَامُ مِنَ الْمَلِكِ الْوَلِيِّ، عَلَى الْاَمِيْرِ الْوَصِيِّ، اِبْنِ عَمِّ النَّبِيِّ، قَالِعِ الْبَابِ الْخَيْبَرِيِّ، زَوْجِ فَاطِمَةَ الزَّهْرَاءِ بِنْتِ النَّبِيِّ اَمِيْرِ الْمُؤْمِنِيْنَ اَسَدِ اللّٰهِ الْغَالِبِ، عَلِيِّ بْنِ اَبِيْ طَالِبٍ (رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُ). وَعَلَى الْاِمَامَيْنِ الْهُمَامَيْنِ السَّعِيْدَيْنِ الشَّهِيْدَيْنِ الْمَظْلُوْمَيْنِ الْمَقْبُوْلَيْنِ، اَلْحَسِيْبَيْنِ النَّسِيْبَيْنِ، سَيِّدَيْ شُبَّانِ اَهْلِ الْجَنَّةِ، وَ قُرَّتَيْ اَعْيُنِ اَهْلِ السُّنَّةِ، اَلْحَسَنِ وَ الْحُسَيْنِ (رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمَا). وَعَلَى الْعَمَّيْنِ الْمُعَظَّمَيْنِ الْاَسْعَدَيْنِ الْاَمْجَدَيْنِ، اَلْاَكْرَمَيْنِ عِنْدَ اللّٰهِ وَالنَّاسِ، حَمْزَةَ وَالْعَبَّاسِ (رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمَا) وَعَلٰى جَمِيْعِ الْمُهَاجِرِيْنَ وَالْاَنْصَارِ،

هٰذَا الدُّعَاءُ لِلْمَيِّتِ فِى صَلاَةِ الْجَنَازَةِ

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِحَيِّنَا وَ مَيِّتِنَا وَ شَاهِدِنَا وَ غَائِبِنَا وَ صَغِيرِنَا وَ كَبِيرِنَا وَ ذَكَرِنَا وَ اُنْثَانَا • اَللّٰهُمَّ مَنْ اَحْيَيْتَهُ (هَا) [1] مِنَّا فَاَحْيِهِ (هَا) عَلَى الْاِسْلاَمِ وَ مَنْ تَوَفَّيْتَهُ (هَا) مِنَّا فَتَوَفَّهُ (هَا) عَلَى الْاِيمَانِ • وَ خُصَّ هٰذَا الْمَيِّتَ (هٰذِهِ الْمَيِّتَةَ) بِالرَّوْحِ وَ الرَّاحَةِ وَ الرَّحْمَةِ وَ الْمَغْفِرَةِ وَ الرِّضْوَانِ • اَللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ (كَانَتْ) مُحْسِنًا (مُحْسِنَةً) فَزِدْ فِى اِحْسَانِهِ (هَا) وَ اِنْ كَانَ (كَانَتْ) مُسِيئًا (مُسِيئَةً) فَتَجَاوَزْ عَنْهُ (هَا) وَ لَقِّهِ (هَا) الْاَمْنَ وَ الْبُشْرٰى وَ الْكَرَامَةَ وَ الزُّلْفٰى • اَللّٰهُمَّ اجْعَلْ قَبْرَهُ (هَا) رَوْضَةً مِنْ رِيَاضِ الْجِنَانِ وَ لاَ تَجْعَلْ قَبْرَهُ (هَا) حُفْرَةً مِنْ حُفَرِ النِّيرَانِ • رَبِّ اغْفِرْ لِى وَ لِوَالِدَىَّ وَ لِلْمُؤْمِنِينَ وَ الْمُؤْمِنَاتِ وَ لِجَمِيعِ الْمُسْلِمِينَ وَ الْمُسْلِمَاتِ اَلْاَحْيَاءِ مِنْهُمْ وَ الْاَمْوَاتِ بِرَحْمَتِكَ يَا اَرْحَمَ الرَّاحِمِينَ.

[1] If the deceased is a woman, that which is indicated between the parantheses ( ) is said.

تَسْبِيحَاتُ التَّرَاوِيحِ

١ ـ سُبْحَانَ ذِى الْمُلْكِ وَ الْمَلَكُوتِ، سُبْحَانَ ذِى الْعِزَّةِ وَ الْعَظَمَةِ وَ الْجَلَالِ وَ الْجَمَالِ وَ الْجَبَرُوتِ، سُبْحَانَ الْمَلِكِ الْمَوْجُودِ، سُبْحَانَ الْمَلِكِ الْمَعْبُودِ، سُبْحَانَ الْمَلِكِ الْحَيِّ الَّذِى لَا يَنَامُ وَ لَايَمُوتُ. سُبُّوحٌ قُدُّوسٌ رَبُّنَا وَرَبُّ الْمَلٰٓئِكَةِ وَالرُّوحِ.

٢ ـ مَرْحَبًا، مَرْحَبًا، مَرْحَبًا يَا شَهْرَ رَمَضَانَ، مَرْحَبًا مَرْحَبًا مَرْحَبًا يَا شَهْرَ الْبَرَكَةِ وَ الْغُفْرَانِ، مَرْحَبًا مَرْحَبًا مَرْحَبًا يَا شَهْرَ التَّسْبِيحِ وَ التَّهْلِيلِ وَ الذِّكْرِ وَ تِلَاوَةِ الْقُرْآنِ. اَوَّلْ هُوَ آخِرْ هُوَ ظَاهِرْ هُوَ بَاطِنْ هُوَ، يَا مَنْ لَا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ.

٣ ـ اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى سَيِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَ عَلٰى آلِ سَيِّدِنَا مُحَمَّدٍ بِعَدَدِ كُلِّ دَاءٍ وَ دَوَاءٍ وَ بَارِكْ وَ سَلِّمْ عَلَيْهِ وَ عَلَيْهِمْ كَثِيرًا.

٤ ـ يَا حَنَّانُ، يَا مَنَّانُ، يَا دَيَّانُ، يَا بُرْهَانُ، يَا ذَا الْفَضْلِ وَ الْاِحْسَانِ، نَرْجُو الْعَفْوَ وَ الْغُفْرَانَ وَ اجْعَلْنَا مِنْ عُتَقَاءِ شَهْرِ رَمَضَانَ، بِحُرْمَةِ الْقُرْآنِ.

---

[1] Recited when one will perform Namâz of tarawih.
[2] After the 15th day of Ramadân, in place of (Merhabâ), (Elwedâ') is said.
[3] Recited between each Namâz of tarawih.
[4] Prayer said after performing Namâz of tarawih.

اَللّٰهُمَّ حَرِّمْ شَعْرِى وَبَشَرِى عَلَى النَّارِ * وَاَظِلَّنِى تَحْتَ ظِلِّ عَرْشِكَ يَوْمَ لَا ظِلَّ اِلَّا ظِلُّ عَرْشِكَ *

اَللّٰهُمَّ اجْعَلْنِى مِنَ الَّذِينَ يَسْتَمِعُونَ الْقَوْلَ فَيَتَّبِعُونَ اَحْسَنَهُ * اَللّٰهُمَّ اَعْتِقْ رَقَبَتِى مِنَ النَّارِ *

اَللّٰهُمَّ ثَبِّتْ قَدَمَىَّ عَلَى الصِّرَاطِ يَوْمَ تَزِلُّ فِيهِ الْاَقْدَامُ *

اَللّٰهُمَّ لَا تَطْرُدْ قَدَمَىَّ عَلَى الصِّرَاطِ يَوْمَ تَطْرُدُ كُلَّ اَقْدَامِ اَعْدَائِكَ * اَللّٰهُمَّ اجْعَلْ سَعْيِى مَشْكُورًا وَ ذَنْبِى مَغْفُورًا وَ عَمَلِى مَقْبُولًا وَ تِجَارَتِى لَنْ تَبُورَ * سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَ بِحَمْدِكَ * اَشْهَدُ اَنْ لَا اِلٰهَ اِلَّا اَنْتَ وَحْدَكَ لَا شَرِيكَ لَكَ وَاَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُكَ وَ رَسُولُكَ

بِسْمِ اللّٰهِ الْعَظِيمِ * وَ الْحَمْدُ لِلّٰهِ عَلٰى دِينِ الْاِسْلَامِ * وَ عَلٰى تَوْفِيقِ الْاِيمَانِ * اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِى جَعَلَ الْمَآءَ طَهُورًا * وَ جَعَلَ الْاِسْلَامَ نُورًا *

اَللّٰهُمَّ اسْقِنِى مِنْ حَوْضِ نَبِيِّكَ كَاْسًا لَآ اَظْمَاُ بَعْدَهُٓ اَبَدًا * اَللّٰهُمَّ اَرِحْنِى رَائِحَةَ الْجَنَّةِ وَ ارْزُقْنِى مِنْ نَعِيمِهَا * وَ لَا تُرِحْنِى رَائِحَةَ النَّارِ *

اَللّٰهُمَّ بَيِّضْ وَجْهِى بِنُورِكَ يَوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوهُ اَوْلِيَآئِكَ وَ لَا تُسَوِّدْ وَجْهِى بِذُنُوبِى يَوْمَ تَسْوَدُّ وُجُوهُ اَعْدَآئِكَ اَللّٰهُمَّ اَعْطِنِى كِتَابِى بِيَمِينِى وَ حَاسِبْنِى حِسَابًا يَسِيرًا * اَللّٰهُمَّ لَا تُعْطِنِى كِتَابِى بِشِمَالِى وَ لَا مِنْ وَرَآءِ ظَهْرِى وَ لَا تُحَاسِبْنِى حِسَابًا شَدِيدًا *

رَبَّنَآ اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ
بِرَحْمَتِكَ يَآ اَرْحَمَ الرّٰحِمِيْنَ
رَبَّنَا اغْفِرْلِيْ وَلِوَالِدَيَّ وَلِلْمُؤْمِنِيْنَ يَوْمَ يَقُوْمُ الْحِسَابُ
اَللّٰهُمَّ اِنَّا نَسْتَعِيْنُكَ وَنَسْتَغْفِرُكَ وَنَسْتَهْدِيْكَ ○ وَنُؤْمِنُ بِكَ وَنَتُوْبُ اِلَيْكَ ○ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْكَ ○ وَنُثْنِيْ عَلَيْكَ الْخَيْرَ كُلَّهٗ نَشْكُرُكَ وَلَا نَكْفُرُكَ ○ وَنَخْلَعُ وَنَتْرُكُ مَنْ يَّفْجُرُكَ ○
اَللّٰهُمَّ اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَلَكَ نُصَلِّيْ وَنَسْجُدُ ○ وَاِلَيْكَ نَسْعٰى وَنَحْفِدُ ○ نَرْجُوْ رَحْمَتَكَ وَنَخْشٰى عَذَابَكَ ○ اِنَّ عَذَابَكَ بِالْكُفَّارِ مُلْحِقٌ ○
اٰمَنْتُ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَبِالْقَدْرِ خَيْرِهٖ وَشَرِّهٖ مِنَ اللّٰهِ تَعَالٰى وَالْبَعْثُ بَعْدَ الْمَوْتِ حَقٌّ ○ اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ ○ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ

سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَبِحَمْدِكَ ○ وَتَبَارَكَ اسْمُكَ ○ وَتَعَالٰى
جَدُّكَ ○ وَجَلَّ ثَنَآؤُكَ ○ وَلَآ اِلٰهَ غَيْرُكَ ○

اَلتَّحِيَّاتُ لِلّٰهِ وَالصَّلَوٰتُ وَالطَّيِّبَاتُ ○ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ
اَيُّهَا النَّبِيُّ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهٗ ○ اَلسَّلَامُ عَلَيْنَا وَعَلٰى
عِبَادِ اللّٰهِ الصّٰلِحِيْنَ ○ اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ ○ وَاَشْهَدُ
اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ ○

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰٓى اٰلِ مُحَمَّدٍ ○ كَمَا صَلَّيْتَ
عَلٰٓى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰٓى اٰلِ اِبْرَاهِيْمَ ○ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ

اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰٓى اٰلِ مُحَمَّدٍ ○ كَمَا بَارَكْتَ
عَلٰٓى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰٓى اٰلِ اِبْرَاهِيْمَ ○ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ۚ (١) اَللّٰهُ الصَّمَدُ ۚ (٢) لَمْ يَلِدْ
وَلَمْ يُوْلَدْ ۙ (٣) وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ (٤)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ ۙ (١) مِنْ شَرِّ مَا خَلَقَ ۙ (٢) وَمِنْ
شَرِّ غَاسِقٍ اِذَا وَقَبَ ۙ (٣) وَمِنْ شَرِّ النَّفّٰثٰتِ فِى
الْعُقَدِ ۙ (٤) وَمِنْ شَرِّ حَاسِدٍ اِذَا حَسَدَ (٥)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاسِ ۙ (١) مَلِكِ النَّاسِ ۙ (٢) اِلٰهِ
النَّاسِ ۙ (٣) مِنْ شَرِّ الْوَسْوَاسِ الْخَنَّاسِ ۙ (٤) الَّذِىْ
يُوَسْوِسُ فِىْ صُدُوْرِ النَّاسِ ۙ (٥)
مِنَ الْجِنَّةِ وَالنَّاسِ (٦)

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

إِنَّا أَعْطَيْنَاكَ الْكَوْثَرَ ﴿١﴾ فَصَلِّ لِرَبِّكَ وَانْحَرْ ﴿٢﴾
إِنَّ شَانِئَكَ هُوَ الْأَبْتَرُ ﴿٣﴾

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

قُلْ يَا أَيُّهَا الْكَافِرُونَ ﴿١﴾ لَا أَعْبُدُ مَا تَعْبُدُونَ ﴿٢﴾
وَلَا أَنْتُمْ عَابِدُونَ مَا أَعْبُدُ ﴿٣﴾ وَلَا أَنَا عَابِدٌ مَا عَبَدْتُمْ ﴿٤﴾
وَلَا أَنْتُمْ عَابِدُونَ مَا أَعْبُدُ ﴿٥﴾ لَكُمْ دِينُكُمْ وَلِيَ دِينِ ﴿٦﴾

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

إِذَا جَاءَ نَصْرُ اللَّهِ وَالْفَتْحُ ﴿١﴾ وَرَأَيْتَ النَّاسَ
يَدْخُلُونَ فِي دِينِ اللَّهِ أَفْوَاجًا ﴿٢﴾ فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ
وَاسْتَغْفِرْهُ إِنَّهُ كَانَ تَوَّابًا ﴿٣﴾

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

تَبَّتْ يَدَا أَبِي لَهَبٍ وَتَبَّ ﴿١﴾ مَا أَغْنَىٰ عَنْهُ مَالُهُ وَمَا
كَسَبَ ﴿٢﴾ سَيَصْلَىٰ نَارًا ذَاتَ لَهَبٍ ﴿٣﴾ وَامْرَأَتُهُ
حَمَّالَةَ الْحَطَبِ ﴿٤﴾ فِي جِيدِهَا حَبْلٌ مِنْ مَسَدٍ ﴿٥﴾

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

اَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِاَصْحٰبِ الْفِيْلِ ﴿١﴾ اَلَمْ يَجْعَلْ كَيْدَهُمْ
فِيْ تَضْلِيْلٍ ﴿٢﴾ وَّاَرْسَلَ عَلَيْهِمْ طَيْرًا اَبَابِيْلَ ﴿٣﴾ تَرْمِيْهِمْ
بِحِجَارَةٍ مِّنْ سِجِّيْلٍ ﴿٤﴾ فَجَعَلَهُمْ كَعَصْفٍ مَّاْكُوْلٍ ﴿٥﴾

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

لِاِيْلٰفِ قُرَيْشٍ ﴿١﴾ اٖلٰفِهِمْ رِحْلَةَ الشِّتَآءِ وَالصَّيْفِ
﴿٢﴾ فَلْيَعْبُدُوْا رَبَّ هٰذَا الْبَيْتِ ﴿٣﴾ الَّذِيْۤ اَطْعَمَهُمْ
مِّنْ جُوْعٍ وَّاٰمَنَهُمْ مِّنْ خَوْفٍ ﴿٤﴾

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

اَرَءَيْتَ الَّذِيْ يُكَذِّبُ بِالدِّيْنِ ﴿١﴾ فَذٰلِكَ الَّذِيْ
يَدُعُّ الْيَتِيْمَ ﴿٢﴾ وَلَا يَحُضُّ عَلٰى طَعَامِ الْمِسْكِيْنِ ﴿٣﴾
فَوَيْلٌ لِّلْمُصَلِّيْنَ ﴿٤﴾ الَّذِيْنَ هُمْ عَنْ صَلَاتِهِمْ سَاهُوْنَ
﴿٥﴾ الَّذِيْنَ هُمْ يُرَآءُوْنَ ﴿٦﴾ وَيَمْنَعُوْنَ الْمَاعُوْنَ ﴿٧﴾

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ لَا تَأْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ
لَهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ مَنْ ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِنْدَهُ إِلَّا
بِإِذْنِهِ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ
مِنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ
وَلَا يَئُودُهُ حِفْظُهُمَا وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ (٢٥٥)

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

إِنَّا أَنْزَلْنَاهُ فِي لَيْلَةِ الْقَدْرِ (١) وَمَا أَدْرَاكَ مَا لَيْلَةُ الْقَدْرِ (٢)
لَيْلَةُ الْقَدْرِ خَيْرٌ مِنْ أَلْفِ شَهْرٍ (٣) تَنَزَّلُ الْمَلَائِكَةُ وَالرُّوحُ
فِيهَا بِإِذْنِ رَبِّهِمْ مِنْ كُلِّ أَمْرٍ (٤) سَلَامٌ هِيَ حَتَّىٰ مَطْلَعِ الْفَجْرِ (٥)

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَٰنِ الرَّحِيمِ

وَالْعَصْرِ (١) إِنَّ الْإِنْسَانَ لَفِي خُسْرٍ (٢) إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا
وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ (٣)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ○ وَالصَّلَاةُ وَالسَّلَامُ
عَلٰى رَسُولِنَا مُحَمَّدٍ وَعَلٰى آلِهٖ وَصَحْبِهٖ اَجْمَعِينَ ○

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ ○

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ○ اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ ○
مَالِكِ يَوْمِ الدِّينِ ○ اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِينُ ○
اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ○ صِرَاطَ الَّذِينَ اَنْعَمْتَ
عَلَيْهِمْ غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ ○

इस्तिग़फ़ार की दुआ
(माफ़ी के लिए मिन्नत)

[बहुत सारी आयत-ए करीमात में ये मआनी हैः "**मुझे बारहा याद करो**" और **(इज़ा जाअ)** सूरह में, ये मकसद हैः **"माफ़ी के लिए मुझ से मिन्नत करो। मैं तुम्हारी दुआएँ कुबूल करूँगा; मैं तुम्हारे गुनाह माफ़ कर दूँगा।"** जैसे के देखा गया, अल्लाह तआला ने हमें उस से माफ़ी माँगने के लिए मिन्नत करने का हुकूम दिया। इस वास्ते, हज़रत मौहम्मद मासूम ने अपने 80वें खत की दूसरी जिल्द में कहाः इस हुकूम को मानते हुए, मैं हर नमाज़ के बाद तीन बार इस्तिग़फ़ार की दुआ पढ़ता हूँ और मैं 67 बार "**अस्तिग़फिरूल्लाह**" कहता हूँ। इस्तिग़फ़ार की दुआ है "**अस्तिग़फिरूल्लाह अज़ीम अल लज़ी ला इलाह इल्ला होवल हय्युल कय्युम व अतूबो अलैहि।**"

तुम भी इसे अकसर पढ़ा करो। एक शख़्स को इसके मआनी को दिमाग़ में रखना चाहिए इस तरह "**ऐ मेरे अल्लाह! मुझे माफ़ कर दे!**" इसे हर बार कहते हुए। ये एक शख़्स को जो इसे पढ़ रहा है और जो उसके आस पास हैं उन्हें परेशानियों और मुश्किलों से बचाता है। बहुत सारे लोग इसे पढ़ते हैं। इसके फ़ायदे हमेशा नज़र आते हैं।] [जब एक शख़्स बिस्तर पर जाए, तो वो कहे "या अल्लाह, या अल्लाह" और तीन बार "**अस्तिग़फिरूल्लाह मिन कुल्ली मा करिहल्लाह**" एक शख़्स जब तक पूरा सो न जाए इसे पढ़ता रहे।] शैख-उल-इस्लाम अहमद नामिकी जामी 536ह. [1142 ए.डी.] में रहलत फरमा गए। उन्होने अपनी किताब **(मिफ़ताह-उन-नजात)** में कहाः "अगर एक शख़्स तौबा करले और इस्तिग़फार पढ़ता रहे और उनकी हालतों को देखता रहे, तो हर सड़क जहाँ से वो गुज़रे, हर जगह जहाँ वो रहे उस पर फखर करे। चाँद, सूरज और सितारे उसके लिए दुआ करें। उसकी कबर जन्नत का बाग़ बन

जाए। वो जो एक असरदार तौबा हासिल न कर पाए हों, वो उनकी संगत में रहें जो ऐसा करते हैं। एक हदीस-ए शरीफ़ में बयान हैः **(सबसे ज़्यादा कीमती इबादत [इबादत का काम] औलिया से प्यार करना है [अल्लाह तआला के प्यारे बन्दे]) और दोबाराः "वो जो तौबा और इस्तिग़फार करता है उसके सारे गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।"** [तौबा दिल से की जाती है। इस्तिग़फ़ार इसको कह कर अदा किया जाता है।]

तौहीद की दुआ

या अल्लाह, या अल्लाह। ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर रसूलुल्लाह। या रहमान, या रहीम, या अफ़ुव्वु या करीम, फ़ अफ़व अन्नी वरहमनी या अरहमरराहिमीन! तवफ़्फ़ेनी मुसलिमन व अलहिकनी बिस्सालिहीन। अल्हुम्मअग़फिरली व लि-आबाई व उम्महाती व लि आबा-ए व उम्महात-ए ज़ोजती व लि-अजदादी व जददाती व लि-अबनाई व बनाती व लि-इख़्वती व एकहवाती व लि-अ मामी व अम्माती व लि अखवाली व हालती व लि-उसताज़ी अब्दुलहकीम-ए अरवासी व लि काफ़फतिल मो मिनीन वल-मोमिनात।" रहमतुल्लाहि तआला अलैहिम अजमईन।"

BOOKS PUBLISHED BY HAKIKAT KITABEVI

ENGLISH:

1- Endless Bliss I, 304pp.
2- Endless Bliss II, 400 pp.
3- Endless Bliss III, 336 pp.
4- Endless Bliss IV, 432 pp.
5- Endless Bliss V, 512 pp.
6- Endless Bliss VI,352 pp.
7- The Sunni Path, 112 pp.
8- Belief and Islam, 128 pp.
9- The Proof of Prophethood, 144 pp.
10- Answer to an Enemy of Islam, 128 pp.
11- Advice for the Muslim, 352 pp.
12- Islam and Christianity, 336 pp.
13- Could Not Answer, 432 pp.
14- Confessions of a British Spy, 128 pp.
15- Documents of the Right Word, 496 pp.
16- Why Did They Become Muslims?, 304 pp.
17- Ethics of Islam, 240 pp.
18- Sahaba 'The Blessed', 384 pp.
19- Islam's Reformers, 320 pp.
20- The Rising and the Hereafter, 112 pp.
21- Miftah-ul-janna, 288 pp.

DEUTSCH:

1- Islam, der Wee der Sunniten, 128 Seiten
2- Glaube und Islam, 128 Seiten
3- Islam und Christentum, 352 Seiten
4- Beweis des Prophetentums, 160 Seiten
5- Gestandnisse von einem Britischen Spion, 176 Seiten
6- Islamische Sitte, 288 Seiten

EN FRANCAIS:

1- L'slam et la Voie de Sunna, 112 pp.
2- Foi et Islam, 128 pp.
3- Islam et Christianisme, 304 pp.
4- L'evidence de la Prophetie, et les Temps de Prieres, 144 pp.
5- Ar-radd al Jamil, Ayyuha'l-Walad (Al-Ghazali), 96 pp.
6- Al-Munqid min ad'Dalal, (Al-Ghazali), 64 pp.

SHQIP:

1- Besimi dhe Islami, 96 fq.
2- Nibri Namazit, 208 fq.
3- Rrefimet e Agjentit Anglez,112 fq.

ESPANOL:

1- Creencia e Islam, 112

По руссКИ:

1- ВсеМ hYЖНаЯ Вера. (128) сТр.
2- npHSHdHHH AnrjiHftcKoro UlriHOHa, (144) CTp.
3- KnTa6-yc-CajiaT (MojiHTseHHHK) KHHra o HaMase, (224) ctd.
4- 4-OCbiH moh (256) crp.
5- PeJiHFfl McJiam (256) crp.

BOSHNJAKISHT:

1- Iman I Islama. (128) str.
2- Odgovor Neprijatelju Islam, (144) str.
3- Knjiga o Namazu, (192) str.
4- Nije Mogao Odgovoriti. (432) str.
5- Put Ehl-I Sunneta. (128) str.
6- Ispovijesti Jednog Engleskog Spijuna. (144) str.

اسماء الكتب **عدد صفحاتها**

اسماء الكتب	عدد صفحاتها
٢٢ – الحبل المتين ويليه العقود الدرية ويليهما هداية الموفقين	١٣٦
٢٣ – خلاصة الكلام في بيان امراء البلد الحرام ويليه ارشاد الحيارى في تحذير المسلمين من مدارس النصارى ويليهما نبذة من الفتاوى الحديثية	٢٨٨
٢٤ – التوسل بالنبي وبالصالحين ويليه التوسل لمحمد عبد القيوم القادري	٣٣٦
٢٥ – الدرر السنية في الرد على الوهابية ويليه نور اليقين في مبحث التلقين	٢٢٤
٢٦ – سبيل النجاة عن بدعة اهل الزيغ والضلال ويليه كف الرعاع عن المحرمات ويليهما الاعلام بقواطع الاسلام	٢٨٨
٢٧ – الانصاف ويليه عقد الجيد ويليهما مقياس القياس والمسائل المنتخبة	٢٤٠
٢٨ – المستند المعتمد بناء نجاة الابد	١٦٠
٢٩ – الاستاذ المودودي ويليه كشف الشبهة عن الجماعة التبليغية	١٤٤
٣٠ – كتاب الايمان (من رد المحتار)	٦٥٦
٣١ – الفقه على المذاهب الاربعة (الجزء الاول)	٣٥٢
٣٢ – الفقه على المذاهب الاربعة (الجزء الثاني)	٣٣٦
٣٣ – الفقه على المذاهب الاربعة (الجزء الثالث)	٣٨٤
٣٤ – الادلة القواطع على الزام العربية في التوابع ويليه فتاوى علماء الهند على منع الخطبة بغير العربية ويليهما الحظر والاباحة من الدر المختار	١٢٠
٣٥ – البريقة شرح الطريقة (الجزء الاول)	٦٠٨
٣٦ – البريقة شرح الطريقة ويليه منهل الواردين في مسائل الحيض	٣٣٦
٣٧ – البهجة السنية في آداب الطريقة ويليه ارغام المريد	٢٥٦
٣٨ – السعادة الابدية فيما جاء به النقشبندية ويليه الحديقة الندية ويليهما الرد على النصارى والرد على الوهابية	١٧٦
٣٩ – مفتاح الفلاح ويليه خطبة عيد الفطر ويليهما لزوم اتباع مذاهب الائمة	١٩٢
٤٠ – مفاتيح الجنان شرح شرعة الاسلام	٦٨٨
٤١ – الانوار المحمدية من المواهب اللدنية (الجزء الاول)	٤٤٨
٤٢ – حجة الله على العالمين في معجزات سيد المرسلين ويليه مسئلة التوسل	٢٨٨
٤٣ – اثبات النبوة ويليه الدولة المكية بالمادة الغيبية	١٢٨

اسماء الكتب العربية التي نشرها مكتبة الحقيقة

اسماء الكتب	عدد صفحاتها
١ – جزء عم من القرآن الكريم	٣٢
٢ – حاشية شيخ زاده على تفسير القاضي البيضاوى (الجزء الاول)	٦٠٤
٣ – حاشية شيخ زاده على تفسير القاضي البيضاوى (الجزء الثاني)	٤٦٢
٤ – حاشية شيخ زاده على تفسير القاضي البيضاوى، (الجزء الثالث)	٦٢٤
٥ – حاشية شيخ زاده على تفسير القاضي البيضاوى (الجزء الرابع)	٦٢٤
٦ – الايمان والاسلام ويليه السلفيون	١٢٨
٧ – نخبة اللآلي لشرح بدء الامالي	١٩٢
٨ – الحديقة الندية شرح الطريقة المحمدية (الجزء الاول)	٦٠٨
٩ – علماء المسلمين وجهلة الوهابيين ويليه شواهد الحق ويليهما العقائد النسفية ويليها تحقيق الرابطة	٢٢٤
١٠ – فتاوى الحرمين برجف ندوة المين ويليه الدرة المضيئة	١٢٨
١١ – هدية المهديين ويليه المتنبئ القادياني ويليهما الجماعة التبليغية	١٩٢
١٢ – المنقذ عن الضلال ويليه الجام العوام عن علم الكلام ويليهما تحفة الاريب ويليها نبذة من تفسير روح البيان	٢٥٦
١٣ – المنتخبات من المكتوبات للامام الرباني	٤٨٠
١٤ – مختصر (التحفة الاثني عشرية)	٣٥٢
١٥ – الناهية عن طعن امير المؤمنين معاوية ويليه الذب عن الصحابة ويليهما الاساليب البديعة ويليها الحجج القطعية ورسالة رد روافض	٢٨٨
١٦ – خلاصة التحقيق في بيان حكم التقليد والتلفيق ويليه الحديقة الندية	٥١٢
١٧ – المنحة الوهبية في رد الوهابية ويليه اشد الجهاد ويليهما الرد على محمود الآلوسي ويليها كشف النور	١٩٢
١٨ – البصائر لمنكري التوسل باهل المقابر ويليه غوث العباد	٤١٦
١٩ – فتنة الوهابية والصواعق الالهية وسيف الجبار والرد على سيد قطب	٢٥٦
٢٠ – تطهير الفؤاد ويليه شفاء السقام	٢٥٦
٢١ – الفجر الصادق في الرد على منكري التوسل والكرامات والخوارق ويليه ضياء الصدور ويليهما الرد على الوهابية	١٢٨